मेरा धर्म

गांधीजी

सम्पादक

भारतन् कुमारप्पा

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर

अहमदाबाद-१४

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाओ देसाओ
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद-१४

पहली आवृत्ति ५०००

८० पृ ००

नवम्बर, १९६०

सम्पादकका निवेदन

चूंकि गांधीजीका सारा जीवन अिसी प्रयत्नमें बीता कि वे अपने धर्मका यथाशक्ति अुत्तम रूपमें पालन करें, अिसलिअे अिस पुस्तकमें पाठकोंको गांधीजीके लेखों और भाषणोंके अैसे अंश देनेकी कोशिश की गमी है जिनसे गांधीजीके धर्मका लगभग संपूर्ण चित्र अुपस्थित हो जाय।

यह काम आसान नहीं रहा है। गांधीजीकी प्रवृत्तियोंका मूल स्रोत धर्म था अिस बातका अर्थ यह हो जाता है कि अपने सार्वजनिक जीवनके दौरानमें न सिर्फ धर्मके क्षेत्रमें बल्कि राजनीतिक आर्थिक और सामाजिक जीवनमें भी अुन्होंने जो कुछ कहा या किया अुस सबका समावेश अिस पुस्तकमें किया जा सकता है। अुनकी दृष्टिमें जो धर्म जीवनके प्रत्येक पहलूसे सम्बन्ध न रखे वह धर्म ही नहीं था। अैसी स्थितिमें अुनके धर्मका कोअी भी वर्णन पर्याप्त नहीं हो सकता यदि वह व्यक्तिगत या सामाजिक जीवनमें अुनके समूचे आचार-दर्शनको पेश नहीं करता।

अिस कारण हमें पुस्तकमें बहुत विस्तृत क्षेत्रका समावेश करना पड़ा है। साथ ही अिस पुस्तकका आकार छोटा रखनेके लिअे हमें सामग्री भी बड़ी सावधानीसे चुननी पड़ी है। और अुसे चुनते हुअे लगातार अिस बातका भी ध्यान रखना पड़ा है कि कोअी महत्त्वपूर्ण चीज छूट न जाय।

गांधीजी जन्मसे हिन्दू थे। परन्तु अुनका हिन्दुत्व अपने ढंगका निराला था। अुसकी जड़ें तो प्राचीन हिन्दू धर्ममें ही थीं और बहुत दृढ़ थीं परन्तु अुसका विकास हुआ दूसरे धर्मोंके, खासकर अीसाअी धर्मके सम्पर्कसे — जैसा कि अिस पुस्तकके दूसरे विभागसे मालूम होगा। वे सब धर्मस्रोतोंसे अमृत-पान करना चाहते थे और अिसलिअे वे महसूस करते थे कि सभी धर्म अुनके अपने ही हैं। फिर भी अगर अुनके धर्मका कोअी नाम रखना ही हो तो अिस नामको वे ज्यादा पसन्द करते थे और जो जन्म तथा

स्वभावसे अुनके लिअे अपना था वह है अुनके पूर्वजोंका धर्म — हिन्दू धर्म। अिस अिस धर्मसे अुनका सम्पर्क हुआ अुसीसे अुन्होंने सीखा। मगर अैसा करके वे न तो हिन्दू धर्मके प्रति अन्याय कर रहे थे और न अुसकी मौलिक शिक्षाओंसे दूर हट रहे थे। कारण, स्वयं हिन्दू धर्मकी अपने लम्बे अितिहासमें यह अेक विशेषता रही है कि अुसके रास्तेमें जो भी नया तत्त्व आया है अुसे या तो अुसने पचा लिया है या अपनी शिक्षाके साथ अुसका समन्वय कर डाला है। किसी पंथ या संस्थापकसे बंधा हुआ न होनेके कारण हिन्दू धर्म सीखने बढ़ने और विकास करनेमें स्वतंत्र था। गांधीजी हिन्दू धर्मकी अिस तत्परताके तत्त्वके अेक ज्वलंत अुदाहरण हैं। अिसी तत्त्वने हिन्दूत्वको सदा ताजा, सजीव और निरंतर विकासशील रखा है। यह कहा जाय तो सचमुच कोअी अत्युक्ति नहीं होगी कि अिस रूपमें हिन्दू धर्मकी आत्मा ही गांधीजीमें प्रगट हुअी थी।

प्राचीन कालमें हिन्दू धर्मने, अपनी संतान बौद्ध धर्मके साथ, तत्कालीन सभ्य संसारके भारतसे लगाकर चीन-जापान तक सभी ज्ञात देशों पर प्रभाव डाला था। अिस समय गांधीजीके द्वारा हिन्दू धर्मका पुनर्जन्म हो रहा है और सभी राष्ट्र आदरके साथ भारतके शान्ति और अहिंसाके सन्देशको सुनते हैं। अिसमें शंका नहीं कि अगर गांधीजीका काम अिस भूमिके अेक सिरेसे दूसरे सिरे तक फैल जाय तो दुनियाकी मानव-जातिके सिर पर महानाशकी छायाकी भांति मंडरा रहे भौतिकवाद, क्षोभ और संघर्षके खतरेसे बचानेमें भारत आज भी बहुत कुछ कर सकता है।

किन्तु गांधीजीका सन्देश भारतके लिअे ही नहीं, बल्कि सारे संसारके लिअे है। जैसा अुन्होंने खुद कहा था वे केवल हिन्दू धर्मको ही नहीं बल्कि सब धर्मोंकी भावनाको पुनर्जीवित करना चाहते थे। अुनकी रायमें यह भावना है जीवमात्रके प्रेमके रूपमें प्रगट होनेवाला अीश्वर-प्रेम। अिसलिअे अुनकी पुकार यह नहीं है कि दूसरे लोग हिन्दू बन जायं, वे तो कहते हैं कि अीसाअी बौद्ध मुसलमान और दूसरे सब अपने अपने धर्मकी शिक्षाओं पर अमल करें। अुनका विश्वास था कि केवल अिसी प्रकार मनुष्य अपने समस्त मानव-बन्धुओंके साथ शान्तिपूर्वक रह सकता है और अेक-दूसरेका कल्याण-साधन कर सकता है। अिसलिअे अिस पुस्तकमें

अध्ययनसे हिन्दू और गैर-हिन्दू दोनोंको अच्छा जीवन व्यतीत करनेकी प्रेरणा और मार्गदर्शन मिलना चाहिये।

स्थानकी मर्यादाके कारण हम गांधीजीके सामाजिक सवालोंसे सम्बन्धित विचारोंकी रूपरेखा-मात्र ही दे सकते हैं। जिन्हें अधिक पूरी तफसील चाहिये वे नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद–१४ द्वारा प्रकाशित अन्य पुस्तकोंका आश्रय ले सकते हैं अुदाहरणके लिअे सर्वोदय , अहिंसक समाजवादकी ओर स्त्रियां और अुनकी समस्यायें हरिजनसेवकोंके लिअे ' आदि।

अिस पुस्तकमें सामग्रीका क्रम-विभाजन हमारा अपना है तथा विभागों और लेखोंके शीर्षक भी हमारे ही दिये हुअे हैं।

मूल अंग्रेजीसे हिन्दी अनुवाद श्री रामनारायण चौधरीने किया है।

भारतन् कुमारप्पा

अनुक्रमणिका

चौथा विभाग मेरी अीश्वर-निष्ठा

पांचवां विभाग मेरे धर्मका व्यावहारिक रूप

छठा विभाग मेरे धर्म-पालनके सहायक साधन

सातवां विभाग: मेरे धर्मके लक्षण

आठवां विभाग: मेरा हिन्दू धर्म

अपने स्वरूपका पता नहीं लग जाता सर्जनहारका ज्ञान नहीं हो जाता तथा स्रष्टाके और अपने बीचका सच्चा सम्बन्ध समझमें नहीं आ जाता।

यंग अिंडिया १२–५–'२०, पृ० २

मनुष्य धर्मके बिना नहीं जी सकता। कुछ लोग अपनी बुद्धिके घमण्डमें कह देते हैं कि अुन्हें धर्मसे कोअी वास्ता नहीं। परन्तु यह वैसी ही बात है जैसे कोअी मनुष्य यह कहे कि वह सांस तो लेता है, परन्तु अुसके नाक नहीं है। बुद्धिसे हो सहज बोधसे हो या अंधविश्वाससे हो, मनुष्य अीश्वरके साथ अपना कुछ न कुछ सम्बन्ध मानता ही है। कट्टरसे कट्टर अज्ञेयवादी या नास्तिक भी किसी नैतिक सिद्धान्तकी आवश्यकता अवश्य स्वीकार करता है और अुसके पालनमें कुछ न कुछ भलाअी तथा अुसके अपालनमें कुछ न कुछ बुराअी समझता है। बैडलाकी नास्तिकता मशहूर है, परन्तु वह अपने अन्तरतमके विश्वासकी घोषणा करनेका सदा आग्रह रखता था। अुसे अिस प्रकार सत्य कहनेके कारण काफी कष्ट सहने पड़े परन्तु अिसमें अुसे आनन्द आता था और वह कहता था कि सत्य स्वयं ही अपना पुरस्कार है। यह बात नहीं कि सत्य-पालनसे मिलनेवाले अिस आनन्दका अुसे कोअी ज्ञान नहीं था। परन्तु यह आनन्द सांसारिक बिलकुल नहीं है, यह तो दैवी सत्ताके साथ सम्बन्ध जुड़नेसे पैदा होता है। अिसीलिअे मैंने कहा है कि जो मनुष्य धर्मको नहीं मानता वह भी धर्मके बिना नहीं रह सकता और नहीं रहता।

यंग अिंडिया, २३–१–'३०, पृ० २५

२

नैतिकताका केन्द्रीय स्थान

मैं किसी अैसे धार्मिक सिद्धान्तको स्वीकार नहीं करता, जो बुद्धिको न रुचे और नैतिकताके विरुद्ध हो। धार्मिक भाव अनैतिक न हो तो बुद्धि संगत न होने पर भी मैं अुसे सहन कर लेता हूं।

यंग अिंडिया, २१-७-२० पृ० ४

ज्यों ही हम नैतिक आधारको खो देते हैं, त्यों ही हम धार्मिक नहीं रह जाते। नैतिकताका अुल्लंघन करनेवाले धर्मके जैसी कोअी चीज नहीं है। अुदाहरणके लिअे मनुष्य झूठा निर्दय और असंयमी होते हुअे यह दावा नहीं कर सकता कि अीश्वर अुसके साथ है।

यंग अिंडिया २४-११-२१, पृ० ३८५

जो धर्म व्यावहारिक बातों पर ध्यान नहीं देता और अुन्हें हल करनेमें मदद नहीं करता वह धर्म नहीं है।

यंग अिंडिया ७-५-'२५, पृ० १६४

धार्मिक मनुष्यके प्रत्येक कर्मका स्रोत अुसका धर्म होता है क्योंकि धर्मका अर्थ है अीश्वरके साथ बन्धन। कहनेका मतलब यह है कि हमारी हरअेक सांसका नियंत्रण अीश्वर करता है।

हरिजन २-३-३४ पृ० २३

दूसरा विभाग : मेरे धर्मके स्रोत

३

घरमें

मेरे पिता कुटुम्ब-प्रेमी सत्यप्रिय शूर, अुदार, किन्तु क्रोधी थे। धार्मिक शिक्षा अनकी नहींके बराबर थी, पर मन्दिरोंमें जानेसे और कथा वगैरा सुननेसे जो धर्मज्ञान असंख्य हिन्दुओंको सहज भावसे मिलता रहता है वह अुनमें था। आखिरके सालमें अेक विद्वान ब्राह्मणकी सलाहसे, जो परिवारके मित्र थे अुन्होंने गीतापाठ शुरू किया था और रोज पूजाके समय वे थोड़े-बहुत श्लोक अूंचे स्वरसे पाठ किया करते थे।

मेरे मन पर यह छाप पड़ी है कि मेरी माता साध्वी स्त्री थीं। वे बहुत श्रद्धालु थीं। बिना पूजा-पाठके कभी भोजन न करतीं। हमेशा हवेली (वैष्णव-मंदिर) जातीं। जबसे मैंने होश संभाला तबसे मुझे याद नहीं पड़ता कि अुन्होंने कभी चातुर्मासका व्रत छोड़ा हो। वे कठिन-से-कठिन व्रत शुरू करतीं और अुन्हें निर्विघ्न पूरा करतीं। लिये हुअे व्रतोंको बीमार होने पर भी कभी न छोड़तीं। अैसे अेक समयकी मुझे याद है कि जब अुन्होंने चान्द्रायणका व्रत लिया था। व्रतके दिनोंमें वे बीमार पड़ीं पर व्रत नहीं छोड़ा। चातुर्मासमें अेक बार खाना तो अुनके लिये सामान्य बात थी। अितनेसे संतोष न करके अेक चौमासेमें अुन्होंने तीसरे दिन भोजन करनेका व्रत लिया था। लगातार दो-तीन अुपवास तो अुनके लिये मामूली बात थी। अेक चातुर्मासमें अुन्होंने यह व्रत लिया था कि सूर्य नारायणके दर्शन करके ही भोजन करेंगी। अुस चौमासेमें हम बालक बादलोंकि सामने देखा करते कि कब सूरजके दर्शन हों और कब माँ भोजन करें। यह तो सब जानते हैं कि चौमासेमें अकसर सूर्यके दर्शन दुर्लभ हो जाते हैं। मुझे अैसे दिन याद हैं कि जब हम सूरजको देखते और कहते "माँ—माँ सूरज दीखा" और माँ अुतावली होकर आतीं।

भितनेमें सूरज छिप जाता और माँ यह कहती हुआी लौट जातीं कि "कोमी बात नहीं आज भाग्यमें भोजन नहीं है", और अपने काममें डूब जातीं।

आत्मकथा पृ० १–२ १९५७

४

पाठशालामें

छह या सात सालसे लेकर सोलह सालकी अुमर तक मैंने पढ़ाओी की, पर स्कूलमें कहीं भी मुझे धर्मकी शिक्षा नहीं मिली। यों कह सकते हैं कि शिक्षकोंसे जो आसानीसे मिलना चाहिये था वह नहीं मिला। फिर भी वातावरणसे कुछ-न-कुछ तो मिलता ही रहा। यहां धर्मका अुदार अर्थ करना चाहिये। धर्मका अर्थ है आत्मबोध आत्मज्ञान।

मैं वैष्णव सम्प्रदायमें जन्मा था, भिसलिओ हवेलीमें जानेके प्रसंग बार-बार आते थे। पर अुसके प्रति श्रद्धा अुत्पन्न नहीं हुआी। हवेलीका वैभव मुझे अच्छा नहीं लगा। हवेलीमें चलनेवाली अनीतिकी बातें सुनकर मन अुसके प्रति अुदासीन बन गया। वहांसे मुझे कुछ भी न मिला।

पर जो हवेलीसे न मिला, वह मुझे अपनी धाय रम्भासे मिला। रम्भा हमारे परिवारकी पुरानी नौकरानी थी। अुसका प्रेम मुझे आज भी याद है। मैं अूपर कह चुका हूं कि मुझे भूत-प्रेत आदिका डर लगता था। रम्भाने मुझे समझाया कि भिसकी दवा रामनाम है। मुझे तो राम नामसे भी अधिक श्रद्धा रम्भा पर थी भिसलिओ बचपनमें भूत प्रेतादिके भयसे बचनेके लिओ मैंने रामनाम जपना शुरू किया। यह जप बहुत समय तक नहीं चला। पर बचपनमें जो बीज बोया गया वह नष्ट नहीं हुआ। आज रामनाम मेरे लिओ अमोघ शक्ति है। मैं मानता हूं कि अुसके मूलमें रम्भाबाओीका बोया हुआ बीज है।

पर जिस चीजका मेरे मन पर गहरा असर पड़ा वह था रामायणका पारायण। पिताजीकी बीमारीका थोड़ा समय पोरबन्दरमें बीता

था। वहां मैं रामजीके मन्दिरमें रोज रातके समय रामायण सुनते थे। सुनानेवाले रामचन्द्रजीके परम भक्त थे। अुनका कण्ठ मीठा था। वे दोहा चौपाअी गाते थे और अर्थ समझाते थे। स्वयं अुसके रसमें लीन हो जाते थे और श्रोताजनोंको भी लीन कर देते थे। अुस समय मेरी अुमर तेरह सालकी रही होगी, पर याद पड़ता है कि अुनके पाठमें मुझे खूब रस आता था। यह रामायण-श्रवण रामायणके प्रति मेरे अत्यधिक प्रेमकी बुनियाद है। आज मैं तुलसीदासकी रामायणको भक्तिमार्गका सर्वोत्तम ग्रन्थ मानता हूं।

कुछ महीनोंके बाद हम राजकोट आये। वहां रामायणका पाठ नहीं होता था। अेकादशीके दिन भागवत जरूर पढ़ी जाती थी। मैं कभी-कभी अुसे सुनने बैठता था। पर भट्टजी रस अुत्पन्न नहीं कर सके। आज मैं यह देख सकता हूं कि भागवत अेक अैसा ग्रन्थ है, जिसके पाठसे धर्मरस अुत्पन्न किया जा सकता है। मैंने तो अुसे गुजरातीमें बड़े चावसे पढ़ा है। लेकिन अिक्कीस दिनके अपने अुपवास-कालमें भारत-भूषण पंडित मदनमोहन मालवीयजीके शुभ मुखसे मूल संस्कृतके कुछ अंश जब सुने तो खयाल हुआ कि बचपनमें अुनके समान भगवद्-भक्तके मुंहसे भागवत सुनी होती तो अुस पर अुसी अुमरमें मेरा गाढ़ प्रेम हो जाता। बचपनमें पड़े हुअे शुभ-अशुभ संस्कार बहुत गहरी जड़ें जमाते हैं, अिसे मैं खूब अनुभव करता हूं, और अिस कारण अुस अुमरमें मुझे कअी अुत्तम ग्रंथ सुननेका लाभ नहीं मिला यह अब अखरता है।

राजकोटमें मुझे अनायास ही सब सम्प्रदायोंके प्रति समान भाव रखनेकी शिक्षा मिली। मैंने हिन्दू धर्मके प्रत्येक सम्प्रदायका आदर करना सीखा क्योंकि माता-पिता वैष्णव-मन्दिरमें, शिवालयमें और राम मन्दिरमें भी जाते और हम भाअियोंको भी साथ ले जाते या भेजते थे।

अिसके सिवा, पिताजीके पास जैन धर्माचार्योंमें से भी कोअी न कोअी हमेशा आते रहते थे। पिताजी अुन्हें भिक्षा भी देते थे। वे पिताजीके साथ धर्म और व्यवहारकी बातें किया करते थे। अिसके सिवा, पिताजीके मुसलमान और पारसी मित्र भी थे। वे अपने-अपने धर्मकी चर्चा करते और पिताजी अुनकी बातें सम्मानपूर्वक और अकसर रसपूर्वक सुना करते

थे। मर्द' होनेके कारण अैसी चर्चाके समय मैं अकसर हाजिर रहता था। अिस सारे वातावरणका प्रभाव मुझ पर यह पड़ा कि मुझमें सब धर्मोंके लिअे समान भाव पैदा हो गया।

अेक औसाअी धर्म अपवादरूप था। अुसके प्रति मुझे कुछ अरुचि थी। अुन दिनों कुछ औसाअी हाअीस्कूलके कोने पर खड़े होकर व्याख्यान दिया करते थे। वे हिन्दू देवताओंकी और हिन्दू धर्मको माननेवालोंकी बुराअी करते थे। मुझे यह असह्य मालूम हुआ। मैं अेकाध बार ही व्याख्यान सुननेके लिअे खड़ा रहा हूँगा। दूसरी बार फिर वहाँ खड़े रहनेकी अिच्छा ही न हुअी। अुन्हीं दिनों अेक प्रसिद्ध हिन्दूके औसाअी बननेकी बात सुनी। गांवमें चर्चा थी कि अुन्हें औसाअी धर्मकी दीक्षा देते समय मांस खिलाया गया और शराब पिलायी गअी। अुनकी पोशाक भी बदल दी गअी और औसाअी बननेके बाद वे कोट-पतलून और अंग्रेजी टोप पहनने लगे। अिन बातोंसे मुझे पीड़ा पहुंची। जिस धर्मके कारण गोमांस खाना पड़े, शराब पीनी पड़े और अपनी पोशाक बदलनी पड़े, अुसे धर्म कैसे कहा जाय? मेरे मनने यह दलील की। फिर यह भी सुननेमें आया कि जो भाअी औसाअी बने थे अुन्होंने अपने पूर्वजोंके धर्मकी रीति-रिवाजोंकी और देशकी निन्दा करना शुरू कर दिया था। अिन सब बातोंसे मेरे मनमें औसाअी धर्मके प्रति अरुचि अुत्पन्न हो गअी।

अिस तरह यद्यपि दूसरे धर्मोंके प्रति मनमें समभाव जागा फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि मुझमें अीश्वरके प्रति आस्था थी।

पर अेक चीजने मनमें जड़ जमा ली — यह संसार नीति पर टिका हुआ है। नीतिमात्रका समावेश सत्यमें होता है। सत्यको तो खोजना ही होगा। दिन-पर-दिन सत्यकी महिमा मेरे निकट बढ़ती गयी। सत्यकी व्याख्या विस्तृत होती गअी और अभी भी हो रही है।

अिसके सिवा नीतिका अेक छप्पय दिलमें बस गया। अपकारका बदला अपकार नहीं अुपकार ही हो सकता है यह अेक जीवन-सूत्र ही बन गया। अुसने मुझ पर साम्राज्य चलाना शुरू किया। अपकारीका भला चाहना और करना, अिसका मैं अनुरागी बन गया। अिसके अनगिनत प्रयोग मैंने किये। यह चमत्कारी छप्पय यह है

वस्तुका सेवन करना कर्तव्य-रूप नहीं है। मेरी सलाह है कि आप बाबिबल पढ़ें।" मने अुनकी यह सलाह मान ली। अुन्होंने बाअिबल खरीद कर दी। मने अुसे पढ़ना शुरू किया पर मैं पुराना अिकरार (ओल्ड टस्टामेण्ट) पढ़ ही न सका। 'जेनेसिस' —सृष्टि रचना— के प्रकरणके बाद तो पढ़ते समय मुझे नींद ही आ जाती थी। मुझे याद है कि 'मैंने बाअिबल पढ़ी है' यह कह सकनेके लिअे मने बिना रसके और बिना समझे दूसरे प्रकरण बहुत कष्टपूर्वक पढ़े थे। 'नम्बर्स' नामक प्रकरण पढ़ते-पढ़ते मेरा जी अुचट गया था।

पर जब नये अिकरार (न्यू टेस्टामेण्ट) पर आया, तो कुछ और ही असर हुआ। अीसाके 'गिरि-प्रवचन' का मुझ पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। अुसे मैंने हृदयमें बसा लिया। बुद्धिने गीताजीके साथ अुसकी तुलना की। 'जो तुझसे कुर्ता मांगे अुसे तू अंगरखा भी दे दे, जो तेरे दाहिने गाल पर तमाचा मारे, तू बायां गाल भी अुसके सामने कर दे' — यह पढ़कर मुझे अपार आनन्द हुआ। शामल भट्टके छप्पयकी याद आ गयी। मेरे बालमनने गीता, आर्नल्ड कृत बुद्ध-चरित्र और अीसाके वचनोंका अेकीकरण किया। मनको यह बात जँच गयी कि त्यागमें ही धर्म है।

अिस वाचनसे दूसरे धर्माचार्योंकी जीवनियां पढ़नेकी अिच्छा हुआी। किसी मित्रने कार्लािअलकी 'विभूतियां और विभूति-पूजा' (हीरोज़ अेण्ड हीरो-वर्शिप) पढ़नेकी सलाह दी। अुसमें से मैंने पैगम्बर (हजरत मुहम्मद) का प्रकरण पढ़ा और मुझे अुनकी महानता, वीरता और तपश्चर्याका पता चला।

मैं धर्मके अिस परिचयसे आगे न बढ़ सका। अपनी परीक्षाकी पुस्तकोंके अलावा दूसरा कुछ पढ़नेकी फुरसत मैं नहीं निकाल सका। पर मेरे मनने यह निश्चय किया कि मुझे धर्म-पुस्तकें पढ़नी चाहियें और सब मुख्य धर्मोंका परिचय प्राप्त कर लेना चाहिये।

नास्तिकताके बारेमें भी कुछ जाने बिना काम कैसे चलता? ब्रडलाका नाम तो सब हिन्दुस्तानी जानते ही थे। ब्रैडला नास्तिक माने जाते थे। अिसलिअे अुनके सम्बन्धकी अेक पुस्तक पढ़ी। नाम मुझे याद

नहीं रहा। मुझ पर मुसका कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा। मैं नास्तिकता रूपी सहारेके रेगिस्तानको पार कर गया।

आत्मकथा पृ० ५८–६० १९५७

६

रायचन्दभाभी

रायचन्दभाभी हजारोंका व्यापार करते हीरे-मोतीकी परख करते व्यापारकी समस्यायें सुलझाते पर यह सब अुनका विषय नहीं था। अुनका विषय — अुनका पुरुषार्थ तो था आत्म-परिचय — हरि-दर्शन। अुनकी गद्दी पर दूसरी कोओी चीज हो चाहे न हो पर कोओी-न-कोओी धर्म पुस्तक और डायरी तो अवश्य रहती थी। व्यापारकी बात समाप्त होते ही धर्म-पुस्तक खुलती अथवा अुनकी डायरी खुलती थी। अुनके लेखोंका जो संग्रह प्रकाशित हुआ है अुसका अधिकांश अिस डायरीसे लिया गया है। जो मनुष्य लाखोंके लेन-देनकी बात करके तुरन्त ही आत्मज्ञानकी गूढ़ बातें लिखने बैठ जाये अुसकी जाति व्यापारीकी नहीं बल्कि शुद्ध ज्ञानीकी है। अुनका अैसा अनुभव मुझे अेक बार नहीं कभी बार हुआ था। मैंने कभी अुन्हें मूर्च्छाकी स्थितिमें नहीं पाया। मेरे साथ अुनका कोओी स्वार्थ नहीं था। मैं अुनके बहुत निकट सम्पर्कमें रहा हूं। अुस समय मैं अेक भिखारी बारिस्टर था। पर जब भी मैं अुनकी दुकान पर पहुंचता वे मेरे साथ धर्मचर्चाके सिवा दूसरी कोओी बात ही न करते थे। यद्यपि अुस समय मैं अपनी दिशा स्पष्ट नहीं कर पाया था यह भी नहीं कह सकता कि साधारणतः मुझे धर्मचर्चामें रस था फिर भी रायचन्दभाओीकी धर्मचर्चा मैं रुचिपूर्वक सुनता था। अुसके बाद मैं अनेक धर्माचार्योंके सम्पर्कमें आया हूं। मैंने हरअेक धर्मके आचार्योंसे मिलनेका प्रयत्न किया है। पर मुझ पर जो छाप रायचन्दभाओीने डाली वैसी दूसरा कोओी न डाल सका। अुनके बहुतेरे वचन मेरे हृदयमें सीधे अुतर जाते थे। मैं अुनकी बुद्धिका सम्मान करता था। अुनकी

प्रामाणिकताके लिये भी मेरे मनमें अुतना ही आदर था। अिसलिये मैं जानता था कि वे मुझे जान-बूझकर गलत रास्ते नहीं ले जायेंगे और जो अुनके मनमें होगा वही कहेंगे। अिस कारण अपने आध्यात्मिक संकटके समयमें मैं अुनका आश्रय लिया करता था।

रायचन्दभाअीके प्रति अितना आदर रखते हुअे भी अुन्हें मैं अपने धर्मगुरुके रूपमें हृदयमें स्थान न दे सका। मेरी वह खोज तो आज भी चल रही है।

मेरे जीवन पर गहरा प्रभाव डालनेवाले आधुनिक मनुष्य तीन हैं रायचन्दभाअीने अपने सजीव सम्पर्कसे टॉल्स्टॉयने 'वैकुण्ठ तेरे हृदयमें है' नामक अपनी पुस्तकसे और रस्किनने 'अन्टु दिस लास्ट — सर्वोदय — नामक पुस्तकसे मुझे चकित कर दिया।

आत्मकथा पृ० ७५–७६, १९५७

७

दक्षिण अफ्रीकामें

मेरे भविष्यके बारेमें मि० बेकरकी चिन्ता बढ़ती जा रही थी। वे मुझे वेलिंग्टन कन्वेन्शनमें ले गये। प्रोटेस्टेण्ट अीसाअियोंमें कुछ वर्षोंके अन्तरसे धर्म-जागृति अर्थात् आत्मशुद्धिके लिये विशेष प्रयत्न किये जाते हैं। अिसे धर्मकी पुनःप्रतिष्ठा अथवा धर्मके पुनरुद्धारका नाम दे सकते हैं। अैसा अेक सम्मेलन वेलिंग्टनमें था। मि० बेकरको यह आशा थी कि अिस सम्मेलनमें होनेवाली जागृति, वहां आनेवाले लोगोंके धार्मिक अुत्साह और अुनकी शुद्धताकी मेरे हृदय पर अैसी गहरी छाप पड़ेगी कि मैं अीसाअी बने बिना न रह सकूंगा।

सम्मेलनमें श्रद्धालु अीसाअियोंका मिलाप हुआ। अुनकी श्रद्धाको देखकर मैं प्रसन्न हुआ। मैंने देखा कि कअी लोग मेरे लिये प्रार्थना कर रहे हैं। अुनके कअी भजन मुझे बहुत मीठे मालूम हुअे।

सम्मेलन तीन दिन चला। मैं सम्मेलनमें आनेवालोंकी धार्मिकताको समझ सका अुसकी सराहना कर सका। पर मुझे अपने विश्वासमें —

अपने धर्ममें — परिवर्तन करनेका कारण न मिला। मुझे यह प्रतीति न हुओ कि ओसाओ बनकर ही मैं स्वर्ग जा सकता हूं अथवा मोक्ष पा सकता हूं। जब यह बात मने अपने भले ओसाओ मित्रोंसे कही तब अुनको चोट तो पहुंची परन्तु मैं लाचार था।

मेरी कठिनाअियां गहरी थीं। 'अेक ओसामसीह ही ओश्वरके पुत्र हैं। अुन्हें जो मानता है वह तर जाता है' — यह बात मेरे गले अुतरती न थी। यदि ओश्वरके पुत्र हो सकते हैं तो हम सब अुसके पुत्र हैं। यदि ओसा ओश्वर-तुल्य हैं ओश्वर ही हैं तो मनुष्य-मात्र ओश्वरके समान है ओश्वर बन सकता है। ओसाकी मृत्युसे और अुनके रक्तसे संसारके पाप धुलते हैं अिसे अक्षरशः सच माननेके लिअे बुद्धि तैयार नहीं होती थी। रूपकके नाते चाहे अुसमें सत्य हो। अिसके अतिरिक्त ओसाअियोंका यह विश्वास है कि मनुष्यके ही आत्मा है, दूसरे जीवोंके नहीं और देहके नाशके साथ अुसका संपूर्ण नाश हो जाता है, जब कि मेरा विश्वास अिसके विरुद्ध था। मैं ओसाको अेक त्यागी महात्मा दैवी शिक्षकके रूपमें स्वीकार कर सकता था पर अुन्हें अद्वितीय पुरुषके रूपमें स्वीकार करना मेरे लिअे संभव न था। ओसाकी मृत्युसे संसारको अेक महान अुदाहरण प्राप्त हुआ। पर अुनकी मृत्युमें कोओी गूढ़ चमत्कारपूर्ण प्रभाव था अिसे मेरा हृदय स्वीकार नहीं कर सकता था। ओसाअियोंके पवित्र जीवनमें मुझे अैसी कोओी चीज नहीं मिली जो अन्य धर्मावलम्बियोंके जीवनमें न मिली हो। अुनमें होनेवाले परिवर्तनों जैसे ही परिवर्तन मैंने दूसरोंके जीवनमें भी होते देखे थे। सिद्धान्तकी दृष्टिसे ओसाओी सिद्धान्तोंमें मुझे कोओी अलौकिकता नहीं दिखाओी पड़ी। त्यागकी दृष्टिसे हिन्दू धर्मावलम्बियोंका त्याग मुझे अधिक अूंचा मालूम हुआ। मैं ओसाओी धर्मको सम्पूर्ण अथवा सर्वोपरि धर्मके रूपमें स्वीकार न कर सका।

अपना यह हृदय-मंथन मैंने अवसर आने पर ओसाओी मित्रोंके सामने रखा। अुसका कोओी संतोषजनक अुत्तर वे मुझे नहीं दे सके।

पर जिस तरह मैं ओसाओी धर्मको स्वीकार न कर सका अुसी तरह हिन्दू धर्मकी संपूर्णताके विषयमें अथवा अुसकी सर्वोपरिताके विषयमें

हिन्दू धर्मकी छाया और अुसका प्रभाव तो काफी है ही। अतअेव मित्र भाभियोंने मान लिया कि मैं अुनकी सहायता कर सकूंगा। मैंने अुन्हें समझाया कि संस्कृतका मेरा अध्ययन नहींके बराबर है। मने अुसके प्राचीन धर्मग्रंथ संस्कृतमें नहीं पढ़े हैं। अनुवादोंके द्वारा भी मेरी पढ़ाओी कम ही हुअी है। फिर भी चूंकि वे संस्कार और पुनर्जन्मको मानते थे, अिसलिअे अुन्होंने समझा कि मुझसे थोड़ी-बहुत सहायता तो मिलेगी ही और मैं निरस्तपादपे देशे अेरण्डोऽपि द्रुमायते * जैसी स्थितिमें आ पड़ा। किसीके साथ मैंने स्वामी विवेकानन्दका तो किसीके साथ मणिलाल नभुभाभीका 'राजयोग' पढ़ना शुरू किया। अेक मित्रके साथ 'पातंजल-योगदर्शन' पढ़ना पड़ा। बहुतोंके साथ गीताका अभ्यास शुरू हुआ। 'जिज्ञासु-मण्डल' के नामसे अेक छोटासा मण्डल भी स्थापित किया और नियमित अभ्यास होने लगा। गीताजी पर मुझे प्रेम और श्रद्धा तो थी ही। अब अुसकी गहराओीमें अुतरनेकी आवश्यकता प्रतीत हुअी। मेरे पास अेक-दो अनुवाद थे। अुनकी सहायतासे मैंने मूल संस्कृत समझ लेनेका प्रयत्न किया, और नित्य अेक-दो श्लोक कण्ठ करनेका निश्चय किया।

सुबह दातुन और स्नानके समयका अुपयोग मैंने गीताके श्लोक कण्ठ करनेमें किया। दातुनमें पन्द्रह और स्नानमें बीस मिनट लगते थे। दातुन अंग्रेजी ढंगसे मैं खड़े-खड़े करता था। सामनेकी दीवार पर गीताके श्लोक लिखकर चिपका देता था और आवश्यकताके अनुसार अुन्हें देखता तथा घोखता जाता था। ये घोखे हुअे श्लोक स्नान करने तक पक्के हो जाते थे। अिस बीच पिछले कण्ठ किये हुअे श्लोकोंको भी मैं अेक बार दोहराता जाता था। अिस प्रकार तेरह अध्याय तक कण्ठ करनेकी बात मुझे याद है।

अिस गीतापाठका प्रभाव मेरे सहाध्यायियों पर क्या पड़ा सो मैं न जानूं परन्तु मेरे लिअे तो वह पुस्तक आचारकी अेक प्रौढ़ मार्गदर्शिका बन गयी। वह मेरे लिअे धार्मिक कोषका काम देने लगी। जिस प्रकार नये अंग्रेजी शब्दोंके हिज्जों या अुनके अर्थके लिअे मैं अंग्रेजी शब्दकोश

---

* जहां कोअी वृक्ष न हो वहां अेरंड ही वृक्ष बन जाता है।

देखता था। मुसी प्रकार आचार-सम्बन्धी कठिनाअियों और मुसकी झटपटी समस्याओंको गीताजीसे हल करता था। मुसके अपरिग्रह, समभाव आदि शब्दोंने मुझे पकड़ लिया। समभावका विकास कैसे हो, मुसकी रक्षा किस प्रकार की जाय? अपमान करनेवाले अधिकारी, रिश्वत लेनेवाले अधिकारी, व्यर्थ विरोध करनेवाले कलके साथी अित्यादि और जिन्होंने बड़े-बड़े अुपकार किये हैं अैसे सज्जनोंके बीच भेद न करनेका क्या अर्थ है? अपरिग्रह किस प्रकार पाला जाता होगा? देहका होना ही कौन कम परिग्रह है? स्त्री-पुत्रादि परिग्रह नहीं तो और क्या हैं? ढेरों पुस्तकोंसे भरी अिन आलमारियोंको क्या जला डालूं? घरको जलाकर तीर्थ करने जाअूं? तुरन्त ही अुत्तर मिला कि घर जलाये बिना तीर्थ किया ही नहीं जा सकता। यहां अंग्रेजी कानूनने मेरी मदद की। स्नेलकी कानूनी सिद्धान्तोंकी चर्चा याद आयी। गीताजीके अध्ययनके फलस्वरूप 'ट्रस्टी' शब्दका अर्थ विशेष रूपसे समझमें आया। कानून-शास्त्रके प्रति मेरा आदर बढ़ा। मुझे अुसमें भी धर्मके दर्शन हुअे। ट्रस्टीके पास करोड़ों रुपये रहते हुअे भी अुनमेंकी अेक भी पाअी अुसकी नहीं होती। मुमुक्षुको अैसा ही बरताव करना चाहिये, यह बात मैंने गीताजीसे समझी। मुझे यह दीपककी तरह स्पष्ट दिखायी दिया कि अपरिग्रही बननेमें, समभावी होनेमें हेतुका, हृदयका परिवर्तन आवश्यक है। मैंने रेवाशंकरभाअीको अिस आशयका पत्र लिख भेजा कि मेरे बीमेकी पॉलिसी बन्द कर दें। कुछ रकम वापस मिले तो ले लें, न मिले तो भरे हुअे पैसोंको गया समझ लें। बच्चोंकी और स्त्रीकी रक्षा अुन्हें और हमें पैदा करनेवाला करेगा। पितृतुल्य भाअीको लिखा, आज तक तो मेरे पास जो बचा वह मैंने आपको अर्पण किया। अब मेरी आशा आप छोड़ दीजिये। अब जो बचेगा सो यहीं हिन्दुस्तानी समाजके हितमें खर्च होगा।"

आत्मकथा पृ० २२७–२८ १९५७

मैं नेटालके लिअे रवाना हुआ। पोलाक तो मेरी सब बातें जानने लगे ही थे। वे मुझे छोड़ने स्टेशन तक आये और यह कहकर कि यह पुस्तक पढ़ने योग्य है, अिसे पढ़ जाअिये, आपको पसन्द आयेगी। अुन्होंने रस्किनकी 'अण्टु दिस लास्ट' पुस्तक मेरे हाथमें रख दी।

मुझ पुस्तकको हाथमें लेनेके बाद मैं छोड़ ही न सका। अुसने मुझे पकड़ लिया। जोहानिसबर्गसे नेटालका रास्ता लगभग चौबीस घंटेका था। ट्रेन शामको डरबन पहुंचती थी। पहुंचनेके बाद मुझे सारी रात नींद नहीं आयी। मैंने पुस्तकमें सूचित विचारोंको अमलमें लानेका अिरादा किया। बादमें मैंने अुसका गुजराती अनुवाद किया और वह 'सर्वोदय' के नामसे छपा।

मेरा यह विश्वास है कि जो चीज मेरे अन्दर गहराअीमें छिपी पड़ी थी, रस्किनके ग्रंथरत्नमें मैंने अुसका स्पष्ट प्रतिबिम्ब देखा। और, अिस कारण अुसने मुझ पर अपना साम्राज्य जमाया और मुझसे अुसमें दिये गये विचारों पर अमल करवाया। जो मनुष्य हममें सोयी हुअी अुत्तम भावनाओंको जाग्रत करनेकी शक्ति रखता है वह कवि है। सब कवियोंका सब लोगों पर समान प्रभाव नहीं पड़ता क्योंकि सबके अन्दर सारी सद्भावनायें समान मात्रामें नहीं होतीं।

मैं 'सर्वोदय' के सिद्धान्तोंको अिस प्रकार समझा हूं :

१ सबकी भलाअीमें हमारी भलाअी निहित है।

२ वकील और नाअी दोनोंके कामकी कीमत अेकसी होनी चाहिये क्योंकि आजीविकाका अधिकार सबको अेक-सा है।

३ सादा मेहनत-मजदूरीका, किसानका जीवन ही सच्चा जीवन है।

पहली चीजको म जानता था। दूसरीको मैं धुंधले रूपमें देखता था। तीसरीका मैंने कभी विचार ही नहीं किया था। सर्वोदय ने मुझे दीयेकी तरह दिखा दिया कि पहली चीजमें दूसरी दोनों चीजें समायी हुअी हैं। सवेरा हुआ और म अिन सिद्धान्तोंका अमल करनेके प्रयत्नमें जुट गया।

आत्मकथा पृ० २५९-६०, १९५७

८

सब धर्म अीश्वर तक ले जाते हैं

मेरी हिन्दू प्रकृति मुझे बताती है कि थोड़े या बहुत, सब धर्म सच्चे हैं। सबका स्रोत अेक ही अीश्वर है। परन्तु सब अपूर्ण हैं, क्योंकि वे हमारे पास मानवके अपूर्ण माध्यम द्वारा आये हैं।

यंग अिंडिया २९-५-'२४, पृ० १८०

विविध धर्म अेक ही जगह पहुंचनेवाले अलग अलग रास्ते हैं। अेक ही जगह पहुंचनेके लिअे हम अलग अलग रास्ते लें तो अिसमें दुःखका कोअी कारण नहीं है। सच पूछो तो जितने मनुष्य हैं अुतने ही धर्म भी हैं।

हिन्द स्वराज्य, पृ० ४२ और ४१   १९५९

सिद्धान्तके रूपमें चूंकि अीश्वर अेक है अिसलिअे धर्म भी अेक ही हो सकता है। परन्तु व्यवहारमें मने कोअी दो आदमी अैसे नहीं देखे, जिनकी अीश्वरके बारेमें बिलकुल अेक-सी ही कल्पना हो। अिसलिअे शायद मनुष्योंकी भिन्न भिन्न प्रकृति और भू-प्रदेशोंकी भिन्न भिन्न जलवायुके अनुसार अलग अलग धर्म हमेशा ही रहेंगे।

हरिजन २-२-३४ पृ० ८

मैं अिस विश्वाससे सहमत नहीं हूं कि पृथ्वी पर अेक धर्म हो सकता है या होगा। अिसलिअे मैं विविध धर्मोंमें पाया जानेवाला सामान्य तत्त्व खोजनेकी और विविध धर्मावलम्बी अेक-दूसरेके प्रति सहिष्णुताका भाव रखें, अिस बातको पैदा करनेकी कोशिश कर रहा हूं।

यंग अिंडिया, ३१-७-२४ पृ० २५४

अपने प्रयोगोंमें हम जिस व्रतको सहिष्णुताके नामसे पहचानते हैं अुसे यह नया नाम (सर्वधर्म-समभाव) दिया है। सहिष्णुता अंग्रेजी शब्द टॉलरेशन का अनुवाद है। वह मुझे पसंद नहीं आया था, लेकिन कोअी दूसरा नाम सूझता नहीं था। काकासाहबको भी वह पसंद नहीं आया था। अुन्होंने सर्वधर्म-आदर शब्द सुझाया। मुझे वह भी पसन्द नहीं आया। दूसरे धर्मोंको सहन करनेमें यह मान लिया जाता है कि वे हमारे धर्मसे कुछ घटिया हैं। और आदरमें मेहरबानीका भाव है। अहिंसा हमें दूसरे धर्मोंके प्रति समभाव सिखाती है। आदर और सहिष्णुता अहिंसाकी दृष्टिसे पर्याप्त नहीं है। दूसरे धर्मोंके प्रति समभाव रखनेके मूलमें अपने धर्मकी अपूर्णताका स्वीकार आ ही जाता है। और सत्यकी आराधना तथा अहिंसाकी कसौटी यही सिखाती है। यदि हमने सम्पूर्ण सत्यका दर्शन कर लिया होता, तो फिर सत्यके आग्रहका प्रश्न ही न रह जाता। तब तो हम स्वयं परमेश्वर हो गये होते क्योंकि हम मानते हैं कि सत्य ही परमेश्वर है। हम पूर्ण सत्यको नहीं पहचानते, अिसीलिअे अुसका आग्रह रखते हैं और अिसीलिअे पुरुषार्थको अवकाश है। अिसमें अपनी अपूर्णताका स्वीकार आ जाता है। और यदि हम अपूर्ण हैं तो हमारे द्वारा जिसकी कल्पना की गअी है वह धर्म भी अपूर्ण है। स्वतंत्र धर्म सम्पूर्ण है। लेकिन हमें अुसका दर्शन नहीं हुआ है, जिस प्रकार कि हमें अीश्वरका दर्शन नहीं हुआ है। तो हमारा माना हुआ धर्म अपूर्ण है और अुसमें हमेशा परिवर्तन होते रहते हैं, आगे भी होंगे रहेंगे। हाँ तो ही हम अुत्तरोत्तर प्रगति कर सकते हैं, सत्यकी ओर, अीश्वरकी ओर, प्रतिदिन आगे बढ़ते रह सकते हैं। और यदि मनुष्य द्वारा कल्पित सभी धर्मोंको अपूर्ण मानें तो फिर किसी धर्मको अूँचा या नीचा माननेका कारण नहीं रह जाता। सभी धर्म सच्चे हैं परन्तु साथ ही सभी अपूर्ण हैं और अिसलिअे अुनमें दोषके लिअे अवकाश है। अुन सबके प्रति समभाव रखते हुअे भी हम अुनमें दोष देख सकते हैं। हमें अपने धर्मके दोष भी देखना चाहिये। अुन दोषोंके कारण हम अुसका त्याग नहीं करेंगे, लेकिन दोष अवश्य दूर करेंगे। अिस तरह यदि हम सब धर्मोंके प्रति समभाव रखें तो दूसरे धर्मोंमें हमें जो ग्राह्य मालूम होगा अुसे अपने

धर्ममें स्थान देते हुअे हमें न केवल सकोच नहीं होगा, बल्कि अैसा करना हमें कर्तव्य मालूम होगा।

सभी धर्म अीश्वर-दत्त हैं, परन्तु चूंकि वे मनुष्य-कल्पित हैं और मनुष्य अुनका प्रचार करता है अिसलिअे वे अपूर्ण हैं। अीश्वर-दत्त धर्म अगम्य है। अुसे मनुष्य अपनी अपूर्ण भाषामें बांधता है फिर अुसका अर्थ भी मनुष्य ही करते हैं। किसके अर्थको हम सच कहें? अपनी अपनी दृष्टिके अनुसार—अुनकी दृष्टि जहां तक जाती है वहां तक— सभी सही हैं लेकिन सब गलत हों यह असंभव नहीं है। अिसलिअे हमें सब धर्मोंके प्रति समभाव रखना चाहिये। अिसमें अपने धर्मके प्रति अुदासीनता आती हो अैसी बात नहीं परन्तु अपने धर्म पर हमारा जो प्रेम है अुसकी अंधता मिटती है। अिस तरह वह ज्ञानमय बनता है और अिसलिअे ज्यादा सात्त्विक और निर्मल बनता है। हम सब धर्मोंके प्रति समभावका विकास करें तो ही हमारा दिव्यचक्षु खुलेगा। धर्मान्धता और दिव्य दर्शनमें अुतना ही अंतर है जितना अुत्तर और दक्षिण ध्रुवमें। सच्चा धर्मज्ञान होने पर विविध धर्मोंमें व्यवधान पैदा करनेवाले अंतराय मिट जाते हैं और समभाव पैदा होता है। अिस समभावका विकास करके हम अपने धर्मको ज्यादा अच्छी तरह पहचान सकेंगे।

मंगल-प्रभात (गु) पृ २९–३० १९५४

मेरा यह अनुभव रहा है कि मैं अपनी दृष्टिसे तो हमेशा सही होता हूं और मेरे अीमानदार आलोचकोंकी दृष्टिसे अकसर गलती पर होता हूं। मैं जानता हूं कि अपने अपने दृष्टिकोणसे हम दोनों सही है। और यह ज्ञान मुझे अपने विरोधियों अथवा आलोचकोंके हेतुओं पर शंका करनेसे बचा लेता है। जिन सात अंधोंने हाथीका अलग अलग सात तरहसे वर्णन किया वे अपनी अपनी दृष्टिसे सब ठीक थे, अेक-दूसरेकी दृष्टिसे सब गलत थे और जो आदमी हाथीको जानता था अुसकी दृष्टिसे सही भी थे और गलत भी थे। सत्यके अनेक रूप होते हैं, जिस सिद्धान्तको मैं बहुत पसन्द करता हूं। अिसी सिद्धान्तने मुझे अेक मुसलमानको अुसके अपने दृष्टिकोणसे और अेक अीसाअीको अुसके दृष्टिकोणसे समझना सिखाया है। पहले मैं अपने विरोधियोंके अज्ञान पर

मुंझलाता था। आज मैं अुनसे प्रेम कर सकता हूं क्योंकि मुझे वह आंख प्राप्त है जिससे मैं अपनेको अुसी दृष्टिसे देख सकता हूं जिससे दूसरे मुझे देखते हैं और दूसरोंको अुसी दृष्टिसे देख सकता हूं जिससे मैं स्वयं अपनेको देख सकता हूं। मैं सारे संसारको अपने प्रेमके आलिंगनमें बांध लेना चाहता हूं।

यंग अिंडिया, २१-१-'२६, पृ० ३०

९

दूसरोंके धर्मग्रन्थोंके प्रति मेरा रवैया

दूसरोंके धर्मग्रन्थोंकी आलोचना करना या अुनके दोष बताना मेरा काम नहीं है। परंतु अुनमें जो सत्य है अुसे घोषित और कार्यान्वित करना मेरा सौभाग्य है और होना चाहिये। अिसलिअे कुरानकी या पैगम्बरके जीवनकी जिन बातोंको मैं समझ नहीं सकता अुनकी मैं आलोचना या निन्दा नहीं कर सकता। परंतु अुनके जीवनके जिन पहलुओंको मैं जान और समझ सका हूं अुनके लिअे अपनी प्रशंसा व्यक्त करनेके हर मौकेका मैं स्वागत करता हूं। जिन बातोंको समझनेमें कठिनाअियां सामने आती हैं अुन्हें मैं भक्त मुसलमानोंकी दृष्टिसे देखकर संतोष कर लेता हूं और अिस्लामके प्रमुख मुसलमान व्याख्याकारोंकी रचनाओंकी सहायतासे अुन्हें समझनेकी कोशिश करता हूं। अपने धर्मसे भिन्न धर्मोंके प्रति अैसी आदरकी दृष्टि रखकर ही मैं सब धर्मोंकी समानताका नियम सिद्ध कर सकता हूं। परंतु हिन्दू धर्मको शुद्ध करने और शुद्ध रखनेके लिअे अुसके दोष बताना मेरा अधिकार भी है और कर्तव्य भी है। परंतु जब अहिन्दू आलोचक हिन्दू धर्मकी टीका-टिप्पणी करते और अुसके दोषोंकी सूची बनाने लगते हैं तब वे हिन्दू धर्मके विषयमें अपना [illegible] अज्ञान और अुसे हिन्दू दृष्टिकोणसे देखनेकी अपनी असमर्थता ही घोषित करते हैं। अिससे अुनकी दृष्टि दूषित और निर्णय-शक्ति विकृत हो जाती है। अिस प्रकार हिन्दू धर्मके गैर हिन्दू आलोचकोंका मुझे स्वयं जो अनुभव है वह मुझे मेरी मर्यादाओंका

भान कराता है और यह सिखाता है कि अिस्लाम या अीसाअी धर्म और अुसके प्रवर्तकोंकी आलोचना करनेमें मुझे सावधान रहना चाहिये।

हरिजन १३-३-१७ पृ० ३४

हमारे यहां (आश्रममें) भगवद्‌गीताका नियमित पाठ होता है और अब हम अैसी स्थितिमें पहुंच गये हैं कि रोज सुबह कुछ निश्चित अध्यायोंका पाठ करके हम हर सप्ताह गीताका अेक पूरा पाठ कर लेते हैं। फिर हम भारतके विभिन्न सन्तोंके भजन गाते हैं और अुनमें हम अीसाअी भजन-मालाके भजन भी शामिल करते हैं। चूंकि खानसाहब हमारे साथ हैं, अिसलिये हम कुरानका पाठ भी करते हैं। मुझे तुलसीदासकी रामायणके पाठसे अत्यंत संतोष होता है। मुझे न्यू टेस्टामेण्ट और कुरानसे भी सान्त्वना मिलती है। मैं अुन्हें आलोचककी निगाहसे नहीं देखता। वे मेरे लिये अुतने ही महत्त्वपूर्ण हैं जितनी भगवद्‌गीता भले अुनकी सब बातें मुझे न जंचें—जैसे पॉलके पत्रोंका प्रकरण। अिसी तरह तुलसीदासकी भी हरअेक बात मुझे पसन्द नहीं आती।

मैं प्रत्येक धर्मग्रंथके बारेमें—और गीता अुनमें शामिल है—अपनी निर्णायक बुद्धिका अुपयोग करता हूं। मैं किसी धर्मग्रंथके वचनोंको अपनी बुद्धि पर हावी नहीं होने देता। मैं यह तो मानता हूं कि प्रधान धर्मग्रंथ अीश्वर-प्रेरित हैं लेकिन साथ ही म यह भी मानता हूं कि वे दो माध्यमोंसे छनकर आते हैं अिसलिये पूरे शुद्ध नहीं होते। अेक तो वे किसी मानव पैगम्बरके द्वारा आते हैं और दूसरे अुन पर भाष्यकारोंकी टीका होती है। अुनकी कोअी बात अीश्वरकी ओरसे सीधी नहीं आती। अेक ही वचनको मैथ्यू अेक रूपमें पेश करता है जॉन किसी दूसरे रूपमें। मैं अीश्वरीय प्रेरणाको तो मानता हूं मगर बुद्धिका त्याग नहीं कर सकता। सबसे बड़ी बात यह याद रखनी चाहिये कि हम भाषाके पीछे रहे अर्थ और भावको पहचानना सीखें। परन्तु आपको मेरी स्थितिके बारेमें गलतफहमी नहीं होनी चाहिये। जहां बुद्धिकी पहुंच नहीं होती वहां मैं श्रद्धाको भी मानता हूं।

हरिजन ५-१२-३६, पृ० ३३९ ३४५

मैं अक्षरवादी नहीं हूं। इसलिओ मैं संसारके विभिन्न धर्मग्रंथोंका भाव समझनेकी कोशिश करता हूं। अर्थ लगानेके लिये मैं जिन शास्त्रोंने सत्य और अहिंसाकी जो कसौटी बताओ है अुसीका अुपयोग करता हूं। अुस कसौटी पर जो चीज खरी नहीं अुतरती अुसे मैं अस्वीकार कर देता हूं और जो खरी अुतरती है अुसकी कद्र करता हूं।

ज्ञान पर किसी वर्ग या समुदायका विशेषाधिकार नहीं हो सकता। लेकिन मैं यह मान सकता हूं जब तक लोगोंको प्रारंभिक तालीम न मिल जाय तब तक वे अूंचे या सूक्ष्म तत्वोंका आकलन नहीं कर सकते, जैसे कि प्रारंभिक तैयारी न करनेवाले लोग बहुत अूंचाओ पर रहनेवाले सूक्ष्म वायुमंडलमें सांस नहीं ले सकते या सामान्य गणितकी प्रारंभिक तालीम न पानेवाले अुच्च भूमिति या बीजगणितको समझने या हजम करनेकी शक्ति नहीं रखते।

यंग अिंडिया, २७-८-२५, पृ० २९१

मेरी राय है कि संसारके धर्मग्रंथोंको सहानुभूतिपूर्वक पढ़ना प्रत्येक सभ्य पुरुष या स्त्रीका कर्तव्य है। अगर हमें दूसरोंके धर्मका वैसा ही आदर करना है जैसा हम अुनसे हमारे अपने धर्मका कराना चाहते हैं तो संसारके धर्मोंका आदरपूर्वक अध्ययन करना हमारा अेक पवित्र कर्तव्य है। दूसरे धर्मोंके आदरपूर्ण अध्ययनसे हिन्दू धर्मग्रंथोंके प्रति मेरा आदर या अुनमें मेरी श्रद्धा कम नहीं हुआी है। सच तो यह है कि हिन्दू शास्त्रोंकी मेरी समझ पर अुनकी गहरी छाप पड़ी है। अुन्होंने मेरी जीवन-दृष्टिको विशाल बनाया है। अुनकी सहायतासे मैं हिन्दू शास्त्रोंके अनेक न समझमें आनेवाले अंश अधिक स्पष्ट समझ सकता हूं।

मैं अेक बात स्वीकार कर लूं। अगर मैं बाअिबल या कुरानके अपने ही अर्थके आधार पर अपनेको अीसाओ या मुसलमान कह सकता हूं तो मुझे अपनेको अीसाओ या मुसलमान दोनों ही कहनेमें संकोच नहीं होगा। क्योंकि फिर तो हिन्दू, अीसाओ और मुसलमान समानार्थक शब्द हो जायंगे। यह तो मैं मानता ही हूं कि परलोकमें न हिन्दू हैं न अीसाओ या मुसल्मान। वहां सब लोगोंका फैसला अुनका नाम क्या है या वे क्या कहते हैं अिसके अनुसार नहीं होता, केवल अुनके कर्मोंके अनुसार

ही होता है। जब तक हम अिस पृथ्वी पर हैं तब तक जरूर ये विविध धर्मबाचक नाम हमेशा रहेंगे। अिसलिये मैं अुस समय तक अपने बाप दादाओंका नाम रखना ही अधिक पसन्द करता हूं, बशर्ते कि अुससे मेरा विकास कुंठित न होता हो और दूसरी जगह जो भी भलाओ है अुसे स्वीकार करनेमें अुसके कारण कोओ रुकावट न आती हो।

यंग अिंडिया २-९-२६, पृ० ३०८

१०

स्वधर्म

धर्मकी ज्यादासे ज्यादा निकटकी यद्यपि फिर भी बहुत अपूर्ण अुपमा मुझे कोओ मिल सकती है तो वह विवाहकी है। विवाह अेक अकाट्य बंधन है या माना जाता था। धर्मका बन्धन अुससे भी अधिक अकाट्य है। और जिस प्रकार कोओ पति अपनी पत्नीके प्रति या पत्नी अपने पतिके प्रति वफादार रहती है तो अुसका कारण यह नहीं होता है कि अुसकी पत्नी स्त्रियोंमें सर्वश्रेष्ठ है या अुसका पति पुरुषोंमें सर्वश्रेष्ठ है वस्तुतः अुसका कारण अुनमें रहा कोओ अनिर्वचनीय किन्तु अनिवार्य आकर्षण होता है। ठीक अुसी तरह मनुष्य अपने ही धर्मके प्रति अनिवार्य रूपमें वफादार रहता है और अुस वफादारीमें पूरा सन्तोष प्राप्त करता है। और जैसे अेक वफादार पतिको अपनी वफादारी कायम रखनेके लिअे दूसरी स्त्रियोंको अपनी पत्नीसे घटिया समझनेकी जरूरत नहीं होती ठीक अुसी तरह किसी धर्मके अनुयायीको यह जरूरत नहीं रहती कि वह दूसरे धर्मोंको अपने धर्मसे घटिया समझे। अिस अुपमाको और भी आगे बढ़ायें तो जैसे अपनी पत्नीके प्रति वफादारीका यह अर्थ नहीं होता कि हम अुसकी त्रुटियोंकी तरफसे आंखें मूंद लें अिसी तरह अपने धर्मके प्रति वफादारीका यह अर्थ नहीं होता कि अुस धर्मकी त्रुटियोंकी तरफ हम अंधे हो जायं। वास्तवमें वफादारी अगर अंधी नहीं है तो अुसका यह तकाजा होता है कि त्रुटियोंका अधिक तीव्र ज्ञान हो

और अुसके परिणामस्वरूप अुन्हें दूर करनेके अुचित अुपायोंकी ज्यादा सही सूझ हो। धर्मकी मेरी जो दृष्टि है अुसे देखते हुअे मेरे लिअे हिन्दू धर्मकी खूबियोंकी जांच करना गैर-जरूरी है। पाठक यह समझ लें कि अगर मुझे हिन्दू धर्मकी अनेक खूबियोंका भान न होता तो मैं हिन्दू रह ही नहीं सकता था। बेशक मैं यह नहीं मानता कि ये खूबियां केवल हिन्दू धर्ममें ही हैं। अिसलिअे दूसरे धर्मोंके प्रति मेरी दृष्टि दोषदर्शी आलोचककी कभी नहीं होती। परन्तु अेक अैसे भक्तकी होती है जो दूसरे धर्मोंमें अपने धर्मके जैसा ही खूबियां पानेकी आशा रखता है और जो खूबियां अुनमें पाता है और अपने धर्ममें नहीं पाता अुन्हें अपने धर्ममें शामिल कर लेना चाहता है।

हरिजन, १२–८–'३३, पृ० ४

पक्का हिन्दू होने पर भी मुझे अपने धर्ममें अीसाअी अिस्लामी और पारसी धर्मकी शिक्षाओंके लिअे गुंजाअिश मालूम होती है और अिसलिअे मेरा हिन्दुत्व कुछ लोगोंको खिचड़ी-सा दिखाअी देता है और कुछ लोगोंने तो मुझे भ्रमरवृत्तिवाला (eclectic) तक करार दिया है। किसी आदमीको भ्रमरवृत्तिवाला कहनेका तो यह अर्थ हुआ कि अुसका कोअी धर्म ही नहीं है परन्तु मेरा तो अितना व्यापक धर्म है कि वह अीसाअियोंका–'प्लीमाअुथ–ब्रदरन' के सदस्य तकका—और कट्टरसे कट्टर मुसलमानका भी विरोध नहीं करता। अिस धर्मका आधार अत्यन्त व्यापक सहिष्णुता है। मैं किसीका अुसकी कट्टरताके लिअे बुरा-भला नहीं कहता, क्योंकि मैं अुन्हें अुनके अपने दृष्टिकोणसे देखनेकी कोशिश करता हूं। यह व्यापक श्रद्धा ही मेरे जीवनका आधार है। मैं मानता हूं कि अिससे कुछ परेशानी होती है—लेकिन मुझे नहीं, दूसरोंको।

यंग अिंडिया, ३२–१२–'२७ पृ० ४२५

११

ओसाओ धर्म

'न्यू टेस्टामेण्ट'से मुझे शान्ति मिली और अपार हर्ष हुआ क्योंकि यह ओल्ड टेस्टामेण्ट के कुछ हिस्सोंसे अुत्पन्न हुओ अरुचिके बाद मेरे पढ़नेमें आया। मान लीजिये आज मुझसे गीता छीन ली जाय और अुसकी सब बातें मैं भूल जाअू परन्तु मुझे (पार्वतीय) अुपदेश (दि सर्मन ऑन दि माअुण्ट) की पुस्तिका मिल जाय तो मुझे अुससे वही आनन्द प्राप्त होगा जो गीतासे होता है।

यंग अिंडिया २२–१२–२७ पृ० ४२६

अीसाने अीश्वरीय भावना और अिच्छाको जिस तरह प्रगट किया अुस तरह और कोअी नहीं कर सका। अिसी अर्थमें मैं अुन्हें अीश्वर-पुत्रके रूपमें देखता और मानता हूं। और चूंकि अीसाके जीवनमें यह महत्त्व और अलौकिकता है अिसलिअे मेरा विश्वास है कि वे केवल अीसाअी जगतके ही नहीं परन्तु सारे संसारके हैं, सभी जातियों और लोगोंके हैं — भले वे किसी भी झंडे नाम या सिद्धान्तके मातहत काम करें किसी भी अैसे धर्मको मानें या अैसे अीश्वरकी पूजा करें जो अुन्हें बापदादोंसे विरासतमें मिला हो।

दि मॉडर्न रिव्यू, अक्तूबर १९४१ पृ० ४०६

रोममें सूली पर चढ़े हुअे अीसाका अेक चित्र देखकर गांधीजी बोले पोपके महलमें सूली पर चढ़े हुअे अीसाकी सजीव मूर्तिके सामने सिर झुका सकनेके लिअे मैं क्या नहीं दे डालता? जीती-जागती करुणाके अिस दृश्यसे अलग होते हुअे मुझे बड़ी पीड़ा हुअी। अिस दृश्यको देखते हुअे मैंने मुहूर्तमात्रमें समझ लिया कि व्यक्तियोंकी भांति राष्ट्र भी सूलीकी यातना सहकर ही बनाये जा सकते हैं और किसी तरह नहीं। आनन्द दूसरोंको पीड़ा पहुंचानेसे नहीं मिलता परन्तु खुशीसे स्वयं कष्ट भोगनेसे मिलता है।

दिस वाज बापू रे० — आर० के० प्रभु पृ० २९ १९५४

१२

बौद्ध धर्म

मैंने अनेक बार लोगोंको यह कहते सुने सुना है और बौद्ध धर्मका मर्म प्रगट करनेका दावा करनेवाली पुस्तकोंमें पढ़ा भी है कि बुद्ध अीश्वरको नहीं मानते थे। मेरी नम्र रायमें जिस प्रकारकी मान्यता बुद्धकी शिक्षाके केन्द्रीय सत्त्वके ही विरुद्ध है। यह गड़बड़ जिसलिअे पैदा हुअी कि बुद्धने अपने जमानेमें अीश्वरके नाम पर चलनेवाली तमाम बुराअियोंको अस्वीकार कर दिया था और वह ठीक ही था। अुन्होंने बेशक जिस खयालको माननेसे अिनकार कर दिया था कि अीश्वर नामधारी प्राणी द्वेषसे काम लेता है, अपने कर्मों पर पश्चात्ताप कर सकता है और सांसारिक राजाओंकी भांति प्रलोभनोंमें फंस सकता है और अुसके काअी विशेष कृपापात्र भी हो सकते हैं। अुन्होंने अिस मान्यताका प्रबल विरोध किया कि अीश्वर नामधारी प्राणीको अपने संतोषके लिअे पशुओंका ताजा रक्त चाहिये ताकि वह खुश हो सके — अुन पशुओंका जो अुसकी अपनी ही सृष्टि है। अिसलिअे अुन्होंने अीश्वरको फिरसे ठीक स्थान पर आसीन किया और अुस शुभ्र सिंहासनका हड़प करके बैठे हुअे अनधिकारीको वहांसे च्युत कर दिया। अुन्होंने अिस विश्वके नैतिक शासनके चिरस्थायी और अटल अस्तित्व पर जोर दिया और अुसकी फिरसे घोषणा की। अुन्होंने निस्संकोच कहा कि धर्म ही अीश्वर है।

अीश्वरके नियम शाश्वत और नित्य होते हैं। अुन्हें अीश्वरसे अलग नहीं किया जा सकता। अीश्वरकी पूर्णताकी यह अनिवार्य शर्त है। अिसीलिअे यह भ्रांति हुअी है कि बुद्धका अीश्वरमें विश्वास नहीं था और वे केवल नैतिक धर्मको मानते थे। और स्वयं अीश्वरसे सम्बन्धमें जिस गड़बड़के कारण निर्वाण जैसे महान शब्दको ठीक तरह समझनेके बारेमें भी गड़बड़ हुअी। अवश्य ही 'निर्वाण' का अर्थ सर्वथा नाश नहीं है। यहां तक

मैं बुद्धके जीवनके केन्द्रीय तथ्यको समझ सका हूं निर्वाण हमारे भीतरकी सारी नीचता सारी बुराअी और सारी अधमताका ही सर्वनाश है। निर्वाण कब्रकी काली और मृत शांति नहीं है, परन्तु अैसी आत्माकी सजीव शांति और सजीव सुख है जिसे स्वयं अपना भान है और जिसे अविनाशी परम सत्ताके हृदयमें अपना स्थान प्राप्त कर लेनेका भी भान है।

यंग अिंडिया २४–११–२७, पृ० ३९३

१३

अिस्लाम

मैं जिस अर्थमें अीसाअी धर्म बौद्ध धर्म और हिन्दू धर्मको शांतिके धर्म मानता हूं अुसी अर्थमें अिस्लामको भी शांतिका धर्म मानता हूं। बेशक, मात्रामें कुछ अन्तर है परन्तु अिन सब धर्मोका अुद्देश्य शांति ही है। मैं यह राय दे चुका हूं कि अिस्लामके अनुयायी तलवारका अुपयोग बहुत खुले हाथों करते हैं। परन्तु यह कुरानकी शिक्षाका फल नहीं है। मेरी रायमें अिसका कारण वह वातावरण है जिसमें अिस्लाम पैदा हुआ। अीसाअी धर्मका भी अेक रक्तरंजित अितिहास है और वह अुसकी शिक्षाके खिलाफ है तथा अुसके गौरवको घटाता है। लेकिन अुसका कारण यह नहीं है कि अीसा कसौटी पर पूरे नहीं अुतरे। कारण यह है कि जिस वातावरणमें अुस धर्मका प्रसार हुआ वह अुनकी अुच्च शिक्षाके अनुकूल नहीं था।

यंग अिंडिया २०–१–२७ पृ० २१

१२

बौद्ध धर्म

मैंने अनेक बार लोगोंको यह कहते हुअे सुना है और बौद्ध धर्मका मर्म प्रगट करनेका दावा करनेवाली पुस्तकोंमें पढ़ा भी है कि बुद्ध अीश्वरको नहीं मानते थे। मेरी नम्र रायमें जिस प्रकारकी मान्यता बुद्धकी शिक्षाके केन्द्रीय तत्त्वके ही विरुद्ध है। यह गड़बड़ अिसलिअे पैदा हुअी कि बुद्धने अपने जमानेमें अीश्वरके नाम पर चलनेवाली तमाम बुराअियोंको अस्वीकार कर दिया था और वह ठीक ही था। अुन्होंने बेशक अिस खयालको माननेसे अिनकार कर दिया था कि अीश्वर नामधारी प्राणी द्वेषसे काम लेता है, अपने कर्मों पर पश्चात्ताप कर सकता है और सांसारिक राजाओंकी भांति प्रलोभनोंमें फंस सकता है और अुसके कोअी विशेष कृपापात्र भी हो सकते हैं। अुन्होंने अिस मान्यताका प्रबल विरोध किया कि अीश्वर नामधारी प्राणीको अपने संतोषके लिअे पशुओंका ताजा रक्त चाहिये ताकि वह खुश हो सके — अुन पशुओंका जो अुसकी अपनी ही सृष्टि हैं। अिसलिअे अुन्होंने अीश्वरको फिरसे ठीक स्थान पर आसीन किया और अुस शुभ्र सिंहासनको हड़प करके बैठे हुअे अनधिकारीको वहांसे च्युत कर दिया। अुन्होंने अिस विश्वके नैतिक शासनके चिरस्थायी और अटल अस्तित्व पर जोर दिया और अुसकी फिरसे घोषणा की। अुन्होंने निस्संकोच कहा कि धर्म ही अीश्वर है।

अीश्वरके नियम शाश्वत और नित्य होते हैं। अुन्हें अीश्वरसे अलग नहीं किया जा सकता। अीश्वरकी पूर्णताकी यह अनिवार्य शर्त है। अिसीलिअे यह भ्रांति हुअी है कि बुद्धका अीश्वरमें विश्वास नहीं था और वे केवल नैतिक धर्मको मानते थे। और स्वयं अीश्वरके सम्बन्धमें अिस गड़बड़के कारण 'निर्वाण' जैसे महान शब्दको ठीक तरह समझनेके बारेमें भी गड़बड़ हुअी। अवश्य ही 'निर्वाण' का अर्थ सर्वथा नाश नहीं है। जहां तक

मैं बुद्धके जीवनके केन्द्रीय तथ्यको समझ सका हूं निर्वाण हमारे भीतरकी सारी नीचता सारी बुराअी और सारी अधमताका ही सर्वनाश है। निर्वाण कब्रकी काली और मृत शांति नहीं है परन्तु अैसी आत्माकी सजीव शांति और सजीव सुख है जिसे स्वयं अपना भान है, और जिसे अविनाशी परम सत्ताके हृदयमें अपना स्थान प्राप्त कर लेनेका भी भान है।

यंग अिंडिया २४–११–२७ पृ० ३९१

१३

अिस्लाम

मैं जिस अर्थमें अीसाअी धर्म, बौद्ध धर्म और हिन्दू धर्मको शांतिके धर्म मानता हूं अुसी अर्थमें अिस्लामको भी शांतिका धर्म मानता हूं। बेशक, मात्रामें कुछ अन्तर है परन्तु अिन सब धर्मोंका अुद्देश्य शांति ही है। मैं यह राय दे चुका हूं कि अिस्लामके अनुयायी तलवारका अुपयोग बहुत खुले हाथों करते हैं। परन्तु यह कुरानकी शिक्षाका फल नहीं है। मेरी रायमें अिसका कारण वह वातावरण है जिसमें अिस्लाम पैदा हुआ। अीसाअी धर्मका भी अेक रक्तरंजित अितिहास है और वह अुसकी शिक्षाके खिलाफ है तथा अुसके गौरवको घटाता है। लेकिन अुसका कारण यह नहीं है कि अीसा कसौटी पर पूरे नहीं अुतरे। कारण यह है कि जिस वातावरणमें अुस धर्मका प्रसार हुआ वह अुनकी अुच्च शिक्षाके अनुकूल नहीं था।

यंग अिंडिया २ –१–२७ पृ० २१

१४

थियोसॉफी

गांधीजीसे पूछा गया, क्या आप कभी थियोसॉफिकल सोसायटीके सदस्य रहे हैं? गांधीजीने कहा कि सदस्य तो मैं कभी नहीं रहा मगर मुझे अुसके विश्वबन्धुत्वके सन्देश और अुससे पैदा होनेवाली सहिष्णुताके साथ सदा सहानुभूति रही है।

अुन्होंने यह भी कहा "मैं थियोसॉफिकल सोसायटीवाले मित्रोंका बहुत ऋणी हूं। अुनमें मेरे अनेक मित्र हैं। श्रीमती ब्लेवेट्स्की कर्नल ऑल्स-कॉट या डॉक्टर बेसेन्टके खिलाफ आलोचक कुछ भी कहें, मानव सभ्यताकी प्रगतिमें अिनका योग सदा अूंचे दरजेका माना जायगा। अिस समाजमें मेरे शरीक होनेमें अुसका गुप्त पहलू भी बाधक हुआ है। अुसकी गुप्त विद्या (occultism) मुझे कभी नहीं जंची।"

विद वाव बापू, ले० — आर के० प्रभु, पृ० ११ १९५४

१५

प्रेतविद्या

मुझे प्रेतात्माओंसे कभी सन्देश नहीं मिलते। अिस प्रकार सन्देश मिलनेकी संभावनामें अविश्वास रखनेके लिये मेरे पास कोअी प्रमाण नहीं है। परन्तु अिस प्रकारका सम्पर्क रखने अथवा अुसकी कोशिश करनेके अभ्यासको मैं बहुत नापसन्द करता हूं। ये सम्पर्क अक्सर भ्रामक और काल्पनिक होते हैं। अैसा सम्पर्क संभव भी मान लें तो यह अभ्यास माध्यम और प्रेतात्मा दोनोंके लिये हानिकारक है। अुससे बुलाअी हुअी आत्मा पृथ्वीकी ओर आकर्षित और मोहबद्ध होती है, जब कि प्रयत्न यह होना चाहिये कि वह संसारसे अनासक्त होकर अूपर अुठे। कोअी आत्मा शरीरसे मुक्त हो जानेसे ही शुद्ध नहीं हो जाती। वह अपने साथ वे सारी कमजोरियां ले जाती है जिनकी कि वह पृथ्वी पर शिकार थी। अिसलिये

ज़रूरी नहीं कि अुसकी दी हुअी जानकारी या सलाह सही या ठीक ही हो। किसी प्रेतात्माका संसारवासियोंसे सम्पर्क चाहना खुशीकी बात नहीं है, अुलटे अुसे अैसी अनुचित आसक्तिसे छुड़ाना चाहिये। यह तो भी प्रेतात्माओंको होनेवाले नुकसानकी बात।

रही बात माध्यमकी सो मेरे लिअे यह निश्चित ज्ञानकी बात है कि जिन जिनका मुझे अनुभव है अैसे सब लोगोंका दिमाग या तो असंतुलित होता है या कमजोर होता है और जिस समय वे ये सम्पर्क साध रहे होते हैं या यह समझते हैं कि साध रहे हैं अुस समय वे व्यावहारिक कार्यके लिअे असमर्थ हो जाते हैं। मुझे याद नहीं कि मेरे किसी भी मित्रको जिसने अैसे सम्पर्क साधनेकी कोशिश की है अुनसे किसी प्रकार लाभ हुआ हो।

यंग अिंडिया १२-९-२९ पृ० ३०२

१६

धर्मोंकी तुलना

जब तक अलग-अलग धर्म मौजूद हैं तब तक प्रत्येक धर्मको किसी विशेष बाह्य चिह्नकी आवश्यकता हो सकती है। लेकिन जब बाह्य संज्ञा केवल आडम्बर बन जाती है अथवा अपने धर्मको दूसरे धर्मसे अलग बतानेके काम आती है तब वह त्याज्य हो जाती है।

आत्मकथा पृ० ३४२ १९५७

जैसे अीश्वरने अलग अलग धर्मोंके माननेवाले पैदा किये हैं, ठीक अुसी तरह अलग अलग धर्म भी पैदा किये हैं। मैं गुप्त रूपमें भी अपने मनमें यह विचार कैसे रख सकता हूं कि मेरे पड़ोसीका धर्म मुझसे घटिया है और यह कैसे चाह सकता हूं कि वह अपना धर्म छोड़कर मेरा धर्म अपना ले? अेक सच्चे और वफादार मित्रके नाते मैं तो यही अिच्छा और प्रार्थना कर सकता हूं कि वह अपने ही धर्मके अनुसार चले और

ञुसमें पूर्ण बने। भगवानके महासमरमें अनेक शब्द हैं और वे सब अेकसे पवित्र हैं।

हरिजन २०-४-'३४ पृ० ७३

मुझे डर यह है कि भले ही औसाऔ मित्र आजकल यह न कहें या स्वीकार न करें कि हिन्दू धर्म झूठा है परन्तु अुनके दिलोंमें यह विश्वास जरूर है कि हिन्दू धर्म गलत है और औसाऔ धर्म ही, जैसा वे अुसे मानते हैं सच्चा धर्म है। अैसी कोऔ बात हुअे बिना चर्च मिशनरी सोसायटी द्वारा प्रकाशित की गयी अपील*का आशय समझना सम्भव नहीं। अिस अपीलके कुछ महत्त्वपूर्ण हिस्से अिस पत्रमें मैंने कुछ दिन अुद्धृत किये थे। छुआछूत और दूसरी बुराअियां जो हिन्दू जीवनमें घुस गअी हैं, अुन पर हमला हो तो हम समझ सकते हैं। और अगर ये लोग अिन मानी हुअी बुराअियोंको छुड़ानेमें और हमारे धर्मकी शुद्धि करनेमें हमारी मदद करें तो यह अेक सहायतापूर्ण और रचनात्मक काम होगा और हम अुसे कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार करेंगे। परन्तु जहां तक मौजूदा प्रयत्न हमारी समझमें आता है अुसका अुद्देश्य तो हिन्दू धर्मकी जड़ ही अुखाड़ देनेका और अुसकी जगह दूसरे धर्मकी स्थापना करनेका मालूम होता है। यह तो किसी अैसे घरको नष्ट कर देनेकी कोशिश है जिसे मरम्मतकी तो निहायत जरूरत है परन्तु जिसे रहनेवाला बिलकुल अच्छा और रहने लायक समझता है। कोऔ आश्चर्य नहीं यदि वह अुन लोगोंका स्वागत करे जो अुसे मरम्मतका तरीका बतायें और खुद ही मरम्मत कर देनेकी भी तैयारी दिखायें। परन्तु वह निश्चित रूपमें अुन लोगोंका विरोध करेगा जो अुस घरको जिसने अुसे और अुसके बापदादोंको युग युग तक अच्छा काम दिया है नष्ट करना चाहेंगे। यह दूसरी बात है कि रहनेवालेको ही यह पक्का विश्वास हो जाय कि घरकी मरम्मत नहीं हो सकती और वह अिन्सानके रहने लायक नहीं रह गया है। अगर औसाऔ-जगत हिन्दू धर्मके बारेमें अैसी राय रखता है तो सर्व-धर्म

---

* अिंग्लैण्डकी चर्च मिशनरी सोसायटीकी अपील, जिसके कुछ अंश २६-१२-'३६ के 'हरिजन'में अुद्धृत किये गये थे।

संसद् और 'आन्तर राष्ट्रीय भ्रातृत्व' आदि शब्दोंका कोअी अर्थ नहीं क्योंकि अिन शब्दोंका आशय तो यह है कि विभिन्न धर्मोंका दर्जा समान है और अिन सबोंके द्वारा वे अेक मंच पर बराबरीके आधार पर मिल रहे हैं। निकृष्ट और अुत्कृष्टमें ज्ञानवान और अज्ञानीमें अुन्नत और अवनतमें अुच्च कुलवाले और नीच कुलवालेमें जातिवाले और जाति-बहिष्कृतमें कोअी सामान्य मिलन-मंच नहीं हो सकता। मेरी तुलना दोषपूर्ण हो सकती है शायद अुतेजक भी मालूम हो। मेरा तर्क ठीक न दिखाअी दे परन्तु मेरा कथन तो ठीक है।

हरिजन १३-३-३७ पृ० ३६

धर्मोंके भ्रातृ-मंडलका अुद्देश्य यह होना चाहिये कि वह अेक हिन्दूका अधिक अच्छा हिन्दू अेक मुसलमानको अधिक अच्छा मुसलमान और अेक अीसाअीको अधिक अच्छा अीसाअी बननेमें मदद करे। कृपापूर्ण सहिष्णुताका रवैया आंतर-राष्ट्रीय भ्रातृत्वकी भावनाके विपरीत है। अगर मेरे मनमें यह हो कि मेरा धर्म तो थोड़ा-बहुत सच्चा है और दूसरोंके धर्म थोड़े या बहुत झूठे हैं तो मुझे अुनके प्रति थोड़ासा भ्रातृत्व चाहे हो लेकिन वह अुस भ्रातृत्वसे बिलकुल भिन्न प्रकारका होता है जिसकी हमें आन्तर राष्ट्रीय भ्रातृ-मंडलमें जरूरत है। दूसरोंके लिअे हमारी प्रार्थना यह नहीं होनी चाहिये हे अीश्वर, अुन्हें वही प्रकाश दे जो तूने मुझे दिया है, परन्तु यह होनी चाहिये कि अुन्हें वह सारा प्रकाश और सत्य दे जिसकी अुन्हें अपने सर्वोच्च विकासके लिअे आवश्यकता है। प्रार्थना अितनी ही कीजिये कि आपके मित्र अधिक अच्छे मनुष्य बन जायं चाहे अुनके धर्मका स्वरूप कुछ भी हो।

फिर भी आपके जाने बिना ही आपका अनुभव अुनके अनुभवका अेक अंग बन सकता है।

साबरमती (फेडरेशन ऑफ अिन्टरनेशनल फेलोशिप्सकी पहली वार्षिक बैठककी रिपोर्ट) पृ० १७-१९ १९२८

१७

धर्म-परिवर्तन

सी० अेफ० अेण्डूज आप अुस मनुष्यसे क्या कहेंगे जो बहुत विचार और प्रार्थनाके बाद यह कहे कि मुझे तो अीसाअी बने बिना शान्ति और मुक्ति प्राप्त नहीं हो सकती ?

गांधीजी मैं कहूंगा कि अगर अेक गैर-अीसाअी (हिन्दू कह लीजिये) किसी अीसाअीके पास आये और यह बात कहे, तो अीसाअीका कहना चाहिये कि धर्म बदलनेमें कल्याण खोजनेकी अपेक्षा वह अेक अच्छा हिन्दू बननेका प्रयत्न करे।

अेण्डूज आप मेरी अपनी स्थितिको जानते हैं, परन्तु मैं अिस मामलेमें आपके साथ अन्त तक नहीं जा सकता। मैंने यह स्थिति तो बहुत पहले ही त्याग दी थी कि अीसाके बिना अुद्धार ही नहीं हो सकता। परन्तु मान लीजिये ऑक्सफोर्ड ग्रुप मूवमेन्टवाले आपके पुत्रका जीवन बदल दें और अुसकी अिच्छा धर्म-परिवर्तन की हो जाय तो आप क्या कहेंगे ?

गांधीजी मैं यह कहूंगा कि ऑक्सफोर्ड ग्रुपवाले जितने लोगोंके चाहें अुतने लोगोंके जीवन बदल दें परंतु अुनका धर्म न बदलें। वे अुनके अपने धर्मोंकी अुत्तम बातोंकी तरफ अुनका ध्यान खींच सकते हैं और अुनके अनुसार जीवन बितानेका अनुरोध करके अुनके जीवनमें परिवर्तन कर सकते हैं। मेरे पास अेक आदमी आया था। वह ब्राह्मण माता पिताका पुत्र था। अुसने कहा कि आपकी किताब पढ़कर वह अीसाअी बन गया। मैंने अुससे पूछा कि क्या अुसके खयालसे अुसके पूर्वजोंका धर्म गलत है ? अुसने कहा नहीं। तब मैंने कहा क्या अिस बातमें कोअी कठिनाअी है कि तुम बाअिबलको संसारके महान धर्मग्रन्थोंमें से अेक ग्रंथ और अीसाको महान गुरुओंमें से अेक गुरु मान लो ? मैंने अुससे कहा कि आपने अपनी पुस्तकोंके द्वारा भारतीयोंसे यह कभी नहीं कहा कि वे बाअिबलको अपनाकर अीसाअी धर्म स्वीकार कर लें। मैंने अुसे बताया कि अुसने आपकी पुस्तकका गलत अर्थ किया

है। बेशक आपकी स्थिति स्वर्गीय मौलाना मुहम्मदअली जैसी हो अर्थात् अुनकी तरह आप भी यह मानते हों कि अिस्लामको माननेवाला मुसलमान चाहे अुसका जीवन कितना ही खराब हो अच्छे हिन्दूसे बेहतर है तो बात दूसरी है।

अेन्ड्रूज मुझे मौलाना मुहम्मदअलीका विचार बिलकुल मंजूर नहीं है। परंतु मैं यह जरूर कहता हूं कि अगर किसी व्यक्तिको सच मुच धर्म-परिवर्तनकी आवश्यकता हो तो मुझे अुसके रास्तेमें बाधक नहीं बनना चाहिये।

गांधीजी परंतु आप यह नहीं देखते कि आप तो अुसे मौका ही नहीं देते? आप अुससे जिरह तक नहीं करते। मान लीजिये कि कोअी अीसाअी मेरे पास आता है और कहता है कि भागवत पढ़कर वह मुग्ध हो गया है और अिसलिअे अपनेको हिन्दू घोषित करना चाहता है तो मुझे अुससे कहना चाहिये नहीं जो चीज भागवत देती है वह बाअिबल भी देती है। तुमने अभी तक अुसका पता लगानेकी कोशिश नहीं की है। कोशिश करो और अच्छे अीसाअी बनो।

अेन्ड्रूज मुझे मालूम नहीं कि सही चीज क्या है। अगर कोअी आग्रह पूर्वक कहता है कि वह अच्छा अिसाअी बनेगा तो मैं अुससे कहूंगा कि तुम्हें बनना हो तो बनो —यद्यपि आप जानते हैं कि मैंने स्वयं अपने जीवनमें मेरे पास आनेवाले अुत्कट अुत्साहियोंका जोर देकर रोका है। मैंने अुनसे यही कहा कि मेरे कारण तो तुम्हें अैसी कोअी चीज हरगिज नहीं करनी चाहिये। परंतु मानव-स्वभाव जरूर कोअी ठोस धर्म चाहता है।

गांधीजी अगर कोअी आदमी बाअिबलमें विश्वास रखना चाहता है तो वह अैसा कहे, परंतु अुसे स्वयं अपना धर्म क्यों छोड़ देना चाहिये? अिस धर्म-परिवर्तन करानेकी प्रवृत्तिसे संसारमें शान्ति नहीं होगी। धर्म अत्यंत व्यक्तिगत वस्तु है। हमें अपने अपने ज्ञानके अनुसार जीवन व्यतीत करके अेक-दूसरेको अुत्तम बातोंमें साझीदार बनाना चाहिये और अिस प्रकार अीश्वर तक पहुंचनेके समूचे मानव-प्रयत्नमें वृद्धि करनी चाहिये।

गांधीजीने अपना कथन जारी रखते हुअे कहा विचार कीजिये कि आप परस्पर-सहिष्णुताकी स्थिति स्वीकार करने जा रहे हैं या सब

धर्मोंकी समानताकी। मेरी स्थिति यह है कि मुझमें सब बड़े बड़े धर्म समान हैं। हमको अपने धर्मकी तरह दूसरे धर्मोंके लिये भी स्वाभाविक आदर होना चाहिये। ध्यान रहे कि मैं परस्पर-सहिष्णुता नहीं परंतु सब धर्मोंके लिये समान आदर चाहता हूं।"

हरिजन २८-११-'३६, पृ० ३३०

अन्तःकरण सबके लिये अेक ही वस्तु नहीं है। अिसलिये यद्यपि व्यक्तिगत आचरणके निर्णयके लिये वह अच्छा मार्गदर्शक है लेकिन सब पर वही आचरण लादना सबके अन्तःकरणकी स्वतंत्रतामें असह्य हस्तक्षेप करना होगा।

यंग अिंडिया २१-९-२६, पृ० ३३४

१८

बेहतर तरीका

सत्य और अहिंसाका प्रचार पुस्तकों द्वारा अुतना नहीं हो सकता जितना अिन सिद्धान्तोंके अनुसार सचमुच जीवन बिताकर किया जा सकता है। सही तरीके पर बिताया हुआ जीवन पुस्तकोंसे कहीं ज्यादा अच्छा है।

हरिजन १३-५-३९ पृ० १२२

दीर्घ अध्ययन और अनुभवके बाद मैं अिस नतीजे पर पहुंचा हूं कि (१) सब धर्म सच्चे हैं (२) सब धर्मोंमें कुछ-न-कुछ भूल है, (३) सब धर्म मुझे लगभग अुतने ही प्रिय हैं जितना मेरा अपना हिन्दू धर्म है, क्योंकि सारे मानव प्राणी मेरे लिये अपने निकट सम्बंधियोंके जैसे ही प्रिय होने चाहिये। दूसरे धर्मोंके लिये मुझे वैसा ही पूज्य भाव है जैसा मेरे अपने धर्मके लिये है।

साबरमती पृ० १७ १९२८

१९

औीश्वर है

अगर हमारा अस्तित्व है अगर हमारे माता पिता और अुनके माता-पिताका अस्तित्व रहा है तो सारी सृष्टिके पितामें विश्वास रखना अुचित ही है। अगर वह नहीं है तो हमारा कोओी ठिकाना नहीं। वह अेक होते हुअे भी अनेक है। वह अणुसे भी छोटा और हिमालयसे भी बड़ा है। वह सागरकी अेक बूंदमें भी समा जाता है और सातों समुद्रमें भी नहीं समा सकता। बुद्धि अुसको जाननेमें असमर्थ है। वह बुद्धिकी पहुंच या पकड़के परे है। लेकिन अिस बातका ज्यादा विस्तार करनेकी जरूरत नहीं। अिस विषयमें श्रद्धा अत्यावश्यक है। मेरा तर्क असंख्य अनुमान बना और बिगाड़ सकता है। कोओी नास्तिक मुझे वाद विवादमें पछाड़ सकता है। परन्तु मेरी श्रद्धा मेरी बुद्धिकी अपेक्षा अितनी तेज दौड़ती है कि मैं सारी दुनियाको चुनौती देकर कह सकता हूं कि औीश्वर है, था और सदा रहेगा।

परन्तु जो अुसकी हस्तीसे अिनकार करना चाहें अुन्हें वैसा करनेकी स्वतंत्रता है। वह दया और करुणाका धाम है। वह कोओी सांसारिक राजा नहीं जिसे अपनी सत्ता मनवानेको सेना चाहिये। वह हमें स्वतंत्रता देता है और फिर भी अुसकी करुणा अैसी है कि हम नतमस्तक हो जाते हैं और बाध्य होकर अुसकी अिच्छाका पालन करते हैं। परन्तु हममें से कोओी अुसकी मरजीके आगे झुकनेको तैयार न हो तो वह कहता है अच्छा! मेरा सूर्य तो तेरे लिअे फिर भी वैसा ही चमकता रहेगा मेरे बादल तेरे लिअे वैसे ही बरसते रहेंगे। मुझे अपना शासन मनवानेको तुम पर बलका प्रयोग करनेकी जरूरत नहीं। अैसे औीश्वरकी हस्तीमें अज्ञानी भले ही शंका करें। मैं अुन करोड़ों सयानोंमें

हूं जो मुझे मानते हैं और मुझे मुसके आगे झुकने और मुसका गौरव गानेमें कभी थकावट नहीं लगती।

यंग अिंडिया २१-१-२६, पृ० ३०-३१

अेक अैसी अनिर्वचनीय रहस्यमयी शक्ति है जो सर्वत्र व्याप्त है। मैं मुसे अनुभव करता हूं यद्यपि देखता नहीं हूं। यह अदृश्य शक्ति अपना अनुभव तो कराती है परंतु मुसका कोअी प्रमाण नहीं दिया जा सकता क्योंकि जिन वस्तुओंका मुझे अपनी अिंद्रियों द्वारा ज्ञान होता है मुन सबसे वह बहुत भिन्न है। वह अिन्द्रियोंकी पहुंचके बाहर है।

परन्तु अेक खास हद तक अीश्वरके अस्तित्वका बुद्धिके द्वारा भी साबित किया जा सकता है। साधारण मामलोंमें भी हम जानते हैं कि लोगोंको यह पता नहीं होता कि कौन मुन पर शासन करता है या क्यों करता है और कैसे करता है। फिर भी वे जानते हैं कि कोअी अैसी शक्ति अवश्य है जो मुन पर शासन करती है। अपने पिछले सालके मैसूरके दौरेमें मैं कभी गरीब देहातियोंसे मिला और मुनसे पूछने पर मुझे पता चला कि मुन्हें यह मालूम नहीं है कि मैसूरमें किसका राज्य है। मुन्होंने केवल अितना कहा कि किसी देवताका राज्य है। अगर मुन गरीब लोगोंका ज्ञान अपने राजाके बारेमें अितना सीमित है, तो मुझे —मैं ये गरीब लोग अपने राजासे जितने छोटे हैं मुसकी अपेक्षा अीश्वरसे अनेक गुना छोटा हूं—आश्चर्य न होना चाहिये अगर मैं राजाओंके राजा अीश्वरकी हस्तीको अनुभव न करूं। फिर भी जैसा मुन गरीब देहातियोंको मैसूरके बारेमें अनुभव होता था वैसा ही मुझे भी अवश्य अनुभव होता है कि विश्वमें व्यवस्था है हरअेक प्राणी और प्रत्येक वस्तु पर शासन करनेवाला अेक अटल नियम है। और यह कोअी अन्धा नियम नहीं है। क्योंकि सजीव प्राणियोंके आचरणको नियंत्रित करनेवाला कोअी नियम अन्धा नहीं हो सकता, और सर जगदीशचन्द्र बसुकी अद्भुत खोजोंसे अब तो यह भी साबित किया जा सकता है कि जड़ पदार्थोंमें भी जीवन है। प्राणियोंका शासन करनेवाला यह नियम ही अीश्वर है। नियम और नियामक अेक ही हैं। मुझे नियम या नियामकके बारेमें बहुत थोड़ा ज्ञान है, केवल अिसीलिये

में अुनके अस्तित्वसे अिनकार नहीं कर सकता। जैसे किसी पार्थिव शक्तिके अस्तित्वका अिनकार करनेसे या अुसके अज्ञानसे मेरा कोअी लाभ नहीं होगा अिसी तरह ओीश्वर और अुसके नियमको न माननेसे में अुसके अमलसे मुक्त नहीं हो जाअूंगा, जब कि जिस तरह किसी सांसारिक राज्यको स्वीकार कर लेनेसे अुसके अधीन जीवन आसान हो जाता है अुसी प्रकार दैवी सत्ताको नम्र होकर चुपचाप स्वीकार कर लेनेसे जीवनकी यात्रा सरल हो जाती है।

मैं अस्पष्ट तौर पर यह जरूर अनुभव करता हूं कि जब मेरे चारों ओर हर चीज हमेशा बदल रही है नष्ट हो रही है, तब अिस सारे परिवर्तनके पीछे कोअी चेतन शक्ति असी जरूर है जो बदलती नहीं है जो सबको धारण किये हुअे है, जो सर्जन करती है संहार करती है और फिर नया सर्जन करती है। यह जीवनदायी शक्ति या सत्ता ही ओीश्वर है। और चूंकि केवल अिन्द्रिया द्वारा दिखाअी देनेवाली अन्य कोअी भी चीज न तो स्थायी है और न हो सकती है, अिसलिअे अेकमात्र ओीश्वरका ही अस्तित्व है।

यह शक्ति कल्याणकारी है या अकल्याणकारी? मैं देखता हूं कि यह सर्वथा कल्याणकारी है क्योंकि मुझे दिखाअी देता है कि मृत्युके बीच जीवन कायम रहता है असत्यके बीच सत्य टिका रहता है और अंधकारके बीच प्रकाश स्थिर रहता है। अिससे मुझे पता चलता है कि ओीश्वर जीवन है, सत्य है और प्रकाश है। वही प्रेम है। वही परम मंगल है।

परंतु जो ओीश्वर केवल बुद्धिको संतोष देता है वह ओीश्वर नहीं है। ओीश्वर तभी ओीश्वर है जब वह हृदय पर शासन करता हो और अुसका रूपान्तर करता हो। अुसे अपने भक्तके छोटेसे छोटे काममें प्रगट होना चाहिये। यह तभी हो सकता है जब पांचों अिन्द्रियोंसे होनेवाले ज्ञानसे भी अधिक वास्तविक रूपमें अुसका निश्चित साक्षात्कार सिद्ध किया जाय। अिन्द्रियोंसे होनेवाला ज्ञान हमें कितना ही वास्तविक दिखाअी दे तो भी वह झूठा और भ्रमपूर्ण हो सकता है और अकसर होता है। लेकिन अतीन्द्रिय ज्ञान अचूक होता है। जिसका प्रमाण बाहरी प्रमाणसे नहीं मिलता परंतु जिन लोगोंने ओीश्वरके वास्तविक अस्तित्वको अपने

भीतर अनुभव किया है अुसके आचरण और चरित्रमें होनेवाले परिवर्तनसे मिलता है।

अैसा प्रमाण सब देशोंमें होनेवाले पैगम्बरों और ऋषियोंकी अटूट परंपराके अनुभवोंमें पाया जाता है। अिस प्रमाणको अस्वीकार करना अपने आपको न माननेके बराबर है।

अिस तरहके साक्षात्कारकी पूर्वशर्त है — अटल श्रद्धा। जो व्यक्ति अपने अन्दर अीश्वरकी अुपस्थितिके सत्यकी जांच करना चाहता है, अुसे पहले अपने भीतर जीवित श्रद्धाका विकास करना चाहिये। श्रद्धाके द्वारा ही वह अैसा कर सकता है। और चूंकि स्वयं श्रद्धा किसी बाह्य प्रमाणसे साबित नहीं की जा सकती अिसलिये सबसे सुरक्षित मार्ग यह है कि संसारके नैतिक शासनमें और अिसलिये नैतिक कानूनमें सत्य और प्रेमके नियमकी सर्वोपरितामें, विश्वास किया जाय। जहां सत्य और प्रेमके विपरीत जानेवाली सब बातोंका सर्वथा त्याग करनेका स्पष्ट संकल्प है वहां श्रद्धा रखना सबसे सुरक्षित अुपाय है।

किसी बौद्धिक अुपायसे मैं दुनियामें बुराअीके अस्तित्वका कारण नहीं समझा सकता। अैसा करनेकी अिच्छा रखना मानो अीश्वरकी बराबरी करना है। अिसलिये मैं नम्रतापूर्वक यह मान लेता हूं कि बुराअीका अस्तित्व है। और मैं अीश्वरको अत्यन्त सहनशील और धैर्य वाली अिसीलिये कहता हूं कि वह संसारमें बुराअी होने देता है। मैं जानता हूं कि अुसमें बुराअी नहीं है। अुसने बुराअी पैदा तो की है, परंतु वह अुससे अछूता है।

मैं यह भी जानता हूं कि अगर मैं प्राणोंकी बाजी लगाकर भी बुराअीके खिलाफ युद्ध नहीं करूंगा तो मुझे अीश्वरका ज्ञान कभी नहीं होगा। मेरा यह विश्वास मेरे अपने ही नम्र और सीमित अनुभवोंसे दृढ़ हुआ है। मैं जितना शुद्ध बननेकी कोशिश करता हूं अुतनी ही अीश्वरके साथ निकटता अनुभव करता हूं। जब मेरी श्रद्धा आजकी तरह नाममात्रकी न रहकर हिमालयकी भांति अचल और अुसके शिखर पर चमकनेवाली बर्फकी तरह धवल और तेजस्वी हो जायगी तब मैं अुसके साथ कितनी अधिक निकटता अनुभव करूंगा? तब तक मैं अपने पत्रलेखकसे कहूंगा

कि यह कार्डिनल न्यूमैनके साथ अुसका यह अनुभवसे निकला हुआ भजन गाये

हे प्रेमल ज्योति चारों ओर घिरे हुअे अंधकारमें
तू मुझे रास्ता बता।
रात अंधेरी है और मैं घरसे दूर हूं।
तू मुझे रास्ता बता।
तू मेरे पैरोंको थामे रह मैं दूरका दृश्य देखना नहीं चाहता
मेरे लिये तो अेक कदम ही काफी है।"

यंग अिंडिया ११-१०-२८ पृ० ३४०-४१

बुद्धिवादी बड़े अच्छे आदमी होते हैं। परंतु बुद्धिवाद जब सर्व शक्तिमान होनेका दावा करता है, तब अेक भयंकर राक्षस हो जाता है। बुद्धिको सर्व-शक्तिमान मान लेना अुतनी ही बुरी मूर्तिपूजा है जितनी पेड़-पत्थरको अीश्वर मानकर पूजना। मैं बुद्धिके दमनका प्रतिपादन नहीं कर रहा हूं परंतु हमारे भीतर जो वस्तु बुद्धिको पवित्र बनाती है अुसे अुचित रूपमें स्वीकार कर लेनेकी हिमायत करता हूं।

यंग अिंडिया १४-१०-२६, पृ० ३५९

यह कहना बहुत आसान है कि मेरा अीश्वरमें विश्वास नहीं है, क्योंकि अीश्वर अपने बारेमें बेधड़क होकर सब-कुछ कहने देता है। वह हमारे कर्मोंको देखता है। अुसका कानून भंग करनेके साथ अिस भंगका अनिवार्य दंड लगा हुआ है, लेकिन यह दंड बदला लेनेवाला नहीं परन्तु शुद्ध करनेवाला होता है।

यंग अिंडिया २३-९-२६ पृ० ३३३

अीश्वरका स्वरूप

मैं अीश्वरको कोअी व्यक्ति नहीं मानता। मेरे लिअे सत्य ही अीश्वर है। और अीश्वरका कानून तथा अीश्वर अुस अर्थमें भिन्न वस्तुअें या तथ्य नहीं हैं, जिस अर्थमें कोअी दुनियावी राजा और अुसका कानून अलग अलग होते हैं। चूंकि अीश्वर स्वयं कानून है, अिसलिअे यह कल्पना नहीं की जा सकती कि वह कानूनको तोड़ता होगा। अिस लिअे वह हमारे कार्योंका नियंत्रण नहीं करता और स्वयं हट नहीं जाता। जब हम कहते हैं कि वह हमारे कार्योंका नियंत्रण करता है तब हम केवल मानव-भाषाका व्यवहार करते हैं और अुसे सीमित बना देते हैं। अन्यथा वह और अुसका कानून सब जगह विद्यमान है और सबका शासन करते हैं। अिसलिअे मैं अैसा नहीं समझता कि वह हमारी हर प्रार्थनाका हर तफसीलमें अुत्तर देता है। परंतु अिसमें शक नहीं कि वह हमारे कार्योंका नियंत्रण करता है और मैं अक्षरशः मानता हूं कि घासका अेक पत्ता भी अुसकी मरजीके बगैर न तो अुगता है और न हिलता है। हमें जो अिच्छा-स्वातंत्र्य प्राप्त है, वह जहाजपर भरे जहाजके मुसाफिरके अिच्छा-स्वातंत्र्यसे भी कम है।

"अीश्वरसे लौ लगानेमें क्या आपको स्वतंत्रताकी भावना अनुभव होती है?"

हां होती है। तब मुझे वह पराधीनता अनुभव नहीं होती जो यात्रियोंसे भरी नाव पर बैठे हुअे यात्रीको होती है। यद्यपि मैं जानता हूं कि मेरी स्वतंत्रता अेक मुसाफिरकी स्वतंत्रतासे भी कम है, फिर भी मैं अुसकी कदर करता हूं, क्योंकि गीताका यह अुपदेश मेरी रग रगमें समा गया है कि मनुष्य स्वयं ही अिस अर्थमें अपने भाग्यका विधाता है कि अुसे अिस स्वतंत्रताका अपनी अिच्छानुसार अुपयोग करनेकी स्वतंत्रता है। परंतु परिणामोंका नियंता वह नहीं है। जहां वह अपनेको नियंता मानता है वहीं वह ठोकर खाता है।

हरिजन २३-३-'४० पृ० ५५

परमेश्वर पूर्ण है और सर्व-शक्तिमान है फिर भी वह लोकतमका कितना बड़ा हिमायती है। हमारा कितना छल-कपट और कितना अन्याय वह सहता है। हमारे अन्दर और बाहर प्रत्येक अणुमें वह व्याप्त है फिर भी अुसके ही रचे हुअे हम तुच्छ प्राणी अुसके अस्तित्वमें शंका अुठाते हैं और वह हमें अैसा करने देता है — अैसी अुसकी सहनशक्ति है। लेकिन अुसने जिसे वह चाहे अुसे अपना दर्शन देनेका अधिकार अपने पास सुरक्षित रखा है। अुसके हाथ पांव या कोअी दूसरी अिन्द्रियां नहीं हैं किन्तु जिसे वह अपना दर्शन देना चाहे वह मनुष्य अुसे देख सकता है।

हरिजन १४–११–३६, पृ० ३१६

शुद्ध शास्त्रीय दृष्टिसे दुनियामें हम जो भलाअी और बुराअी देखते हैं अुन दोनोंकी जड़में अीश्वर ही है। डॉक्टरका चाकू और कातिलका छुरा दोनों वही चलवाता है। परन्तु अिसके बावजूद मानवकी दृष्टिसे तो भलाअी और बुराअी अेक-दूसरेसे बिलकुल भिन्न और मेल न खाने वाली वस्तुअें हैं। वे प्रकाश और अंधकारकी खुदा और शैतानकी प्रतीक हैं।

हरिजन २०–२–३७ पृ० ९

प्रकृतिके नियम अटल हैं अपरिवर्तनीय हैं और प्रकृतिके नियमोंके भंग या अवरोधके अर्थमें कोअी चमत्कार नहीं होता। परन्तु हम तुच्छ प्राणी ठहरे। हम तरह तरहकी कल्पनायें करते हैं और अपनी सीमाओंको अीश्वर पर थोपते हैं।

हरिजन १७–४–३७, पृ० ८७

मेरी दृष्टिमें अीश्वर सत्य और प्रेम है अीश्वर नीति और सदाचार है अीश्वर अभय है। अीश्वर प्रकाश और जीवनका स्रोत है, फिर भी अिन सबसे अूपर और परे है। अीश्वर अन्तरात्मा है। वह नास्तिककी नास्तिकता भी है क्योंकि अपने निस्सीम प्रेमके कारण वह अुसे भी रहने

कहना काफ़ी है कि जिन लोगोंने ये प्रयोग किये हैं वे जानते हैं कि हरअेकका अन्तरात्माकी आवाज़ सुननेका दावा करना अुचित नहीं है। लेकिन आजकल हरअेक आदमी यम-नियमकी कोअी भी तालीम लिये बिना अपने अन्तःकरणकी आवाज़के अधिकारका दावा करता है। अिसके फलस्वरूप संसारको जितना असत्य प्रदान किया जा रहा है कि वह हैरान है। अिसलिअे म आपसे सच्ची नम्रताके साथ अितना ही निवेदन कर सकता हूं कि सत्यकी प्राप्ति अैसे किसी व्यक्तिको नहीं हो सकती अिसमें नम्रताकी विपुल भावना न हो। अगर आप सत्यके महासागरके तल पर तैरना चाहते हैं तो आपको शून्य बन जाना होगा। अिससे आगे मैं अिस मोहक मार्ग पर अिस समय नहीं बढ़ सकूंगा।

यंग अिंडिया, ३१–१२–३१, पृ० ४२७–२८

परमेश्वरकी व्याख्यायें अनगिनत हैं क्योंकि अुसकी विभूतियां भी अनगिनत हैं। ये विभूतियां मुझे आश्चर्यचकित करती हैं। क्षणभरके लिअे ये मुझे मुग्ध भी करती हैं। किन्तु मैं पुजारी तो सत्यरूपी परमेश्वरका ही हूं। यह सत्य मुझे मिला नहीं है, लेकिन मैं अिसका शोधक हूं। अिस शोधके लिअे मैं अपनी प्रियसे प्रिय वस्तुका त्याग करनेको तैयार हूं, और मुझे यह विश्वास है कि अिस शोधरूपी यज्ञमें अिस शरीरको भी होमनेकी मेरी तैयारी है और शक्ति है। लेकिन जब तक मैं अिस सत्यका साक्षात्कार न कर लूं तब तक मेरी अन्तरात्मा जिसे सत्य समझती है, अुस काल्पनिक सत्यको अपना आधार मानकर, अपना दीपस्तम्भ समझकर, अुसके सहारे मैं अपना जीवन व्यतीत करता हूं।

यद्यपि यह मार्ग तलवारकी धार पर चलने जैसा है, तो भी मुझे यह सरलसे सरल लगा है। अिस मार्ग पर चलते हुअे अपनी भयंकर भूलें भी मुझे नगण्य-सी लगी हैं, क्योंकि वैसी भूलें करने पर भी मैं बच गया हूं और अपनी समझके अनुसार आगे बढ़ा हूं। दूर-दूरसे विशुद्ध सत्यकी — अीश्वरकी — झांकी भी मैं कर रहा हूं। मेरा यह विश्वास दिन-प्रति-दिन बढ़ता जाता है कि अेक सत्य ही है, अुसके सिवा दूसरा कुछ भी अिस जगतमें नहीं है।

साथ ही, मैं यह भी अधिकाधिक मानने लगा हूं कि जितना कुछ मेरे लिये सम्भव है अुतना अेक बालकके लिअे भी सम्भव है और अिसके लिअे मेरे पास सबल कारण हैं। सत्यकी शोधके साधन जितने कठिन हैं अुतने ही सरल भी हैं। वे अभिमानीको असम्भव मालूम होंगे और अेक निर्दोष बालकको बिलकुल सम्भव लगेंगे। सत्यके शोधकको रजकणसे भी नीचे रहना पड़ता है। सारा संसार रजकणोंको कुचलता है। पर सत्यका पुजारी तो जब तक जितना अल्प नहीं बनता कि रजकण भी अुसे कुचल सकें तब तक अुसके लिअे स्वतंत्र सत्यकी झांकी भी दुर्लभ है।

मेरे समान अनेकोंका क्षय चाहे हो पर सत्यकी जय हो।

आत्मकथाकी प्रस्तावना पृ० ८–९ १९५७

२१

अीश्वरमें मेरी निष्ठा

मुझे जितना विश्वास अिस बातका है कि आप और मैं अिस कमरेमें बैठे हैं अुससे कहीं ज्यादा विश्वास अीश्वरके अस्तित्वका है। मैं यह भी कह सकता हूं कि मैं हवा और पानीके बिना रह सकता हूं लेकिन अीश्वरके बिना नहीं रह सकता। आप मेरी आंखें निकाल लें, परन्तु अुससे मैं मरूंगा नहीं मेरी नाक काट लीजिये अुससे भी मैं नहीं मरूंगा। लेकिन आप अीश्वरमें मेरा विश्वास मिटा दीजिये तो मैं मर जाअूंगा — मेरा प्राण चला जायगा। आप अिसे अन्धविश्वास कह सकते हैं परन्तु मैं स्वीकार करता हूं कि यह अन्धविश्वास मेरा अटूट सहारा है। बचपनमें डरके या डरका कारण होने पर मैं रामका नाम लेता था अुस समय मुझे जो बल रामनामसे मिलता था वही अब अिस विश्वाससे मिलता है।

हरिजन १४–५–३८ पृ० १०९

यंत्रकी तरह् बन जाना सबसे कठिन होता है। फिर भी किसीको शून्य बनना हो, तो पूर्णताकी *भिच्छा रखनेवालेको ठीक वैसा ही बनना होगा।* यंत्र और मनुष्यमें बड़ा भारी भेद यह है कि यंत्र जड़ है और मनुष्य पूरी तरह चेतन है और अुस महान शिल्पकारके हाथमें जान-बूझकर यंत्र बनता है। श्रीकृष्ण तो साफ शब्दोंमें कहते हैं कि सब प्राणी यंत्रके पुर्जोंकी तरह अीश्वरके चलाये चलते हैं।

बापूके पत्र मीराके नाम पृ० २४७ १९५१

मैं भिस अत्यन्त कठोर स्वामीका आधी शताब्दीसे अधिक स्वेच्छा-प्रेरित दास रहा हूं। जैसे जैसे समय बीतता गया है वैसे वैसे अुसकी आवाज मुझे अधिकाधिक स्पष्ट सुनाभी पड़ती गयी है। मेरी अत्यंत *अंधकारपूर्ण घड़ियोंमें भी अुसने कभी मेरा साथ नहीं छोड़ा।* अुसने अक्सर स्वयं मुझसे मेरी रक्षा की है और मेरे पास जरा भी स्वाधीनता नहीं रहने दी। मैंने अुसके प्रति जितना अधिक समर्पण किया अुतना ही अधिक आनंद मुझे प्राप्त हुआ है।

हरिजन ६–५–३३, पृ० ४

अीश्वर हमारे साथ है और वह हमारी संभाल भिस तरह करता है मानो अुसे और किसीकी चिन्ता करनी ही नहीं है। वह कैसे होता है सो मैं नहीं जानता। यह जरूर जानता हूं कि अैसा निश्चित रूपसे होता ही है। जिनमें यह श्रद्धा है अुनके कन्धोंसे सारी चिन्ताओंका भार अुठ जाता है।

बापूके पत्र मीराके नाम, पृ० २७३–७४, १९५१

हारसे मेरा दिल नहीं टूट सकता। वह मुझे दुख ही कर सकती है। मैं जानता हूं कि अीश्वर मुझे रास्ता दिखायेगा।

यंग जिंडिया १–७–'२४ पृ० २१८

अेक क्षण भी अैसा नहीं जाता जब मुझे यह महसूस न होता हो कि भगवान साक्षीकी तरह सामने मौजूद है और अुसकी आंखसे

कोअी चीज बच नहीं सकती। अिस सर्वदा वर्तमान साक्षीके साथ मैं सतत लौ लगाये रहनेकी कोशिश करता हूं।

मेरे जीवनमें कोअी पल भी अैसा याद नहीं आता जब मुझे यह महसूस हुआ हो कि अीश्वरने मेरा साथ छोड़ दिया है।

हरिजन २४–१२–३८ पृ० ३९५

अगर मुझे अपने भीतर अीश्वरके अस्तित्वका भान न हो तो मैं रोज अितना दुःख और नैराश्य देखता हूं कि मैं पागल बन जाअूं और मुझे हुगलीकी शरण लेना पड़े।

यंग अिंडिया ६–८–२५, पृ० २७२

जैसे-जैसे समय बीतता है वैसे-वैसे मैं रोम-रोममें अुसका सजीव अस्तित्व अनुभव करता हूं। यह अनुभव न हो तो मैं पागल हो जाअूं। मेरे मनकी शान्तिको भंग करनेवाली कितनी ही बातें होती हैं। कितनी ही घटनायें अैसी होती हैं जो अीश्वरके अस्तित्वका भान न हो तो मुझे धड़से हिला डालें। परन्तु वे हो जाती हैं और मुझ पर लगभग अुनका कोअी असर नहीं पड़ता।

बापूके पत्र मीराके नाम पृ० २७५ १९५१

मैं हर मानव प्राणीके लिअे यह संभव मानता हूं कि वह अुस सुखद और अवर्णनीय स्थितिको प्राप्त कर सकता है जिसमें अुसे अपने भीतर अीश्वरके सिवा और किसी चीजका अस्तित्व महसूस ही न हो।

यंग अिंडिया १७–११–२१, पृ० ३६८

२२

अन्तर्नाद

अीश्वरकी आवाज सुननेका मेरा दावा कोअी नया दावा नहीं है। दुर्भाग्यसे मुझे परिणामोंके सिवा यह दावा साबित करनेका और कोअी तरीका मालूम नहीं है।

हरिजन, ६–५–'३३, पृ० ४

पहला प्रश्न, जिसने बहुतोंको चक्करमें डाल दिया है अीश्वरकी आवाजके बारेमें है। वह क्या थी? मैंने क्या सुना? क्या मैंने किसी व्यक्तिको देखा? अगर नहीं तो वह आवाज मुझ तक कैसे पहुंची? ये ठीक सवाल हैं।

मेरे लिअे अीश्वरकी अन्तःकरणकी या सत्यकी आवाज या जिसे मैं अन्तर्नाद कहता हूं — सब अेक ही अर्थके सूचक शब्द हैं। मैंने अीश्वरकी कोअी आकृति नहीं देखी। अुसकी मैंने कभी कोशिश नहीं की क्योंकि मैंने हमेशा अीश्वरको निराकार माना है। मैंने जो आवाज सुनी वह दूरसे आ रही मालूम होती थी पर साथ ही बिलकुल समीप भी जान पड़ती थी। वह आवाज अैसी असंदिग्ध थी जैसे कोअी मनुष्य प्रत्यक्ष हमसे कुछ कह रहा हो। अुसे किसी तरह टाला नहीं जा सकता था। जिस समय मैंने अुसे सुना, मैं कोअी सपना नहीं देख रहा था। मैं बिलकुल जाग्रत था। आवाज सुननेके पहले मेरे हृदयमें भारी कम्पन चल रहा था। अेकाअेक यह आवाज सुननेमें आयी। मैंने अुसे ध्यानसे सुना। मुझे निश्चय हो गया कि वह अंतरात्माकी ही आवाज है और मेरा व्याकुल चित्त शान्त हो गया। मैंने निश्चय कर लिया अनशनका दिन और अुसके आरम्भका समय तय हो गया। मेरा हृदय अुल्लाससे भर गया। यह सब रातके ११ और १२ के बीचमें हुआ। मेरा मन ताजा हो गया और अुसके बारेमें मैं वह टिप्पणी लिखने लगा जो कि पाठकोंने देखी ही होगी।

क्या मैं अिस बातका और कोअी प्रमाण दे सकता हूं कि यह अन्तरात्माकी आवाज ही थी और मेरे अुत्तप्त मस्तिष्ककी कोअी कल्पना-तरंग नहीं थी? जो विश्वास नहीं करता अैसे शंकाशीलके लिअे मेरे पास

और कोअी प्रमाण नहीं है। अुसकी अिच्छा हो तो वह कह सकता है कि यह सब भ्रम है और मैं आत्म-वंचनाका शिकार हुआ हूं। मुमकिन है अैसा ही हुआ हो। मैं अुसके विरुद्ध कोअी प्रमाण नहीं दे सकता। लेकिन यह मैं अवश्य कह सकता हूं कि मेरे खिलाफ सारी दुनिया अेकमतसे अभिप्राय दे तो भी मुझे अिस विश्वाससे नहीं हटा सकती कि मैंने जो आवाज सुनी वह अीश्वरकी ही आवाज थी।

लेकिन कुछ लोग तो अैसा मानते हैं कि अीश्वर स्वयं हमारी कल्पनाकी अुपज है। अगर यह विचार मान लिया जाय तब तो कुछ भी सत्य नहीं है, सब-कुछ हमारी कल्पनाकी ही अुपज है। मगर तब भी जब तक मेरे अूपर मेरी कल्पनाकी सत्ता है तब तक तो मैं अुसके अधीन रहकर ही व्यवहार कर सकता हूं। अत्यन्त वास्तविक वस्तुअें भी सापेक्ष-रूपमें ही वास्तविक हैं। मेरे लिअे तो मैंने जो आवाज सुनी वह मेरी हस्तीसे भी ज्यादा वास्तविक थी। अुसने मुझे कभी धोखा नहीं दिया है और दूसरोंका भी यही अनुभव है।

और अिस आवाजको जो चाहे सुन सकता है। वह हरअेकके अन्दर है। लेकिन दूसरी चीजोंकी तरह अुसके लिअे भी निश्चित पूर्व-तैयारीकी आवश्यकता है।

हरिजन ८–७–'३३ पृ० ४

जिस क्षण मैं अपने अन्दर ध्वनित होनेवाली भगवानकी अिस शान्त आवाजको — अपने अन्तर्नाद को दबा दूंगा अुसी क्षणसे मेरी अुप-योगिता मिट जायगी।

यंग अिंडिया, ३–१२–'२५ पृ० ४२२

जहां तक मुझे मालूम है किसीने अिस बात पर शंका नहीं की है कि अन्तर्नाद कुछ लोगोंको सुनाअी पड़ सकता है। और यदि अन्त-र्नादके नाम पर बोलनेका किसी अेक भी व्यक्तिका दावा सच्चा ठहरे तो अिसमें जगतका लाभ ही है। यह दावा बहुतसे करेंगे किन्तु वे सब अुसे सत्य सिद्ध नहीं कर सकेंगे। लेकिन झूठा दावा करनेवालोंको रोकनेके लिअे अुस दावेको दबाया नहीं जा सकता और दबाना नहीं चाहिये। अन्तर्नादका दावा यदि कअी लोग सचमुच कर सकें तो

जिसमें कोअी आपत्ति नहीं है। लेकिन दुर्भाग्यवश दम्भका कोअी अिलाज नहीं है। बहुतसे लोग सद्गुणोंका ढोंग और दिखावा कर सकते हैं, अिसलिअे अुन्हें दबाकर रखना ठीक नहीं हो सकता। अन्तर्नादके नाम पर बोलनेका दावा करनेवाले लोग सारी दुनियामें हमेशा रहे हैं। लेकिन अुनकी स्वल्पकालिक प्रवृत्तियोंसे दुनियाका कोअी नुकसान नहीं हुआ है। कोअी मनुष्य अन्तर्नाद सुन सके, अुसके पहले अुसे लंबी और कठोर साधना करनी पड़ती है। और जो चीज सुनायी पड़ती है वह सचमुच अन्तर्नाद ही होती है तब अुसे पहचाननेमें भूल हो ही नही सकती। कोअी दुनियाको चिरकाल तक धोखा नहीं दे सकता। अिसलिअे मेरे जैसा अल्प मनुष्य अपनी प्रामाणिक बात कहनेमें संकोच नही करता और जब अुसे विश्वासपूर्वक लगता है कि अुसने अन्तर्नाद सुना है तब अुसके नाम पर बोलनेकी हिम्मत करता है, जिस कारणसे दुनियामें अधाधुंधी मचनेका कोअी भय नहीं है।

हरिजन १८–३–३३, पृ० ८

मनुष्य भूल करनेवाला प्राणी है। वह कभी निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता कि जो कुछ वह करता है सब ठीक ही है। जिसे वह अपनी प्रार्थनाका अुत्तर समझ सकता है वह अुसके अहंकारकी प्रतिध्वनि भी हो सकती है। अचूक पथप्रदर्शनके लिअे मनुष्यका हृदय पूरी तरह पवित्र होना चाहिये जो बुराअीकी बात सोच ही न सकता हो। मैं अैसा कोअी दावा नही कर सकता। मैं तो भूलें करनेवाला पर साथ ही सचर्ष और प्रयत्न करनेवाला अेक अपूर्ण आदमी हूं।

यंग अिंडिया २५–९–२४ पृ० ३११

चूंकि मैंने आत्मशुद्धि प्राप्त करनेके लिअे अथक प्रयत्न किया है, अिसलिअे मुझमें अन्तर्नादको ठीक ठीक और साफ साफ सुननेकी थोड़ीसी शक्ति आ गयी है।

दि अेपिक फास्ट ले०— प्यारेलाल पृ० ३४ १९३२

मेरा दृढ़ विश्वास है कि वह हमें रोज जगाता है परंतु हम अंतर्नादके प्रति अपने कान बन्द कर लेते हैं।

यंग अिंडिया, २५–५–२१ पृ० १६२

२३
प्रेमधर्म

जहां प्रेम है वहां अीश्वर भी है।

सत्याग्रह अिन साअुथ अफ्रीका पृष्ठ ११० १९५०

अहिंसा अत्यन्त अूंची कोटिका सक्रिय बल है। वह आत्मबल अथवा हमारे भीतर रहनेवाला अीश्वरका बल है। हम अहिंसाकी साधना जितनी अधिक कर लेंगे अुतने ही अधिक अीश्वरके निकट पहुंच जायेंगे।

हरिजन १२–११–३८, पृ० ३२६

वैज्ञानिक हमें बताते हैं कि हमारी यह पृथ्वी जिन परमाणुओंसे बनी है अुनमें अुन्हें अेक-दूसरेके साथ बांध रखनेवाली शक्ति न हो तो यह चूर चूर हो जाय और हमारा अस्तित्व मिट जाय। यह शक्ति जिस तरह जड़ पदार्थमें है अुसी तरह सारे चेतन प्राणियोंमें भी होनी चाहिये। चेतन प्राणियोंको अेक-दूसरेसे बांध रखनेवाली अुन्हें जोड़ने और अेक करनेवाली अिस शक्तिका नाम है — प्रेम। अुसे हम पिता पुत्रमें भाअी-बहनमें और मित्र-मित्रमें देखते हैं। परन्तु हमें प्राणिमात्रमें अुसका अुपयोग करना सीखना है और अुसके अुपयोगमें ही अीश्वरका हमारा ज्ञान समाया हुआ है।

यंग अिंडिया ५–५–२० पृ० ७

गांधीजीने कहा मनुष्यका सर्वोच्च प्रयत्न अीश्वरकी प्राप्तिके लिअे होना चाहिये। वह मनुष्यके हाथोंसे बनाये हुअे मन्दिरों या मूर्तियों या पूजाके स्थानोंमें नहीं मिल सकता और न वह व्रत-अुपवासोंसे ही मिल सकता है। अीश्वर प्रेमके द्वारा ही प्राप्त हो सकता है। वह प्रेम सांसारिक नहीं दैवी होना चाहिये।

हरिजन २३–११–४७ पृ० ४२५

मेरा दावा है कि अब भी, यद्यपि समाज-रचना अहिंसाकी सज्ञान स्वीकृति पर आधारित नहीं है, सारी दुनियामें मानव-जातिका जान-माल अेक-दूसरेकी अप्रकट सम्मति पर ही कायम है। मगर अैसा न होता तो कमसे कम आदमी और सबसे ज्यादा क्रूर आदमी ही बचे होते। मगर बात अैसी नहीं है। परिवार प्रेमके बंधनमें बंधे रहते हैं और यही बात कथित सभ्य समाजमें राष्ट्र कहलानेवाले समूहोंकी है। अितना ही है कि वे अहिंसा-धर्मकी प्रभुताको स्वीकार नहीं करते, अिसलिअे यह निष्कर्ष निकलता है कि अुन्होंने अिसकी विशाल संभावनाओंका अनुसन्धान नहीं किया है। यह कहना गलत न होगा कि अब तक हमने निरी जड़तावश ही यह मान रखा है कि सम्पूर्ण अहिंसा केवल अुन्हीं थोड़ेसे लोगोंके लिअे सम्भव है, जो अपरिग्रह और अुसके साथके दूसरे व्रतोंको ग्रहण करें। यह सही है कि निष्ठावान भक्त ही शोधका काम जारी रख सकते हैं और समय समय पर मनुष्य जीवनके अिस महान शाश्वत धर्मकी नअी नअी संभावनायें बताते रह सकते हैं। परंतु यदि यह सच्चा धर्म है तो यह सबके लिअे कल्याणकारक होगा। हम जो अनेक असफलतायें देखते हैं, वे अुस धर्मकी नहीं परंतु अुसके अनुयायियोंकी हैं जिनमें से बहुतसे यह भी नहीं जानते कि वे — अुनकी अिच्छा हो या न हो — अिस धर्मके अधीन हैं। जब कोअी माता अपने बालकके लिअे मरती है तब वह अज्ञात रूपमें अुस धर्मका पालन करती है। मैं पिछले ५० वर्षसे यह प्रतिपादन कर रहा हूं कि अिस धर्मको ज्ञानपूर्वक स्वीकार करना चाहिये और असफलताओंके बावजूद अुत्साहपूर्वक अुस पर अमल करना चाहिये। ५० वर्षके कार्यने अद्भुत परिणाम दिखाये हैं और मेरे विश्वासको दृढ़ किया है।

हरिजन, २२-२-'४२ पृ० ४८

मैंने अिस पत्रमें अपने लेखोंमें यह कहा है कि स्त्री अहिंसाका अवतार है। अहिंसाका अर्थ है असीम प्रेम और असीम प्रेमका अर्थ है कष्ट सहनेकी असीम क्षमता। मनुष्यकी जननी स्त्रीके सिवा अधिकसे अधिक मात्रामें अिस क्षमताका परिचय कौन देता है? जब वह ९ महीने अुसे पेटमें रखकर अपने रक्तसे अुसका पालन करती है और अिससे होनेवाले

कष्टमें आनन्द अनुभव करती है तब वह अपनी छिपी क्षमताका परिचय देती है। प्रसव-पीड़ासे अधिक और कौनसा कष्ट हो सकता है? परंतु सृजनके आनन्दमें वह अुस कष्टको भूल जाती है। और दिन-दिन अपने बच्चेको बढ़ता हुआ देखनेके लिये कौन कष्ट अुठाता है? यह प्रेम स्त्री सारी मानव-जातिको क्यों न प्रदान करे? वह क्यों न भिसे भूल जाय कि वह पुरुषकी वासनाका साधन कभी थी या हो सकती है? ज्यों ही वह अैसा करेगी त्यों ही अुसे पुरुषकी माताका गौरवशाली स्थान मिल जायगा और वह अुसकी निर्माता और मूक मार्गदर्शक बन जायगी। यह अुसीका काम है कि वह युद्ध-जर्जरित संसारको जो शान्तिके अमृतके लिये तड़प रहा है, शान्तिकी कला सिखाये।

हरिजन २४-२-'४०, पृ० १३

२४
त्यागमयी सेवा द्वारा प्रगट होनेवाला प्रेम
(क) सेवा

अीश्वरकी प्राप्तिका अेक ही अुपाय है हम अुसे अुसकी सृष्टिमें देखें और अुसके साथ अपनी अेकता साधें। यह सबकी सेवाके द्वारा ही हो सकता है। मैं समष्टिका ही अेक अविभाज्य अंग हूं और मानव-जातिसे अलग और कहीं मैं अुसे नहीं पा सकता। मेरे देशवासी मेरे निकटतम पड़ोसी हैं। वे अितने असहाय अितने साधनहीन और अितने जड़ हो गये हैं कि मुझे अुनकी सेवामें सारी शक्ति लगा देनी चाहिये। अगर मुझे यह भरोसा हो जाय कि अीश्वर मुझे हिमालयकी किसी गुफामें मिलेगा तो मैं तुरत वहांके लिये चल पड़ूंगा। परंतु मैं जानता हूं कि मनुष्य-समाजके सिवा वह और कहीं नहीं मिल सकता।

हरिजन २९-८-३६, पृ० २२६

अीश्वरने मेरा भाग्य भारतके लोगोंके साथ जोड़ दिया है। अतः यदि मैं अुनकी सेवा न करूं तो अपने विधातासे द्रोह करूंगा। और

अगर मैं अुनकी सेवा करना न जानूं, तो मनुष्य-जातिकी सेवा करना मुझे कभी न आयेगा।

यंग अिंडिया १८–९–२५ पृ० ३११

और चूंकि मैं मानता हूं कि अीश्वर बड़ों और बलवानोंकी अपेक्षा दलितों और दुर्बलोंमें ही अधिक पाया जाता है अिसलिअे मैं अिनके बराबर होनेकी कोशिश कर रहा हूं। अुनकी सेवा किये बिना यह संभव नहीं है। अिसीलिअे दलित वर्गोंकी सेवाके लिअे मेरी अितनी व्याकुलता है। और चूंकि राजनीतिमें पड़े बिना मैं यह सेवा नहीं कर सकता, अिसीलिअे मैं राजनीतिमें पड़ा हूं।

यंग अिंडिया ११–९–२४, पृ० २९८

अगर मुझे भारतके छोटेसे छोटे लोगोंके — और यदि मुझमें ताकत हो तो दुनियाके छोटेसे छोटे लोगोंके — दुःखके साथ अेकरूप होना है तो जो बालक मेरी देखभालमें हों अुनके पापोंके साथ मुझे अेकरूप बनना चाहिये। मुझे आशा है कि अत्यन्त नम्रतापूर्वक अैसा करते हुअे मुझे किसी दिन अीश्वरके — सत्यके — प्रत्यक्ष दर्शन हो जायेंगे।

यंग अिंडिया ३–१२–२५, पृ० ४२२

मैं आपको अेक सिद्ध कवच दूं। जब कभी आपको शंका हो या जब स्वार्थ आप पर छा जाय तब आप यह अुपाय आजमाअिये

जो गरीबसे गरीब और असहायसे असहाय मनुष्य आपने देखा हो अुसका चेहरा याद करके अपने मनमें पूछिये कि आप जो कदम अुठानेका विचार कर रहे हैं क्या वह अुस आदमीके किसी कामका होगा? क्या अुससे अुसे कोअी लाभ हो सकेगा? क्या अिस कदमसे अुसे अपने जीवन और भाग्य पर फिरसे नियंत्रण प्राप्त हो सकेगा? दूसरे शब्दोंमें क्या अिससे हमारे भूखे और आध्यात्मिक भोजनसे वंचित लाखों देशवासियोंको स्वराज्य मिल जायगा?

फिर आप देखेंगे कि आपकी शंकायें और आपका स्वार्थ काफूर हो जायगा।

दिस वाज़ बापू, ले० — आर के० प्रभु, पृ० ४८, १९५४

महात्माजीसे बातें करते समय अेक नौजवान अमरीकन मिशनरीने मुझसे पूछा "आप कौनसा धर्म मानते हैं और भारतके भावी धर्मका क्या स्वरूप होगा?"

अुनका अुत्तर बहुत संक्षिप्त था। अपने कमरेके दो बीमारोंकी तरफ अिशारा करते हुअे वे बोले "सेवा करना मेरा धर्म है। मैं आगेकी चिन्ता नहीं करता।"

विद बापू, ले०—आर० के० प्रभु, पृ० ४, १९५४

असहायोंकी सेवा ही धर्म है। अीश्वर हमारे सामने असहायों और दुखियोंके रूपमें प्रगट होता है।

बेशक मैंने नामधारी धर्मोंका पालन करनेसे कताओीको श्रेष्ठ समझा है। परंतु अिसका यह मतलब नहीं कि वे धर्म छोड़ दिये जायं। मेरा अभिप्राय अितना ही है कि जो धर्म सब धर्मोंके अनुयायियोंको पालन करना है वह अुन धर्मोंसे परे है। और अिसीलिअे मैं कहता हूं कि अेक ब्राह्मण ज्यादा अच्छा ब्राह्मण है, मुसलमान ज्यादा अच्छा मुसलमान है और वैष्णव ज्यादा अच्छा वैष्णव है, यदि वह सेवाकी भावनासे चरखा चलाता है।

अगर मेरे लिअे लेटे लेटे चरखा चलाना संभव हो और मुझे लगे कि अिससे अीश्वर पर मेरा चित्त अेकाग्र होनेमें मदद मिलेगी तो मैं जरूर माला छोड़कर चरखा चलाने लगूंगा। चरखा चलानेकी शक्ति मुझमें हो और मुझे यह चुनाव करना हो कि माला फेरूं या चरखा चलाअूं तो जब तक देशमें गरीबी और भूख मुंह फाड़े खड़ी है तब तक मेरा निर्णय निश्चित रूपसे चरखेके पक्षमें होगा और अुसीको मैं अपनी माला बना लूंगा। मैं अैसे समयके अिंतजारमें हूं जब रामनाम जपना भी अेक बाधा बन जायगा। जब मुझे अनुभव हो जायगा कि राम वाणीसे भी परे है, तब नाम जपनेकी मुझे जरूरत नहीं होगी। चरखा, माला और रामनाम सब मेरे लिअे अेक ही हैं। वे अेक ही अुद्देश्य पूरा करते हैं। वे मुझे सेवाधर्म सिखाते हैं। मैं सेवा-धर्मका पालन किये बिना अहिंसाका पालन नहीं कर सकता और अहिंसा-

धर्मका पालन किये बिना मैं सत्यको प्राप्त नहीं कर सकता। और सत्यके सिवा दूसरा कोओी धर्म ही नहीं है।

यंग अिंडिया, १४–८–२४, पृ० २६७

हाथ-कताओी किसी मौजूदा मुद्योगको मिटानेके लिये मुससे स्पर्धा नहीं करती और न अैसा करनेका मुसका कोओी अिरादा है मुसका मुद्देश्य यह नहीं कि किसी भी सशक्त मनुष्यको जो अपनी जीविका देनेवाला कोओी दूसरा मुद्योग ढूंढ सकता है, मुसके मुस कामसे हटाया जाय। कताओीके पक्षमें अेकमात्र दावा यही किया जाता है कि भारतके सामने जो सबसे बड़ी समस्या है मुसका अेकमात्र तात्कालिक व्यावहारिक और स्थायी हल कताओी ही है। यह समस्या है भारतकी अधिकांश आबादीकी सालभरमें लगभग छह महीनेकी अनिवार्य बेकारी। अिस बेकारीका कारण यह है कि खेतीका कोओी अच्छा सहायक धंधा नहीं है और अिसका परिणाम यह है कि आम जनताको सदा भूखसे पीड़ित रहना पड़ता है।

यंग अिंडिया २१–१०–२६ पृ० ३६८

जब तक अेक भी समर्थ पुरुष या स्त्री काम या भोजनके बिना रहता है, तब तक हमें आराम लेने या पेटभर खानेमें शर्म आनी चाहिये।

यंग अिंडिया, ५–२–'२५, पृ० ४८

मिसलिये कल्पना कीजिये कि ३० करोड़ बेकारोंका होना बेकारीके कारण अिन लाखों-करोड़ों लोगोंका रोज अपनी मानवतासे गिरना मुनका स्वाभिमान नष्ट हो जाना और अीश्वरमें श्रद्धा न रहना कितनी बड़ी विपत्ति है? अिन करोड़ों भूखोंके सामने जिनकी आंखोंमें ज्योति नहीं है और जिनका अेकमात्र अीश्वर रोटी है अीश्वरका सन्देश रखना वैसा ही है जैसा कि सामने बैठे मुस कुत्तेके आगे अीश्वरका संदेश रखना है। मैं मुनके सामने अीश्वरका सन्देश पवित्र कामका सन्देश ले जाकर ही रख सकता हूं। हम यहां बढ़िया नाश्ता करके और मुससे भी बढ़िया भोजनकी आशा रखकर मजेसे अीश्वरकी चर्चा कर सकते हैं,

लेकिन जिन करोड़ों आदमियोंको दो जून खानेको भी नहीं मिलता अुनसे मैं अीश्वरकी क्या बात करूं? अुन्हें तो अीश्वरके दर्शन दाल-रोटीके रूपमें ही हो सकते हैं।

यंग अिंडिया १५-१०-'३१, पृ० ३१०

गरीबसे गरीब लोगोंकी सेवा किये बिना और अुनके साथ अेक हुअे बिना आत्म-साक्षात्कारको मैं असंभव मानता हूं।

यंग अिंडिया २१-१०-२६ पृ० ३६४

(ख) त्याग

मानव-शरीर सेवाके लिअे ही बनाया गया है भोगके लिये हरगिज नहीं। सुखी जीवनका रहस्य त्यागमें है। त्याग ही जीवन है। भोग मृत्यु है। अिसलिअे हरअेकका हक है और अुसकी अिच्छा होनी चाहिये कि वह निष्काम भावसे सेवा करते हुअे सवा सौ वर्ष जिये। अैसा जीवन पूरी तरह और अेकमात्र सेवाके लिअे ही समर्पित होना चाहिये।

अैसी सेवाके खातिर किया हुआ त्याग अवर्णनीय आनन्द देता है। अुसे कोअी छीन नहीं सकता क्योंकि अिस अमृतका स्रोत भीतर होता है। वही जीवनको पोषण देता है। अुसमें चिन्ता या अधीरताकी गुंजाअिश नहीं हो सकती। अिस आनन्दके बिना दीर्घ जीवन असंभव है, और संभव भी हो तो अुसका कोअी मूल्य नहीं है।

हरिजन २४-२-'४६, पृ० १९

तो यह शरीर हमें अिसलिअे दिया गया है कि हम अुसके द्वारा सारी सृष्टिकी सेवा कर सकें।

और जिस तरह कोअी क्रीतदास अपने मालिकसे अन्न-वस्त्र आदि पाता है अुसी तरह जिस विश्वका स्वामी दयापूर्वक हमें जो कुछ दे दे वही हमें कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार करना चाहिये। हमें जो कुछ मिलता है अुसे सचमुच अुसकी दयाका दान ही कहना चाहिये क्योंकि हम तो अुसके ऋणी हैं और जिस तरह ऋणी मनुष्य अपना कर्तव्य करता है तो अुसे अपने कर्तव्य-पालनका कोअी बदला पानेका अधिकार नहीं

होता, असुसी तरह हमें भी अपने कर्तव्य-पालनका बदला पानेका अधिकार नहीं है। सिलसिले यदि हमें वह न मिले तो अपने स्वामीको हम दोष नहीं दे सकते। हमारा शरीर अुसका है वह अपनी विच्छाके अनुसार चाहे अुसका पालन करे चाहे अुसे फेंक दे। यह कोयी अैसी बात नहीं जिसकी शिकायत की जाय या जिसे दयनीय माना जाय अुलटे यदि हम स्रष्टाके विधानमें अपनी अुचित जगहको ठीक ठीक समझ लें तो हम महसूस करेंगे कि यह न केवल अेक स्वाभाविक बल्कि सुखद और अभीष्ट स्थिति भी है। अलबत्ता, यदि हम जिस सर्वोच्च आनन्दका अनुभव करना चाहते हों तो हममें अैसी प्रबल श्रद्धा अवश्य होनी चाहिये। यह आदेश सभी धर्मोंमें दिया गया है कि अपने विषयमें बिलकुल भी चिन्ता मत करो सारी चिन्ता अीश्वर पर छोड़ दो।"

जिस बातसे किसीको डरनेकी आवश्यकता नहीं। जिस मनुष्यने अपने-आपको सेवाकार्यमें हृदयसे समर्पित कर दिया है वह अुसकी आवश्यकता दिन प्रतिदिन अधिकाधिक अनुभव करेगा और अुसकी श्रद्धा निरन्तर समृद्ध होगी। जो मनुष्य अपने स्वार्थका त्याग करनेके लिये तैयार नहीं है और अपने जन्मकी मर्यादायें स्वीकार करनेके लिये तैयार नहीं है वह सेवाके मार्ग पर नहीं चल सकता। जाने-अनजाने हममें से हरअेक कुछ-न-कुछ सेवा करता ही है। अगर हम यह सेवा समझ बूझकर करनेकी आदत डाल लें तो सेवा करनेकी हमारी विच्छा बलवान बनेगी और वह न केवल हमारे लिये बल्कि सारी दुनियाके लिये सुखका निर्माण करेगी।

*

जिसके सिवा न सिर्फ सज्जनोंको बल्कि हम सब लोगोंको अपने समस्त साधन मानव-जातिकी सेवाके लिये समर्पित कर देना चाहिये। और यदि नियम अैसा ही हो तो जाहिर है कि भोगेच्छाको जीवनमें स्थान नहीं हो सकता और अुसकी जगह त्यागको मिलनी चाहिये। यह त्यागका कर्तव्य ही मनुष्य-जातिको पशु-जगतसे अलग करता है और अुसे श्रेष्ठता प्रदान करता है।

कुछ लोग आक्षेप करते हैं कि जीवनकी अिस कल्पनामें आनन्द और कलाको कोअी स्थान नहीं रहता और यह गृहस्थका विचार नहीं करती। लेकिन त्यागका हमारा अर्थ यह नहीं है कि मनुष्य दुनियाको छोड़ दे और जंगलमें जाकर रहे। हम तो अितना ही कहते हैं कि जीवनकी हमारी सारी प्रवृत्तियां त्यागकी भावनासे प्रेरित होनी चाहिये। अैसा तो कोअी नहीं कहेगा कि यदि गृहस्थ व्यक्ति जीवनको कर्तव्य रूप समझे तो वह गृहस्थ नहीं रहता। जो व्यापारी अपना काम यज्ञकी भावनासे करता है अुसके हाथोंसे करोड़ों रुपयोंका लेन-देन होगा किन्तु यदि वह यज्ञके कानूनको पालता है तो वह अपनी योग्यताओंका अुपयोग सेवाके लिये ही करेगा। अिसलिये वह न तो किसीको ठगेगा और न अनुचित लाभ अुठानेके लिये सट्टा करेगा। वह सादा जीवन बितायेगा किसी सजीव प्राणीको किसी भी प्रकारकी क्षति नहीं पहुंचायेगा और खुद लाखोंका नुकसान सह लेगा लेकिन किसी दूसरेको हानि नहीं पहुंचायेगा। कोअी अैसा खयाल न करे अिस किस्मका व्यापारी केवल मेरी कल्पनाकी ही दुनियामें है। दुनियाके सौभाग्यसे अैसे व्यापारी पश्चिममें भी हैं और पूर्वमें भी हैं। यह सच है कि अैसे व्यापारी अुंगलियों पर गिने जा सकते हैं। लेकिन यदि अिस आदर्शको सही सिद्ध करनेवाला अेक भी अुदाहरण मिल जाता है तो फिर अुसे काल्पनिक नहीं कहा जा सकता। अिसमें संदेह नहीं कि यज्ञकी भावनासे कर्म करनेवाले ये लोग अपनी जीविका अपने कर्मसे ही प्राप्त करते हैं। लेकिन जीविका अुनका अुद्देश्य नहीं होता अुनकी प्रवृत्तिका मात्र आनुषंगिक फल होता है। यज्ञमय जीवन कलाका शिखर है और वह सच्चे आनन्दसे परिपूर्ण होता है।

जो मनुष्य सेवाकी अिच्छा रखता है वह अपनी सुविधाओंकी तनिक भी चिन्ता नहीं करेगा। अुसका विचार वह भगवान पर छोड़ देता है वह चाहे तो अुनकी व्यवस्था करे और न चाहे तो न करे। अिसलिये वह अुसे मिलनेवाली सारी वस्तुओंका संग्रह करके अपना बोझ नहीं बढ़ायेगा और अुनमें से केवल अुतनी ही वस्तुअें लेगा जिनकी अुसे अनिवार्य आवश्यकता है और बाकीको छोड़ देगा। असुविधाकी स्थितिमें भी वह शान्त क्रोधरहित और प्रसन्न रहेगा। जिस तरह

सदाचारका पुरस्कार सदाचार ही है अुसी तरह सेवकके लिअे अुसकी सेवा ही अुसका पुरस्कार होगी और अुसमें ही वह सतोष मानेगा।

दूसरोंकी स्वेच्छापूर्वक की गयी सेवामें सेवकको अपनी सर्वोच्च क्षमताका अुपयोग करना चाहिये और अपनी सेवाकी तुलनामें दूसरोंकी सेवाको तरजीह देना चाहिये। सच तो यह है कि सच्चा भक्त मानव-जातिकी सेवामें अपनेको पूरा-पूरा समर्पित कर देता है।

फ्रॉम यरवडा मन्दिर, पृ० ५४–६०, १९४५

यज्ञ कभी प्रकारके हो सकते हैं। श्रम-यज्ञ या मेहनत करके खाना यज्ञका ही अेक प्रकार है। अगर सब लोग अपनी रोटीके लिअे मेहनत करें और अुससे अधिक कुछ न चाहें तो सबको काफी भोजन और काफी अवकाश मिल जाये। फिर न तो अत्यधिक आबादीकी चिल्लाहट होगी और न आजकलकी तरह रोग और दुःख होगा। अिस प्रकारका परिश्रम अूंचेसे अूंचे दर्जेका यज्ञ होगा। लोग बेशक और बहुतसी बातें भी अपने शरीर या मनके द्वारा करेंगे, परन्तु वह सबकी भलाअीके लिअे किया गया प्रेमपूर्ण परिश्रम होगा। अुस हालतमें न कोअी अमीर होगा, न कोअी गरीब, न कोअी अूंचा होगा न नीचा, और न कोअी स्पृश्य या अस्पृश्य होगा।

यह अेक अप्राप्य आदर्श ही सकता है। लेकिन अिस कारण हम अुसके लिअे प्रयत्न न करें अैसा नहीं होना चाहिये। अिस यज्ञका जो हमारे जीवनका धर्म है, हम सम्पूर्ण पालन चाहे न करें, लेकिन अगर हम अपने रोजके गुजारेके लिअे ही पर्याप्त शरीर-श्रम करें तो अुससे भी अुस आदर्श तक पहुंचनेमें काफी सहायता मिलेगी।

अगर हम अैसा करें तो हमारी आवश्यकतायें बहुत कम हो जायंगी, हमारा भोजन सादा होगा। फिर तो हम जीनेके लिअे खायेंगे खानेके लिअे नहीं जियेंगे। जिस किसीको अिस बातके ठीक होनेमें शंका हो वह अपनी रोजीके लिअे पसीना बहाकर देख ले। अपनी मेहनतकी कमाअीमें अुसे कुछ और ही स्वाद मिलेगा अुसका स्वास्थ्य सुधर जायगा और अुसे मालूम हो जायगा कि अैसी अनेक चीजें जिनका वह अुपयोग करता रहा है अुसके लिअे सचमुच आवश्यक नहीं हैं।

तो क्या लोग बौद्धिक श्रमसे अपना गुज़ारा न करें? नहीं, शरीरकी ज़रूरत शरीरसे ही पूरी होनी चाहिये। 'राजाकी चीज़ राजाको ही मिलनी चाहिये' यह कहावत शायद यहां अच्छी तरह लागू होती है।

केवल मानसिक अर्थात् बौद्धिक श्रम आत्माके लिओ है और वह स्वयं सन्तोषरूप है। अुसमें पारिश्रमिक मिलनेकी अिच्छा कदापि न करनी चाहिये। आदर्श स्थितिमें डॉक्टर, वकील और अैसे ही दूसरे लोग अपने लिओ नहीं, केवल समाजके लाभके लिओ काम करेंगे। श्रम द्वारा रोज़ी कमानेके धर्मका पालन करनेसे समाजकी रचनामें अेक शान्त क्रान्ति हो जायगी। मनुष्यकी विजय अिस बातमें होगी कि जीवन-संग्रामके बजाय परस्पर सेवाकी स्पर्धा स्थापित हो। तब पशुधर्मके स्थान पर मानव-धर्म स्थापित हो जायगा।

हरिजन २९-६-३५, पृ० १५६

भारतमें लोगोंका अेक अैसा वर्ग पाया जाता है जिसे कमसे कम आवश्यकतायें रखनेमें आनन्द आता है। ये लोग अपने साथ थोड़ासा आटा और चुटकीभर नमक और मिर्च अंगोछेमें बांधकर निकल पड़ते हैं। कुअेंसे पानी खेंचनेके लिओ अुनके पास अेक लोटा और डोर होती है। अुन्हें और कुछ नहीं चाहिये। वे रोज़ दस बारह मील पैदल चल लेते हैं। अंगोछेमें ही आटा गूंथ लेते हैं, यहां-वहांसे थोड़ीसी सूखी टह नियां जमा करके आग जला लेते हैं और अुस पर अपनी बाटियां सेंक लेते हैं। स्वाद खायी जानेवाली चीज़में नहीं होता स्वाद अुस भूखमें होता है जो अीमानदारीकी मेहनत और मनके सन्तोषसे लगती है। अैसे मनुष्यका साथी और मित्र अीश्वर है। और वह अपनेको किसी भी राजा या सम्राटसे ज्यादा अमीर समझता है। अीश्वर अुनका मित्र नहीं होता जो मन ही मन दूसरोंके धनका लोभ करते हैं। अिस अुदाहरणका सभी अनुकरण कर सकते हैं और खुद अवर्णनीय शान्ति और आनन्दका अुप भोग करते हुअे दूसरोंको भी वह शान्ति और आनन्द प्रदान कर सकते हैं। अिसके विपरीत अगर धनकी लालसा बनी रहे तो शोषणका आश्रय लेना पड़ेगा भले ही नाम अुसका कुछ भी रख लिया जाय। तब भी

करोड़ों लोग करोड़पति नहीं बन सकते। सच्चा सुख सन्तोष और ईश्वरके सान्निध्यमें ही है।

हरिजन २१–७–’४६, पृ० २३२

नम्रताका संपूर्ण अर्थ तो शून्यता है। शून्यता मोक्षकी स्थिति है। मुमुक्षु अथवा सेवकके प्रत्येक कार्यमें नम्रता — अथवा निरभिमानता — न हो, तो वह मुमुक्षु नहीं है सेवक नहीं है। वह स्वार्थी है अहंकारी है।

आत्मकथा पृ० ३४४ १९५७

जब मनुष्य पर आत्म-सन्तोष छा जाता है तो उसका विकास बंद हो जाता है और इसलिये वह स्वतंत्रताके योग्य नहीं रह जाता है। परन्तु जो मनुष्य नम्रतापूर्वक और धार्मिक भावनासे आकांक्षा त्याग करता है वह उसकी अल्पताको तुरंत अनुभव कर लेता है। एक बार त्यागके मार्ग पर अग्रसर हुये कि हमें अपनी स्वार्थ-परायणताकी मात्राका पता लग जाता है और लगातार अधिकाधिक देनेकी इच्छा अनुभव होने लगती है। और जब तक सम्पूर्ण आत्म-समर्पण नहीं हो जाता तब तक हमें संतोष नहीं होता।

यंग इंडिया २९–९–२१ पृ० ३०६

जब तक हम शून्य नहीं बन जाते तब तक हम अपने भीतर रहनेवाली बुराईको जीत नहीं सकते। जो एकमात्र प्राप्त करने योग्य सच्ची आजादी है उसकी कीमतके तौर पर ईश्वरको सम्पूर्ण आत्म-समर्पणसे कम कुछ नहीं चाहिये। और जब मनुष्य इस तरह अपने आपको खो देता है तो वह तुरंत अपनेको सभी प्राणियोंकी सेवामें तत्पर पाता है। वही उसका सुख और वही उसका मनोरंजन बन जाती है। वह नया मनुष्य हो जाता है जो ईश्वरकी सृष्टिमें सभी प्राणियोंकी सेवामें अपनेको खपा देनेमें कभी थकता नहीं।

यंग इंडिया २०–१२–२८, पृ० ४२०

२५

अन्यायके विरोधमें प्रेम

(क) द्वेषके विरुद्ध प्रेमधर्म

तलवारको फेंक देनेके बाद मेरे पास प्रेमके प्यालेके अलावा रह ही क्या जाता है जो मैं अपने विरोधियोंके सामने पेश कर सकता हूं? यही प्याला पेश करके मैं अुन्हें अपने नजदीक लानेकी आशा रखता हूं।

यंग अिंडिया २–४–३१ पृ० ५४

अपने मित्रोंके प्रति मित्रभाव रखना आसान है। मगर जो अपनेको आपका शत्रु समझता है अुसे मित्र बनाना सच्चे धर्मका सार है।

हरिजन ११–५–४७, पृ० १४६

जो हमसे प्रेम रखते हैं अुन्हींसे प्रेम रखना अहिंसा नहीं है। अहिंसा तो तब है जब हम अपनेसे द्वेष रखनेवालोंसे भी प्रेम करें।

(ता० ३१–१२–३४ के अेक निजी पत्रसे)

विधायक रूपमें अहिंसाका अर्थ है अधिकसे अधिक प्रेम अधिकसे अधिक अुदारता। अगर मैं अहिंसाको माननेवाला हूं तो मुझे अपने शत्रुसे प्रेम करना ही चाहिये। जो नियम मैं अपने बुरा करनेवाले पिता या पुत्र पर लागू करूं, वही नियम मुझे अुस बुरा करनेवाले पर लागू करने चाहिये जो मेरा शत्रु है या पराया है।

स्पीचेज अेण्ड राअिटिंग्ज ऑफ महात्मा गांधी जी० अे० नटेसन मद्रास पृ० ३४६ १९३३

मेरा निवेदन आपसे यह है कि आप अपने हृदय शुद्ध करें और अुदारता रखें। अपने हृदयाका महासागरकी तरह विशाल बनाअिये। दूसरोंके काजी मत बनो नहीं तो तुम्हारा भी अिन्साफ होगा। यह

सर्वोच्च न्यायाधीश आपको फांसी पर लटका सकता है, परन्तु यह आपको जीवित रहने देता है। आपके भीतर और आसपास जितने प्रभु हैं परन्तु यह आपकी रक्षा करता है और आप पर दयावृष्टि रखता है।

यंग अिंडिया, १-१-'२५, पृ० ८

कमजोर कभी क्षमा नहीं कर सकते। क्षमा तो बलवानोंका गुण है।

यंग अिंडिया २-४-३१ पृ० ५९

लोग कहते हैं साधन तो आखिर साधन ही हैं। मैं कहूंगा 'आखिर तो साधन ही सब-कुछ हैं'। जैसे साधन वैसा साध्य। साधन और साध्यके बीच कोअी जुदाअीकी दीवार नहीं है। सच तो यह है कि विधाताने हमें साधनोंका नियंत्रण करनेकी ताकत तो दी है (वह भी बहुत सीमित) परन्तु साध्य पर हमारा कोअी नियंत्रण नहीं है। साधनोंके ठीक अनुपातमें ही साध्यकी प्राप्ति होगी। अिस नियममें किसी अपवादकी गुंजाअिश नहीं है।

यंग अिंडिया १७-७-'२४ पृ० २३६

अिसलिये मैंने मुख्यतः साधनोंकी रक्षा और अुनके प्रगतिशील अुपयोगसे ही वास्ता रखा है। मैं जानता हूं कि अगर हम अुनका ध्यान रख सकें तो ध्येयकी प्राप्ति निश्चित है। मैं यह भी अनुभव करता हूं कि ध्येयकी ओर हमारी प्रगति अुतनी ही होगी जितनी हमारे साधनोंकी शुद्धता होगी।

यह मार्ग लम्बा शायद बहुत लम्बा मालूम हो परन्तु मुझे यकीन है कि यह सबसे छोटा है।

दि अमृतबाजार पत्रिका, १७-९-'३३

आपको यह डर नहीं होना चाहिये कि सत्याग्रहका तरीका कोअी धीमी और लम्बी प्रक्रिया है। संसारमें अिससे जल्दीका और कोअी मार्ग नहीं है क्योंकि अिसमें सफलता निश्चित होती है।

यंग अिंडिया १०-४-२५, पृ० १५१

यह (प्रेम द्वारा अन्यायका प्रतिकार) अैसी ताकत है जिसका व्यक्ति और समाज दोनों अुपयोग कर सकते हैं। अुसका प्रयोग जितनी सफलताके साथ घरेलू मामलोंमें किया जा सकता है, अुतनी ही सफलताके साथ राजनीतिक मामलोंमें भी किया जा सकता है। अुसकी सार्वत्रिक अुपयुक्तता अुसके स्थायी और अजेय होनेका प्रत्यक्ष प्रमाण है। स्त्री पुरुष और बच्चे सभी अुसका अुपयोग कर सकते हैं। यह कहना बिलकुल झूठ है कि यह शक्ति केवल कमजोरोंके द्वारा तभी तक अिस्तेमाल करनेकी है जब तक कि वे हिंसाका मुकाबला हिंसासे करनेमें समर्थ न हों। हिंसाके लिये और अिसलिये सब प्रकारके अन्याय और अत्याचारके लिअे यह बल वैसा ही है जैसा अन्धकारके लिये प्रकाश।

यंग अिंडिया, १–११–'२७ पृ० ३६९

अहिंसाके तरीकेका प्रयोग करते हुअे हमें यह विश्वास होना चाहिये कि हरअेक आदमी चाहे वह कितना ही गिरा हुआ हो मानवता पूर्ण और कुशल व्यवहारसे सुधारा जा सकता है।

हरिजन २२–२–'४२ पृ० ४९

किसी हत्यारे, चोर या डाकू तकको सजा देना मेरे अहिंसा-धर्मके विरुद्ध है।

यंग अिंडिया २–४–११ पृ० ५५

जब कोअी व्यक्ति अहिंसक होनेका दावा करता है तब अुससे यह आशा रखी जाती है कि जिसने अुसे हानि पहुंचायी हो अुस पर वह क्रोध नहीं करेगा। वह अुसका बुरा नहीं चाहेगा वह अुसका भला चाहेगा, वह अुसे गालियां नहीं देगा वह अुसे कोअी शारीरिक चोट नहीं पहुंचायेगा। बुरा करनेवाला अुसे जो भी हानि पहुंचायेगा अुसे वह सहन कर लेगा। अिस प्रकार अहिंसाका अर्थ है सम्पूर्ण निष्पापता। सम्पूर्ण अहिंसाका अर्थ है सभी प्राणियोंके प्रति दुर्भावका पूरा अभाव। अिसलिअे वह तो मनुष्यसे नीची श्रेणीके जीवों यहां तक कि विषैले सर्पों और

हिंस्र पशुओं तकको गले लगाती है। वे हमारी विनाशकारी प्रवृत्तियोंके पोषणके लिये पैदा नहीं किये गये हैं। अगर हमें विधाताके मनका ज्ञान होता तो हमारी समझमें आ जाता कि अुसकी दृष्टिमें अिन जानवरोंका अुचित स्थान क्या है। अिसलिअे सक्रिय रूपमें अहिंसा सब प्राणियोंके प्रति सद्भाव है। यह शुद्ध प्रेम है। हिन्दू धर्मशास्त्रोंमें बाअिबलमें और कुरानमें मैंने अहिंसाकी ही शिक्षा पायी है।

अहिंसा पूर्णावस्था है। अिसी लक्ष्यकी ओर सारी मानव-जाति, अनजाने ही सही परंतु स्वाभाविक रूपमें जा रही है। मनुष्यके हृदयमें जब द्वेषका लेश नहीं रहता तब वह निर्दोषताकी मूर्ति बन जाता है तब वह देवता नहीं बन जाता। तब वह केवल सच्चा मनुष्य बनता है। आजकी दशामें तो हम कुछ अंशोंमें मनुष्य हैं और कुछ अंशोंमें पशु। अपने अज्ञान और अहंकारवश हम यह कहते हैं कि जब हम अीँटका जवाब पत्थरसे देते हैं और अिसके लिये आवश्यक क्रोधकी मात्रा अपनेमें पैदा कर लेते हैं तो हम सचमुच मनुष्य-जातिके हेतुको पूरा करते हैं। हम यह माननेका बहाना करते हैं कि प्रतिशोध हमारे जीवनका धर्म है, जब कि प्रत्येक धर्मशास्त्रमें हम देखते हैं कि प्रतिशोधको कहीं कर्तव्य नहीं माना गया अुसे केवल क्षन्तव्य माना गया है। अनिवार्य तो संयम ही माना गया है। प्रतिशोध अैसा भोग है जिसमें बड़ी तैयारीकी जरूरत होती है। संयम हमारे जीवनका धर्म है क्योंकि सर्वोच्च संयमके बिना सर्वोच्च सम्पूर्णता प्राप्त नहीं हो सकती। जिस प्रकार कष्ट सहन करना मानव-जातिका विशेष लक्षण है।

लक्ष्य हमसे सदा दूर हटता रहता है। जितनी अधिक हमारी प्रगति होती है अुतना ही अधिक हमें अपनी अयोग्यताका भान होता है। संतोष प्रयत्नमें है प्राप्तिमें नहीं। पूर्ण प्रयत्न ही पूर्ण विजय है।

यंग अिंडिया ९-३-२२ पृ० १४१

लिखित अितिहासके आदिकालसे हमारे अपने समय तक हम दृष्टि पात करें तो पता चलेगा कि मनुष्य बराबर अहिंसाकी ओर बढ़ रहा है। हमारे आदि पूर्वज मानव भक्षी थे। फिर अेक समय अैसा आया जब वे मानव भक्षणसे विरक्त हो गये और शिकार पर गुजर करने लगे।

फिर अेक स्थिति आयी जब मनुष्यको आवारा शिकारीका जीवन व्यतीत करनेमें लज्जा अनुभव हुआी। अिसलिअे अुसने खेतीको अपनाया और अपने आहारके लिअे मुख्यतः वह धरतीमाता पर निर्भर करने लगा। अिस प्रकार अेक खाना-बदोशसे आगे बढ़कर वह सभ्य और स्थायी जीवन व्यतीत करने लगा। अुसने गांव और नगर बसाये और वह अेक पारिवारिक व्यक्तिसे आगे बढ़कर समाज और राष्ट्रका सदस्य बन गया। ये सब बढ़ती हुआी अहिंसा और घटती हुआी हिंसाके चिह्न हैं। अैसा न होता तो मानव-जाति अब तक खतम हो जाती जैसा कि पशुओंकी अनेक जातियोंके बारेमें हुआ भी है।

पैगम्बरों और अवतारोंने भी कम या ज्यादा अहिंसाका ही पाठ पढ़ाया है। किसीने भी हिंसाकी शिक्षा देनेका दावा नहीं किया। करते भी कैसे? हिंसा सिखानी नहीं पड़ती। प्राणीकी हैसियतसे मनुष्य हिंसक है परंतु आत्माके रूपमें अहिंसक है। ज्यों ही अुसे आत्माका भान होता है त्यों ही अुसके लिअे हिंसक रहना असंभव हो जाता है। मनुष्य या तो अहिंसाकी तरफ बढ़ता है या विनाशकी ओर दौड़ता है। अिसी-लिअे पैगम्बरों और अवतारोंने सत्य मेल-मिलाप भाअीचारा न्याय आदिका पाठ पढ़ाया है। ये सब अहिंसाके लक्षण हैं।

फिर भी हिंसा टिकी हुआी है यहां तक कि पत्र-लेखक जैसे विचार-शील लोग भी अुसे आखिरी हथियार मानते हैं। परंतु जैसा मैंने सिद्ध किया अितिहास और अनुभव अुनकी अिस बातका समर्थन नहीं करता।

अगर हम मानते हैं कि मानव-जाति बराबर अहिंसाकी ओर बढ़ रही है तो अुससे यह निष्कर्ष निकलता है कि अुसे अिस दिशामें और भी प्रगति करनी है। संसारमें कोअी चीज स्थिर नहीं है प्रत्येक वस्तु प्रगतिशील है। अगर हम आगे नहीं बढ़ते हैं तो हमें पीछे हटना पड़ेगा। अीश्वरकी बात अलग है, अन्य कोअी भी कालचक्रसे बच नहीं सकता।

हरिजन ११-८-'४० पृ० २४५

मैंने देखा कि विनाशके बीचमें भी जीवन कायम रहता है। और अिसलिअे विनाशके कानूनसे बड़ा भी कोअी कानून अवश्य है। अुस कानूनकी अधीनता स्वीकार की जाय तो ही सुव्यवस्थित समाजकी

रचना हो सकती है और जीवन जीने योग्य हो सकता है। अगर यह कानून ही जीवनका सच्चा कानून है तो हमें अुस पर दैनिक जीवनमें अमल करना होगा। जहां कहीं भी विसंवाद पैदा हो जहां भी आपको किसी विरोधीका सामना करना पड़े वहां आप अुसे प्रेमसे जीतिये। मैंने अुस नियमको अपने जीवनमें किसी सादे ढंगसे कार्यान्वित किया है। जिसका यह मतलब नहीं कि मेरी सब मुश्किलें हल हो गयी हैं। मतलब जितना ही है कि मैंने पाया है कि जो काम विनाशके नियमसे कभी नहीं निकला वह जिस प्रेमधर्मसे बना है। जिस धर्मका मैं जितना अधिक आचरण करता हूं अुतना ही मुझे जीवनमें जिस विश्वकी योजनामें आनन्द अनुभव होता है। मुझे यह शान्ति मिलती है और प्रकृतिके रहस्योंका वह अर्थ दिखाओ देता है जिसका वर्णन करनेकी मुझमें ताकत नहीं है।

यंग जिंडिया, १–१०–३१, पृ० २८६–८७

मैं जानता हूं कि जीवनके जिस महान धर्मका पालन करना कितना कठिन है। परन्तु क्या सभी बड़ी और अच्छी चीजोंका करना कठिन नहीं होता? द्वेष करनेवालेसे प्रेम करना सबसे कठिन होता है। परन्तु औश्वरकी दयासे यह अत्यन्त कठिन कार्य करना भी सरल हो जाता है, अगर हम अुसे करना चाहें।

(ता० ११–१२–१४ के अेक निजी पत्रसे)

जिस आश्चर्योंके युगमें कोओ यह नहीं कहेगा कि अमुक विचार नया है जिसलिअे निकम्मा है। जिसी तरह, अमुक कार्य कठिन है जिस लिअे असंभव है अैसा कहना भी युगधर्मके विपरीत है। जो बातें सपनेमें भी नहीं सोची जा सकती थीं वे बातें रोज हो रही हैं असंभव निरंतर संभव होता जा रहा है। हिंसाके क्षेत्रमें जो आश्चर्यजनक आविष्कार जिन दिनों हो रहे हैं वे हमें लगातार चकित कर रहे हैं। परन्तु मेरी रायमें जिससे कहीं अकल्पित और असंभव दिखाओ देनेवाले आविष्कार अहिंसाके क्षेत्रमें किये जायेंगे।

हरिजन २५–८–'४० पृ० २६०

मैं अेक अदम्य आशावादी हूं। मेरे आशावादका आधार यह विश्वास है कि व्यक्तिमें अहिंसाका विकास करनेकी असीम संभावनायें हैं। अिसका जितना अधिक विकास आप अपने जीवनमें करेंगे अुतनी ही वह संक्रामक होगी यहां तक कि वह आपके आसपासके वातावरणमें छा जायगी और धीरे धीरे संसारको भी आच्छादित कर सकती है।

हरिजन, २८–१–३९ पृ० ४४३

(ख) सीधी लड़ाअी

निष्क्रियता नहीं

सीधी लड़ाअीके बिना अिस पृथ्वी पर आज तक कुछ नहीं हुआ। मैं निष्क्रिय प्रतिरोध शब्दको अस्वीकार करता हूं क्योंकि वह अपर्याप्त है और अुसका अर्थ कमजोरोंका हथियार किया जाता है।

यंग अिंडिया १२–५–'२० पृ० ३

मेरा लक्ष्य सारे संसारके साथ मित्रता साधना है और मैं अन्यायके अधिकसे अधिक विरोधके साथ अधिकसे अधिक प्रेमका सामंजस्य कर सकता हूं।

यंग अिंडिया १०–३–२०, पृ० ५

अहिंसा 'दुष्टताके विरुद्ध सब तरहकी सच्ची लड़ाअी छोड़ देना' नहीं है। अिसके विपरीत मेरी कल्पनाकी अहिंसा प्रतिशोधकी अपेक्षा दुष्टताके विरुद्ध अधिक सक्रिय और वास्तविक युद्ध है। प्रतिशोधका स्वभाव ही दुष्टताकी वृद्धि करना है। मैं अनीतिके मानसिक और अिस लिअे नैतिक विरोधकी कल्पना करता हूं। मैं जालिमकी तलवारकी धारको बिलकुल भोंथरी बना देना चाहता हूं। मगर अुसके विरुद्ध अधिक तेज धारवाला हथियार अुठाकर नहीं बल्कि जालिमकी अिस आशाको विफल बनाकर कि मैं शारीरिक प्रतिरोध करूंगा। मैं तो आत्मा द्वारा प्रतिरोध करूंगा और वह प्रतिरोध अुसकी पकड़में नहीं आयेगा। पहले वह चकित होगा और अन्तमें वह अुसका महत्त्व पहचाने बिना नहीं रहेगा। और

आत्मिक प्रतिरोधके महत्त्वकी यह पहचान मुझे नीचा न दिखाकर ऊँचा भुठायेगी। *

यंग अिंडिया ८–१०–२५ पृ० ३४६

सक्रिय रूपमें अहिंसाका अर्थ है जान-बूझकर कष्ट सहन करना। अिसका अर्थ बुरा करनेवालेकी मरजीके आगे चुपचाप झुक जाना नहीं परन्तु जालिमकी मरजीके खिलाफ अपनी जानकी बाजी लगा देना है। जीवनके अिस धर्मका पालन करते हुअे अेक अकेला व्यक्तिके लिअे अपनी अिज्जत अपने धर्म और अपनी आत्माकी रक्षाके लिअे किसी अन्यायी साम्राज्यकी सारी ताकतका सामना करना और अुस साम्राज्यके पतन या अुत्थानकी बुनियाद डालना संभव है।

यंग अिंडिया ११–८–२० पृ० ३

कायरताके लिअे कोअी स्थान नहीं

मेरा अहिंसा-धर्म अेक अत्यंत सक्रिय शक्ति है। अिसमें कायरताका या कमजोरीके लिअे कोअी गुंजाअिश नहीं। अेक हिंसक मनुष्यके लिअे तो किसी दिन अहिंसक बन जानेकी आशा है, परन्तु कायरके लिअे कोअी आशा नहीं। अिसलिअे मैंने अिस पत्रमें अनेक बार कहा है कि अगर हमें अपनी अपनी बहनोंकी और अपने पूजा-स्थानोंकी अपनी कष्ट सहनेकी शक्तिके द्वारा अर्थात् अहिंसाके द्वारा रक्षा करना नहीं आता और अगर हम मर्द हैं तो कमसे कम लड़कर अिन सबकी रक्षा करनेका सामर्थ्य तो हममें होना ही चाहिये।

यंग अिंडिया, १६–६–२७ पृ० १९६

अहिंसा और कायरता साथ साथ नहीं चल सकती। मैं अेक असे मनुष्यकी कल्पना कर सकता हूँ जो पूरी तरह शस्त्रसज्जित होने पर भी दिलसे कायर हो। हथियार रखनेका अर्थ कायरता न हो तो भी कुछ भय तो है ही। परन्तु विशुद्ध निर्भयताके बिना सच्ची अहिंसा असंभव है।

हरिजन १५–७–'३९ पृ० २०१

शक्ति शारीरिक क्षमतासे नहीं आती। वह अटल संकल्पसे आती है।

यंग अिंडिया ११–८–'२० पृ० ३

अपने ध्येयमें अटल श्रद्धासे अनुप्राणित कुछ दृढ़ संकल्पवाले आदमी भी अितिहासकी दिशा बदल सकते हैं।

हरिजन १९–११–३८ पृ० ३४३

अहिंसाके पुजारीको भयमुक्त होनेके लिये अपनेमें अूंचेसे अूंचे ढंगकी त्यागशक्ति पैदा करनी पड़ती है। अुसकी जमीन अुसकी दौलत और अुसकी जान भी चली जाय तो भी वह परवाह नहीं करता। जिसने सब प्रकारके भयको जीत न लिया हो वह सम्पूर्ण अहिंसाका पालन नहीं कर सकता। अहिंसाके पुजारीको अेक अीश्वरका ही डर होता है।

हरिजन १–९–'४० पृ० २७८

जहां डर है वहां धर्म नहीं होता।

यंग अिंडिया २–९–२६, पृ० ३०८

संसारमें हमारा कुछ भी नहीं है। हम स्वयं भी प्रभुके हैं। तब फिर हम किसीसे भी डर क्यों रखें?

यंग अिंडिया ११–९–२० पृ० २

हम अीश्वरसे डरें फिर हमें मनुष्यका भय नहीं रहेगा।

स्पीचेज अेण्ड राअिटिंग्ज ऑफ महात्मा गांधी जी० अे० नटेसन मद्रास पृ० ३३० १९३३

आध्यात्मिकताका अर्थ शास्त्रोंका ज्ञान या दार्शनिक चर्चाकी योग्यता नहीं है। अुसका सम्बन्ध हृदयके विकाससे हृदयकी असीम शक्तिसे है। निर्भयता आध्यात्मिकताकी पहली शर्त है। कायर कभी सदाचारी नहीं हो सकते।

यंग अिंडिया १३–१०–२१, पृ ३२३

सत्याग्रही भयको तिलांजलि दे देता है। अिसलिअे अुसे अपने विरोधी पर विश्वास करनेमें कभी डर नहीं होता। विरोधी अुसे बीस बार धोखा

दे चुका हो तो भी सत्याग्रही बिक्कीसवीं बार अुस पर भरोसा करनेको तैयार रहता है क्योंकि मानव-स्वभावमें सम्पूर्ण विश्वास अुसके अहिंसा धर्मका सार है।

सत्याग्रह अिन साअुथ अफ्रीका, पृ० २४६, १९५०

हर रोज सुबह हमारा पहला काम अुस दिनके लिये यह प्रतिज्ञा करना होना चाहिये 'मैं संसारमें किसीसे नहीं डरूंगा। केवल औश्वरसे डरूंगा किसीके प्रति दुर्भाव नहीं रखूंगा, किसीके भी अन्यायके सामने नहीं झुकूंगा। मैं असत्यको सत्यसे जीतूंगा और असत्यका विरोध करते हुओ सब प्रकारके कष्ट सहन करूंगा।'

सत्याग्रह लीफलेट, ४–५–१९ पृ० १४

अकेले डटे रहो

मेरे भीतरकी कोओ चीज, जो मुझे कभी धोखा नहीं देती अिस समय मुझसे कह रही है 'तुम्हें अकेले भी खड़े रहना पड़े तो भी तुम्हें सारे संसारके सामने डटे रहना है। संसार तुम्हें लाल आंखोंसे घूर रहा हो तो भी अुसे सामने नजर रखकर देखते रहो। डरो नहीं। अपनी अन्तरात्माका विश्वास करो जो तुम्हारे हृदयमें निवास करती है और जो तुम्हें यह कहती है भाओी-बन्धु स्त्री-पुत्र सबको छोड़ दो परंतु जिस चीजके लिये तुम जिन्दा हो और जिसके लिये तुम्हें मरना है अुसका प्रमाण दो।'

दि बॉम्बे क्रॉनिकल ९–८–४२

संख्याबल कायरोंको आनन्द देता है। वीरताकी भावनावाले लोग अकेले लड़नेमें गौरव महसूस करते हैं।

यंग अिंडिया १७–६–२६, पृ० २१७

संसारके महानतम पुरुष सदा अकेले डटे रहे हैं। जरथुस्त्र बुद्ध, औसा, मुहम्मद आदि महान धर्मप्रवर्तकोंको देखिये। वे सब अकेले ही डटे रहे। औसे और भी कभी नाम मैं ले सकता हूं। परंतु अुन्हें अपनेमें और अपने औश्वरमें जीती-जागती श्रद्धा थी। और चूंकि अुन्हें यह विश्वास

था कि ओीश्वर अुनके पक्षमें है, अिसलिअे अुन्हें अकेलापन कभी महसूस नहीं हुआ।

यंग अिंडिया १०–१०–२९ पृ० ३३०

ओीश्वरका आश्रय

अहिंसा तभी सफल होती है जब हमें ओीश्वरमें सजीव श्रद्धा हो।

हरिजन २८–१–'३९, पृ० ४४१

न्यायकी लड़ाअीमें ओीश्वर खुद युद्धकी योजना बनाता है और अुसका संचालन करता है। धर्मयुद्ध ओीश्वरके नाम पर ही लड़ा जा सकता है। और ओीश्वर बचानेके लिअे तभी आता है जब सत्याग्रहीको बिलकुल लाचारी महसूस होती है और जब अुसे अपने चारों ओर घोर अन्धकार दिखाओी देता है।

सत्याग्रह अिन साअुथ अफ्रीका पृ० ५, १९५०

मैंने यह ओक सबक सीखा है कि जो बात मनुष्यके लिअे असम्भव है वह ओीश्वरके लिअे बांये हाथका खेल है। और यदि हमें अुस दैवी शक्ति पर श्रद्धा हो जो अुसकी सृष्टिके छोटेसे छोटे प्राणीकी भाग्य-विधाता है तो मुझे कोओी शक नहीं कि सब-कुछ संभव है। और अिसी अंतिम आशामें मैं जी रहा हूं अपना समय बिता रहा हूं और अुस प्रभुकी मरजी पर चलनेकी कोशिश कर रहा हूं।

यंग अिंडिया १९–११–'३१, पृ० ३६१

मुझे रास्ता मालूम है। वह कठिन और तंग है। वह खांडेकी धार जैसा है अुस पर चलनेमें मुझे आनन्द आता है। जब गिर पड़ता हूं तो मैं रो देता हूं। ओीश्वरका वचन है जो प्रयत्न करता है, अुसका कभी नाश नहीं होता। मुझे अिस वचनमें पूर्ण श्रद्धा है। अिसलिअे भले ही मैं अपनी दुर्बलताके कारण हजार बार असफल रहूं तो भी म अपनी श्रद्धा नहीं खोअूंगा।

यंग अिंडिया १७–६–२१ पृ० २१५

अुस (सत्याग्रहीको) जानना चाहिये कि सहायताकी जब कमसे कम आशा होती है तब वह अुसे मिल जाती है। अुस निर्दय दयालु प्रभुकी असी ही लीला है कि वह अपने भक्तको आगमें तपाकर अुसकी परीक्षा लेता है और अुसे रजकण जैसा नम्र बनानेमें अुसे आनन्द आता है।

यंग अिंडिया ४–६–'२५, पृ० १८६

कष्ट-सहन द्वारा अपील

प्रेम किसी चीजको लेनेका दावा नहीं करता वह हमेशा देता ही है। प्रेम सदा सहन करता है, कभी बदला नहीं लेता।

यंग अिंडिया ९–७–२५, पृ० २४०

मैं अिस बुनियादी नतीजे पर पहुंचा हूं कि अगर आप सचमुच कोअी महत्त्वपूर्ण काम कराना चाहते हैं तो आपको केवल बुद्धिको ही सन्तुष्ट नहीं करना चाहिये हृदयको भी प्रेरित करना चाहिये। बुद्धिका प्रभाव मस्तिष्क तक ही अधिक पहुंचता है। परंतु हृदयको तो कष्ट-सहनके द्वारा ही भेदा जा सकता है। जिससे मनुष्यके भीतरी ज्ञानके कपाट खुल जाते हैं।

यंग अिंडिया, ५–११–३१ पृ० ३४१

मेरा यह विश्वास बढ़ता जा रहा है कि मनुष्यके लिये मौलिक महत्त्वकी चीजें केवल बुद्धिसे प्राप्त नहीं होतीं अुन्हें कष्ट-सहनके द्वारा प्राप्त करना पड़ता है। कष्ट सहन करना मानव प्राणियोंका धर्म है युद्ध जंगलका कानून है। परन्तु कष्ट-सहन विरोधीके हृदयका परिवर्तन करने और बुद्धिकी आवाजके प्रति अुसके कान खोलनेके लिये जंगलके कानूनसे कहीं अधिक शक्तिशाली है।

यंग अिंडिया ५–११–'३१ पृ० ३४१

अहिंसाका धर्म अिस बातमें है कि स्वयं अधिकसे अधिक असुविधा सहकर और जानको जोखममें डालकर भी दूसरोंको अधिकसे अधिक सुविधा पहुंचाजी जाय।

यंग अिंडिया, २–१२–२६, पृ० ४२२

कठोरसे कठोर हृदय और घोरसे घोर अज्ञान भी रागद्वेष रहित कष्ट-सहनके अुगते हुअे सूरजके सामने पिघल जाता तथा विलीन हो जाता है।

यंग अिंडिया, १९-२-२५, पृ० ६१

विरोधीका हृदय-परिवर्तन करनेका ध्येय

यह अकसर भुला दिया जाता है कि बुरा करनेवालेको सताना सत्याग्रहीका हेतु कभी नहीं होता। सत्याग्रही अुसकी भयकी वृत्तिको नहीं हमेशा अुसके हृदयको जगाना चाहता है और हृदयको ही जगाना चाहिये। सत्याग्रहीका हेतु बुरा करनेवालेका हृदय बदलना होता है, न कि अुसे अमुक कार्य करनेके लिअे किसी भी तरह बाध्य करना।

हरिजन १८-३-३९ पृ० ५३

सत्याग्रही महज चरित्र-बल और कष्ट-सहन द्वारा अपने विरोधीको बदलना चाहता है। वह जितना शुद्ध होगा और जितना अधिक कष्ट सहन करेगा अुतनी ही प्रगति तेज होगी।

यंग अिंडिया १८-९-२४ पृ० ३०६

अहिंसक कार्यकर्ताका लक्ष्य सदा हृदय बदलनेका होना चाहिये। परंतु वह अनन्त काल तक प्रतीक्षा नहीं कर सकता। अिसलिअे जब सीमा आ जाती है तब वह जोखिम अुठाता है और सक्रिय सत्याग्रहकी योजनायें बनाता है जिसके परिणाम सविनय आज्ञाभंग आदि हो सकते हैं।

यंग अिंडिया ६-२-३० पृष्ठ ४४

सत्याग्रह*

चूंकि सत्याग्रह सीधी लड़ाअीके अत्यन्त प्रबल अुपायोंमें से अेक है, अिसलिअे सत्याग्रही सत्याग्रहका आश्रय लेनेसे पहले और सब अुपाय कर चुकता है। अिसलिअे वह तैब अधिकारियोंके पास हमेशा और लगातार पहुंचता रहेगा लोकमतकी राय लेता रहेगा अुसे

* सत्याग्रह यानी सीधी अहिंसक लड़ाअीका प्रयोग गांधीजीने कअी रूपोंमें किया अुदाहरणार्थ अुपवास असहयोग सविनय आज्ञाभंग आदि। आगे संक्षेपमें अिनका विवेचन दिया जा रहा है। —संपादक

शिक्षित बनायेगा और जो भी अुसकी बात सुनना चाहेगा अुसके सामने अपना पक्ष शान्ति और ठंडे तरीकेसे रखेगा। और जब ये अुपाय बह कर चुकेगा तभी सत्याग्रहका आश्रय लेगा। परंतु जब वह भीतरकी, अंतरात्माकी अनिवार्य पुकार सुनकर अेक बार सत्याग्रह छेड़ देगा तब वह सर्वस्वकी बाजी लगा देगा और फिर पीछे कदम नहीं हटायेगा।

यंग अिंडिया, २०–१०–'२७ पृ० ३५३

आनन्द लड़नेमें प्रयत्नमें कष्ट-सहनमें है, न कि विजयमें।

हरिजन, २३–१२–३९, पृ० ३८६

मैं हजारोंको स्वेच्छासे सत्याग्रहमें प्राण गंवाते देखकर अिसलिये दुःखी नहीं होता कि मैं जीवनका मूल्य कम करता हूं मेरी खुशीका कारण यह है कि मैं जानता हूं कि अन्तमें अुसका परिणाम कमसे कम प्राणहानि है। और अिससे भी बड़ी बात तो यह है कि जो अपने प्राण देते हैं वे अूंचे अुठते हैं और अुनके त्यागके कारण संसारकी नैतिक समृद्धि बढ़ती है।

यंग अिंडिया, ८–१०–२५, पृ० ३४५

मेरे अुपवास

मैं कह सकता हूं कि सुधारके अस्त्रके रूपमें बड़े पैमाने पर अुपवासके प्रयोग मैंने १९१३ में शुरू किये। अुपवास मैंने पहले भी बहुत किये थे परन्तु वे १९१३ के ढंग पर नहीं हुअे। मेरी निश्चित राय है कि मेरे अनेक अुपवासोंका सामान्य परिणाम निश्चित रूपसे लाभकारी रहा। अुन अुपवासोंके द्वारा मैं सम्बन्धित लोगोंका और जिनको मैं प्रभावित करना चाहता था अुनका अन्तःकरण हमेशा जाग्रत कर सका। अिन अुपवासोंसे कोअी अन्याय हुआ हो अैसा मुझे मालूम नहीं है। किसी भी अुपवाससे किसी पर दबाव डालनेका मेरा कोअी विचार नहीं था। सच तो यह है कि आलोचित अुपवासोंसे होनेवाले प्रभावके लिअे दबाव शब्दका प्रयोग ही मेरे विचारसे गलत होगा। दबावके माने ये हैं कि किसी मनुष्यके विरुद्ध जिससे शक्तिका प्रयोग करनेवाला अपना कोअी अभीष्ट काम करानेकी आशा रखता है, कोअी हानिकारक शक्ति काममें लाअी

जाय। जो अुपवास मने किये अुनमें छविसका प्रयोग मेरे अपने विरुद्ध ही किया गया था। अवश्य ही खुद कष्ट सहना और जिसे हम प्रभावित करना चाहते हैं अुसे कष्ट देना — अिन दोनोंको अेक ही कक्षामें नहीं रखा जा सकता। अगर मैं अैसे मित्रकी अन्तरात्माको जगानेके लिये अुपवास करूं जिसकी भूल असंदिग्ध है तो शब्दके साधारण अर्थमें यह मुझे दबाना नहीं है।

सच बात यह है कि तमाम आध्यात्मिक अुपवास अुन लोगोंको सदा प्रभावित करते ही हैं जो अुनके प्रभाव-क्षेत्रमें आते हैं। अिसीलिये आध्यात्मिक अुपवासको तप कहा गया है। और सभी प्रकारका तप जिनके लिये किया जाता है अुन पर सदा शुद्धिकारक प्रभाव डालता है।

हां जिससे जिनकार नहीं किया जा सकता कि अुपवास सचमुच दबाव डालनेवाले हो सकते हैं। किसी स्वार्थपूर्ण हेतुकी पूर्तिके लिये किये जानेवाले अुपवास अैसे ही होते हैं। किसी व्यक्तिसे रुपया अैठने या अैसे ही किसी व्यक्तिगत अुद्देश्यको पूरा करनेके लिये किया जानेवाला अुपवास अनुचित प्रभाव या दबाव डालने जैसा ही कहा जायगा। अैसे अनुचित प्रभावका विरोध करनेकी मैं निःसंकोच हिमायत करूंगा। जो अुपवास मेरे विरुद्ध किये गये या जिन्हें करनेकी धमकी दी गयी अुनका मैंने खुब सफलतापूर्वक विरोध किया है। और अगर यह तर्क किया जाय कि स्वार्थपूर्ण और स्वार्थरहित हेतुमें विभाजक रेखा अकसर बहुत बारीक होती है तो मैं जोरके साथ कहूंगा कि जो व्यक्ति किसी अुपवासके हेतुको स्वार्थपूर्ण या हेय मानता है अुसे अुसके सामने झुकनेसे मजबूतीके साथ जिनकार कर देना चाहिये भले ही जिनकार करनेका परिणाम अुपवासीकी मृत्यु ही क्यों न हो। यदि लोग यह आदत डाल लें कि जो अुपवास अुनकी रायमें अनुचित हेतुसे किये जाते हैं अुनकी परवाह न की जाय तो अैसे अुपवासोंमें दबाव और अनुचित प्रभावका रंग नहीं रहेगा। सभी मानव-परिपाटियोंकी भांति अुपवासका भी विहित और अविहित दोनों प्रकारका अुपयोग हो सकता है। परन्तु दुरुपयोगकी संभावनाके कारण सत्याग्रहके शस्त्रागारके जिस बड़े हथियारका परित्याग नहीं किया जा सकता। सत्याग्रहका अुद्देश्य हिंसाको पदभ्रष्ट करके अुसका स्थान लेनेका

है। अुसका प्रयोग अभी शैशव-अवस्थामें है और जिसलिअे अभी पूर्ण नहीं हुआ है। परन्तु अर्वाचीन सत्याग्रहके प्रणेताके नाते मैं अुसके अनेक अुपयोगोंमें से किसीको भी छोड़ नहीं सकता अन्यथा अेक साधककी मग्न भावनासे अुसके प्रयोग करनेका अपना दावा मुझे छोड़ देना होगा।

हरिजन १-९-३३ पृ० ५

असहयोग

मेरा असहयोग मेरे धर्मका अेक अंग होते हुअे भी सहयोगकी भूमिका है। मेरा असहयोग पद्धतियों और प्रणालियोंसे है मनुष्योंसे हरगिज नहीं।

यंग अिंडिया, १२-९-'२९ पृ० ३००

मेरे असहयोगके पीछे सदा बुरेसे बुरे विरोधीसे भी जरासा बहाना मिलते ही सहयोग करनेकी तीव्र अिच्छा रहती है।

यंग अिंडिया ४-४-२५, पृ० ११२

मेरे असहयोगकी जड़में द्वेष नहीं, प्रेम है। मेरा व्यक्तिगत धर्म मुझे किसीसे भी द्वेष करनेसे अेकदम रोकता है। मैंने यह सादा किन्तु महान सिद्धान्त बारह वर्षकी आयुमें अेक पाठ्यपुस्तक द्वारा सीखा था और वह दृढ़ विश्वास अभी तक बना हुआ है। वह दिन-दिन बढ़ रहा है। अुसकी मुझे तीव्र लगन लगी हुअी है।

यंग अिंडिया, ६-८-२५, पृ २७२

अराजकके विरुद्ध सविनय आज्ञाभंग

सविनय आज्ञाभंग अेक नागरिकका जन्मजात अधिकार है। अिस अधिकारको वह छोड़ दे तो अपनी मानवतासे ही च्युत हो जाय। सविनय आज्ञाभंगके बाद अराजकता कभी नहीं आती। द्वेषपूर्ण आज्ञाभंगसे अराजकता आ सकती है। प्रत्येक राज्य द्वेषपूर्ण आज्ञाभंगको बलपूर्वक दबा देता है। न दबाये तो वह नष्ट हो जाय। परन्तु सविनय आज्ञाभंगको दबाना अन्तःकरणको कैद करनेकी कोशिश जैसा है।

यंग अिंडिया, ५-१-२२ पृ० ५

कट्टर सत्याग्रही राज्यकी सत्ताकी तो परवाह ही नहीं करता। वह अैसा विद्रोही बन जाता है जो राज्यके प्रत्येक अनैतिक नियमकी अवहेलना करनेका दावा करता है। जिस प्रकार अुदाहरणार्थ वह कर देनेसे अिनकार कर सकता है, वह अपने रोजमर्राके व्यवहारमें राज्यकी सत्ताको माननेसे अिनकार कर सकता है। वह प्रवेश-निषेध (ट्रेसपास)के कानूनको माननेसे अिनकार कर सकता है और सिपाहियोंसे बात करनेके लिये सैनिक निवासस्थानोंमें घुसनेका दावा कर सकता है। वह धरनेके तरीके पर लगायी गयी पाबन्दियोंको माननेसे अिनकार कर सकता है और पूर्वनिश्चित क्षेत्रके भीतर धरना दे सकता है। ये सब काम करते हुये वह कभी बल-प्रयोग नहीं करता और जब अुसके विरुद्ध बल-प्रयोग किया जाता है तब वह अुसका प्रतिकार कभी नहीं करता।

यंग अिंडिया, १०–११–२१, पृ० ३६२

मेरी पक्की राय है कि सविनय आज्ञाभंग शुद्धसे शुद्ध ढंगका वैध आन्दोलन है। हां यदि अुसका सविनय अर्थात् अहिंसक स्वरूप केवल धोखाधड़ी हो तो वह पतनकारी और तिरस्करणीय हो जाता है।

यंग अिंडिया १५–१२–२१ पृ० ४१९

आज्ञाभंगको सविनय बननेके लिये सच्चा आदरपूर्ण और संयत होना चाहिये अुसमें कभी भी अविनय नहीं होना चाहिये अुसका आधार किसी अच्छी तरह समझे हुये सिद्धान्त पर होना चाहिये वह मनमाना नहीं होना चाहिये और सबसे बड़ी बात तो यह है कि अुसके पीछे कोअी दुर्भाव या द्वेष नहीं होना चाहिये।

यंग अिंडिया २४–३–२०, पृ० ४

सत्याग्रहकी लड़ाअीमें कमसे कम सैनिक चाहिये। सच तो यह है कि अेक ही पूर्ण सत्याग्रही अन्यायके खिलाफ न्यायकी लड़ाअी जीतनेके लिये काफी है।

यंग अिंडिया १०–११–२१ पृ० ३६२

(ग) युद्धका अहिंसक साधन

रक्षाके लिये तलवार नहीं चाहिये

मैं कोओी स्वप्नद्रष्टा नहीं हूं। मैं तो अेक व्यावहारिक आदर्शवादी होनेका दावा करता हूं। अहिंसा-धर्म केवल ऋषियों और संतोंके लिये ही नहीं है। यह आम लोगोंके लिये भी है। जिस तरह हिंसा पशुओंका धर्म है अुसी तरह अहिंसा हमारी मानव-जातिका धर्म है। पशुमें आत्मा सोयी रहती है और वह शरीर-बलके सिवा और किसी धर्मको नहीं जानता। मानव-गौरव किसी अूंचे धर्मको — आत्माकी शक्तिको — माननेका तकाजा करता है।

अिसलिये मैंने भारतके सामने आत्मत्यागका प्राचीन धर्म रखनेका साहस किया है, क्योंकि सत्याग्रह और अुसकी शाखायें असहयोग और सविनय आज्ञाभंग कष्ट-सहनके धर्मके नये नाम ही तो हैं। जिन ऋषियोंने हिंसाके बीचमें अहिंसा-धर्मका आविष्कार किया है अुनकी प्रतिभा न्यूटनसे बड़ी थी। वे स्वयं वेलिंग्टनसे भी बड़े योद्धा थे। वे शस्त्र विद्या जानते थे फिर भी अुन्होंने शस्त्रोंकी व्यर्थता अनुभव की और हारी-थकी दुनियाको सिखाया कि अुसका अुद्धार हिंसासे नहीं परन्तु अहिंसासे होगा।

और अिसलिये मैं भारतके लिये अहिंसाके प्रयोगका समर्थन भारतकी कमजोरीके कारण नहीं कर रहा हूं। मैं भारतकी शक्ति और बलको जानकर अुससे अहिंसाका पालन कराना चाहता हूं। अुसकी ताकतको पहचाननेके लिये हथियारोंकी तालीमकी जरूरत नहीं। हमें जरूरत अिसलिये मालूम होती है कि हम अपनेको हाड़-मांसका पुतला ही मानते हैं। मैं चाहता हूं कि भारत यह अनुभव कर ले कि अुसकी अेक अविनाशी आत्मा है जो हर शारीरिक दुर्बलताको जीतकर अूपर अुठ सकती है और सारी दुनियाकी सम्मिलित भौतिक शक्तिका मुकाबला कर सकती है। राम अपनी वानरोंकी सेना लेकर लंकाके चारों ओर घिरे हुअे गरजते सागरसे अपनेको सुरक्षित माननेवाले बलवान रावणकी मुख्य शक्तिके विरुद्ध डट गये — अिसका क्या अर्थ है? क्या अुसका अर्थ

शरीर-बल पर आध्यात्मिक बलकी विजय ही नहीं है? अगर भारत तलवारका अुसूल अपना ले तो वह अल्पकालीन विजय प्राप्त कर सकता है। लेकिन तब भारत मेरे हृदयमें गर्वकी वस्तु नहीं रह जायगा। मैं भारतसे अिसीलिअे बंधा हुआ हूं कि मैं जो कुछ हूं अुसीके कारण हूं। मेरा पूर्ण विश्वास है कि अुसके पास संसारके लिअे अेक संदेश है। अुसे यूरोपकी अंधी नकल नहीं करनी है। भारत तलवारको अपनायेगा तब मेरी परीक्षाका समय होगा। मुझे आशा है कि मैं अुस समय अनुत्तीर्ण नहीं रहूंगा। मेरे धर्मकी कोअी भौगोलिक सीमायें नहीं है। अगर मुझे अुसमें सजीव श्रद्धा है तो वह स्वयं भारतके प्रति मेरे प्रेमको भी पार कर जायगी। मेरा जीवन अहिंसा-धर्मके द्वारा भारतकी सेवाके लिअे समर्पित है क्योंकि अहिंसाको मैं हिन्दू धर्मकी जड़ मानता हूं।

यंग अिंडिया, ११–८–२० पृ० ३, ४

युद्धमें भाग लेना

पक्का युद्ध-विरोधी होनेके कारण मैंने अवसर मिलने पर भी विनाशक अस्त्रोंके प्रयोगकी तालीम कभी हासिल नहीं की। शायद अिसी कारण मैं मनुष्य-जीवनके सीधे संहारसे बचा रहा। परन्तु जब तक मैं बल पर आधारित किसी शासन प्रणालीके अधीन रहता था और अुसके दिये हुअे अनेक सुभीते और विशेषाधिकार स्वेच्छापूर्वक भोगता था, तब तक जिस समय वह सरकार लड़ाअीमें भाग ले अुस समय अुसकी भरसक मदद करना मेरा धर्म था। हां अुस सरकारसे असहयोग करके अुसकी दी हुअी सुविधायें यथाशक्ति छोड़ देने पर मेरी स्थिति दूसरी हो जाती थी।

अेक अुदाहरण लें। मैं अेक अैसी संस्थाका सदस्य हूं जिसके पास कुछ अेकड़ जमीन है और अुसकी फसलको बन्दरोंका खतरा है। मैं जीव मात्रकी पवित्रताको मानता हूं और अिसलिअे बन्दरोंको कोअी चोट पहुंचाना अहिंसाका भंग समझता हूं। परन्तु फसलकी रक्षाके लिअे बन्दरों पर हमला करानेमें मुझे संकोच नहीं होता। मैं अिस बुराअीसे बचना चाहूंगा। संस्थाको तोड़कर या छोड़कर मैं अुससे बच सकता हूं।

(ग) युद्धका अहिंसक साधन

रक्षाके लिये तलवार नहीं चाहिये

मैं कोमी स्वप्नद्रष्टा नहीं हूं। मैं तो अेक व्यावहारिक आदर्शवादी होनेका दावा करता हूं। अहिंसा-धर्म केवल ऋषियों और संतोंके लिये ही नहीं है। यह आम लोगोंके लिये भी है। जिस तरह हिंसा पशुओंका धर्म है, अुसी तरह अहिंसा हमारी मानव-जातिका धर्म है। पशुमें आत्मा सोमी रहती है और वह शरीर-बलके सिवा और किसी धर्मको नहीं जानता। मानव-गौरव किसी अूंचे धर्मको — आत्माकी शक्तिको — माननेका तकाजा करता है।

अिसलिये मैंने भारतके सामने आत्मत्यागका प्राचीन धर्म रखनेका साहस किया है, क्योंकि सत्याग्रह और अुसकी शाखायें असहयोग और सविनय आज्ञाभंग कष्ट-सहनके धर्मके नये नाम ही तो हैं। जिन ऋषियोंने हिंसाके बीचमें अहिंसा-धर्मका आविष्कार किया है अुनकी प्रतिभा न्यूटनसे बड़ी थी। वे स्वयं वेलिंग्टनसे भी बड़े योद्धा थे। वे शस्त्र विद्या जानते थे फिर भी अुन्होंने शस्त्रोंकी व्यर्थता अनुभव की और हारी थकी दुनियाको सिखाया कि अुसका अुद्धार हिंसासे नहीं परन्तु अहिंसासे होगा।

और अिसलिये मैं भारतके लिये अहिंसाके प्रयोगका समर्थन भारतकी कमजोरीके कारण नहीं कर रहा हूं। मैं भारतकी शक्ति और बलको जानकर अुससे अहिंसाका पालन कराना चाहता हूं। अुसकी ताकतको पहचाननेके लिये हथियारोंकी तालीमकी जरूरत नहीं। हमें जरूरत अिसलिये मालूम होती है कि हम अपनेको हाड़-मांसका पुतला ही मानते हैं। मैं चाहता हूं कि भारत यह अनुभव कर ले कि अुसकी अेक अविनाशी आत्मा है जो हर शारीरिक दुर्बलताको जीतकर अूपर अुठ सकती है और सारी दुनियाकी सम्मिलित भौतिक शक्तिका मुकाबला कर सकती है। राम अपनी वानरोंकी सेना लेकर लंकाके चारों ओर घिरे हुमे गरजते सागरसे अपनेको सुरक्षित माननेवाले दशानन रावणकी अुद्धत शक्तिके विरुद्ध डट गये — अिसका क्या अर्थ है? क्या अुसका अर्थ

शरीर-बल पर आध्यात्मिक बलकी विजय ही नहीं है? अगर भारत तलवारका अुसूल अपना ले तो वह अल्पकालीन विजय प्राप्त कर सकता है। लेकिन तब भारत मेरे हृदयके गर्वकी वस्तु नहीं रह जायगा। मैं भारतसे अिसीलिअे बंधा हुआ हूं कि मैं जो कुछ हूं अुसीके कारण हूं। मेरा पूर्ण विश्वास है कि अुसके पास संसारके लिअे अेक संदेश है। अुसे यूरोपकी अंधी नकल नहीं करनी है। भारत तलवारको अपनायेगा तब मेरी परीक्षाका समय होगा। मुझे आशा है कि मैं अुस समय अनुत्तीर्ण नहीं रहूंगा। मेरे धर्मकी कोअी भौगोलिक सीमाअें नहीं हैं। अगर मुझे अुसमें सजीव श्रद्धा है तो वह स्वयं भारतके प्रति मेरे प्रेमको भी पार कर जायगी। मेरा जीवन अहिंसा-धर्मके द्वारा भारतकी सेवाके लिअे समर्पित है, क्योंकि अहिंसाको मैं हिन्दू धर्मकी जड़ मानता हूं।

यंग अिंडिया, ११–८–२० पृ० ३, ४

युद्धमें भाग लेना

पक्का युद्ध-विरोधी होनेके कारण मैंने अवसर मिलने पर भी विनाशक अस्त्रोंके प्रयोगकी तालीम कभी हासिल नहीं की। शायद अिसी कारण मैं मनुष्य-जीवनके सीधे संहारसे बचा रहा। परन्तु जब तक मैं बल पर आधारित किसी शासन प्रणालीके अधीन रहता था और अुसके दिये हुअे अनेक सुभीते और विशेषाधिकार स्वेच्छापूर्वक भोगता था तब तक जिस समय वह सरकार लड़ाअीमें भाग ले अुस समय अुसकी भरसक मदद करना मेरा धर्म था। हां अुस सरकारसे असहयोग करके अुसकी दी हुअी सुविधाअें यथाशक्ति छोड़ देने पर मेरी स्थिति दूसरी हो जाती थी।

अेक अुदाहरण लें। मैं अेक अैसी संस्थाका सदस्य हूं जिसके पास कुछ अेकड़ जमीन है और अुसकी फसलको बंदरोंका खतरा है। मैं जीव मात्रकी पवित्रताको मानता हूं और अिसलिअे बन्दरोंको कोअी चोट पहुंचाना अहिंसाका भंग समझता हूं। परन्तु फसलकी रक्षाके लिअे बन्दरों पर हमला करानेमें मुझे संकोच नहीं होता। मैं अिस बुराअीसे बचना चाहूंगा। संस्थाको तोड़कर या छोड़कर मैं अुससे बच सकता हूं।

(ग) युद्धका अहिंसक साधन

रक्षाके लिये तलवार नहीं चाहिये

मैं कोअी स्वप्नद्रष्टा नहीं हूं। मैं तो अेक व्यावहारिक आदर्शवादी होनेका दावा करता हूं। अहिंसा-धर्म केवल ऋषियों और संतोंके लिये ही नहीं है। वह आम लोगोंके लिये भी है। जिस तरह हिंसा पशुओंका धर्म है अुसी तरह अहिंसा हमारी मानव-जातिका धर्म है। पशुमें आत्मा सोअी रहती है और वह शरीर-बलके सिवा और किसी धर्मको नहीं जानता। मानव-गौरव किसी अूंचे धर्मको — आत्माकी शक्तिको — माननेका तकाजा करता है।

अिसलिये मैंने भारतके सामने आत्मत्यागका प्राचीन धर्म रखनेका साहस किया है क्योंकि सत्याग्रह और अुसकी शाखायें असहयोग और सविनय आज्ञाभंग कष्ट-सहनके धर्मके नये नाम ही तो हैं। जिन ऋषियोंने हिंसाके बीचमें अहिंसा-धर्मका आविष्कार किया है अुनकी प्रतिभा न्यूटनसे बड़ी थी। वे स्वयं वेलिंग्टनसे भी बड़े योद्धा थे। वे शस्त्र विद्या जानते थे, फिर भी अुन्होंने शस्त्रोंकी व्यर्थता अनुभव की और हारी-थकी दुनियाको सिखाया कि अुसका अुद्धार हिंसासे नहीं परन्तु *अहिंसासे होगा।*

और अिसलिये मैं भारतके लिये अहिंसाके प्रयोगका समर्थन भारतकी कमजोरीके कारण नहीं कर रहा हूं। मैं भारतकी शक्ति और बलको जानकर अुससे *अहिंसाका पालन कराना चाहता हूं।* अुसकी ताकतको पहचाननेके लिये हथियारोंकी तालीमकी जरूरत नहीं। हमें जरूरत अिसलिये मालूम होती है कि हम अपनेको हाड़-मांसका पुतला ही मानते हैं। मैं चाहता हूं कि भारत यह अनुभव कर ले कि अुसकी अेक अविनाशी आत्मा है जो हर शारीरिक दुर्बलताको जीतकर अूपर अुठ सकती है और सारी दुनियाकी सम्मिलित भौतिक शक्तिका मुकाबला कर सकती है। राम अपनी वानरोंकी सेना लेकर लंकाके चारों ओर घिरे हुअे गरजते सागरसे अपनेको सुरक्षित माननेवाले दशानन रावणकी अुद्धत शक्तिके विरुद्ध डट गये — अिसका क्या अर्थ है? क्या अुसका अर्थ

शरीर-बल पर आध्यात्मिक बलकी विजय ही नहीं है? अगर भारत तलवारका युसूल अपना ले तो वह अल्पकालीन विजय प्राप्त कर सकता है। लेकिन तब भारत मेरे हृदयके गर्वकी वस्तु नहीं रह जायगा। मैं भारतसे अिसीलिये बंधा हुआ हूं कि मैं जो कुछ हूं अुसीके कारण हूं। मेरा पूर्ण विश्वास है कि अुसके पास संसारके लिये अेक संदेश है। अुसे यूरोपकी अंधी नकल नहीं करनी है। भारत तलवारको अपनायेगा तब मेरी परीक्षाका समय होगा। मुझे आशा है कि मैं अुस समय अनुत्तीर्ण नहीं रहूंगा। मेरे धर्मकी कोअी भौगोलिक सीमायें नहीं हैं। अगर मुझे अुसमें सजीव श्रद्धा है तो वह स्वयं भारतके प्रति मेरे प्रेमको भी पार कर जायगी। मेरा जीवन अहिंसा-धर्मके द्वारा भारतकी सेवाके लिये समर्पित है क्योंकि अहिंसाको मैं हिन्दू धर्मकी जड़ मानता हूं।

यंग अिंडिया ११–८–२० पृ० ३, ४

युद्धमें भाग लेना

पक्का युद्ध-विरोधी होनेके कारण मैंने अवसर मिलने पर भी विनाशक अस्त्रोंके प्रयोगकी तालीम कभी हासिल नहीं की। शायद अिसी कारण मैं मनुष्य-जीवनके सीधे संहारसे बचा रहा। परन्तु जब तक मैं बल पर आधारित किसी शासन प्रणालीके अधीन रहता था और अुसके दिये हुअे अनेक सुभीते और विशेषाधिकार स्वेच्छापूर्वक भोगता था, तब तक जिस समय वह सरकार लड़ाअीमें भाग ले अुस समय अुसकी भरसक मदद करना मेरा धर्म था। हां अुस सरकारसे असहयोग करके अुसकी दी हुअी सुविधायें यथासंभव छोड़ देने पर मेरी स्थिति दूसरी हो जाती थी।

अेक अुदाहरण लें। मैं अेक अैसी संस्थाका सदस्य हूं जिसके पास कुछ अेकड़ जमीन है और अुसकी फसलको बंदरोंका खतरा है। मैं जीव मात्रकी पवित्रताको मानता हूं और अिसलिये बन्दरोंको कोअी चोट पहुंचाना अहिंसाका भंग समझता हूं। परन्तु फसलकी रक्षाके लिये बन्दरों पर हमला करानेमें मुझे संकोच नहीं होता। मैं अिस बुराअीसे बचना चाहूंगा। संस्थाको छोड़कर या छोड़कर मैं अुससे बच सकता हूं।

यह मैं अिसलिअे नहीं करता कि मुझे कोअी अैसा समाज मिल सकनेकी आशा नहीं जहां खेती नहीं होगी और अिसलिअे जीवोंका नाश न होगा। अिसलिअे मैं डरते-डरते नम्रता और पश्चात्तापके साथ बन्दरों पर किये जानेवाले आक्रमणमें मैं शरीक होता हूं और आशा रखता हूं कि किसी न किसी दिन अिससे बचनेका कोअी रास्ता निकल आयेगा।

अिसी प्रकार मैंने तीन युद्धोंमें भाग लिया। मैं जिस समाजका सदस्य हूं अुससे सम्बन्ध-विच्छेद नहीं कर सकता था, अैसा करना मेरे लिअे पागलपन होता। और अुन तीनों अवसरों पर मने ब्रिटिश सरकारसे असहयोग करनेका कोअी विचार नहीं किया। आज सरकारके सम्बन्धमें मेरी स्थिति बिलकुल भिन्न है और अिसलिअे मुझे अुसके युद्धोंमें स्वेच्छापूर्वक भाग नहीं लेना चाहिये और अगर मुझे हथियार अुठाने या युद्धके दूसरे कामोंमें भाग लेनेको विवश किया जाय तो मुझे कैदका और फांसी तकका खतरा अुठा लेना चाहिये।

परन्तु अिससे भी पहेली सुलझती नहीं। अगर राष्ट्रीय सरकार हो तो मैं लड़ाअीमें कोअी सीधा हिस्सा तो नहीं लूंगा लेकिन मैं अैसे अव सरोंकी कल्पना कर सकता हूं जब सैनिक शिक्षा चाहनेवालोंके लिअे सैनिक शिक्षाकी व्यवस्था कर देनेके पक्षमें राय देना मेरा फर्ज होगा, क्योंकि मैं जानता हूं कि अुसके सब लोग अहिंसामें अुस हद तक विश्वास नहीं रखते जिस हद तक मैं रखता हूं। किसी व्यक्ति या समाजको जबरदस्ती अहिंसक बनाना संभव नहीं है।

अहिंसा अत्यन्त रहस्यमय ढंगसे काम करती है। अहिंसाकी दृष्टिसे अकसर अेक मनुष्यके कार्योंका विश्लेषण नहीं किया जा सकता। अिसी प्रकार अुसके कार्य हिंसक दिखाअी दे सकते हैं जब कि वह अूंचेसे अूंचे अर्थमें सर्वथा अहिंसक हो और बादमें अैसा ही पाया जाय। तब अपने आचरणके लिअे मैं अितना ही दावा कर सकता हूं कि जो अुदाहरण दिया गया है अुसमें मेरा आचरण अहिंसाके हितको दृष्टिमें रखकर हुआ था। किसी नीच राष्ट्रीय अथवा अन्य हितका अुसमें कोअी खयाल नहीं था।

यंग अिंडिया, १३-९-'२८, पृ० ३०८

निःशस्त्रीकरण

यूरोपको आत्महत्या नहीं करनी है तो अुसे किसी न किसी दिन आम हथियारबन्दी करनी ही होगी। मगर अुसके शुरू होनेसे पहले किसी राष्ट्रको निःशस्त्र होनेका साहस करना होगा और बड़ी जोखिम अुठानी पड़ेगी। अगर कभी सौभाग्यसे अैसा हुआ तो अुस राष्ट्रकी अहिंसाका स्तर स्वाभाविक रूपमें अितना अूंचा अुठ जायगा कि अुसका सर्वत्र आदर होने लगेगा। अुसके निर्णय सही अुसके निश्चय दृढ़ और अुसकी वीरतापूर्ण आत्मत्यागकी क्षमता महान होगी और वह जितना अपने लिअे जीना चाहेगा अुतना ही दूसरे राष्ट्रोंके लिअे भी जीना चाहेगा।

यंग अिंडिया ८–१०–२५ पृ० ३४५

अफीमकी पैदावारकी तरह दुनियामें तलवारोंके बनाने पर भी पाबन्दी लगानेकी जरूरत है। शायद अफीमकी अपेक्षा दुनियामें तलवार अधिक दुःखके लिअे जिम्मेवार है।

यंग अिंडिया १९–११–२५, पृ० ३९७

अगर कोअी शासक न हो तो शस्त्रास्त्रके लिअे कोअी कारण नहीं रहेगा।

हरिजन १२–११–३८ पृ० ३२८

विश्वशांति

अगर मानव-जातिके माने हुअे नेता जिनके हाथमें विनाशक यंत्रोंका नियंत्रण है अुनका प्रयोग पूरी तरह समझकर छोड़ दें तो स्थायी शान्ति स्थापित हो सकती है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि बुराअीकी जड़ जीते जागते अीश्वरमें जीती-जागती श्रद्धाका अभाव है। यह प्रथम श्रेणीका मानव-दुर्भाग्य है कि संसारकी वे जातियां जो अीसाके सन्देशमें विश्वास रखती हैं और जो अुन्हें शान्तिका राजा बताती हैं वास्तविक व्यवहारमें अुस विश्वासको बहुत कम प्रगट करती हैं। यह देखकर दुःख होता है कि सच्चे अीसाअी पादरी अीसाके सन्देशका क्षेत्र चुने हुअे व्यक्तियों तक ही सीमित रखते हैं। मुझे बचपनसे सिखाया गया है और मैंने अनुभवसे सिद्ध

सत्यको आचमा लिया है कि मानव-जातिके प्रमुख गुण छोटेसे छोटे मानव भी अपनेमें पैदा कर सकते हैं। यह असंदिग्ध सार्वत्रिक संभावना ही मनुष्य-समाजको अीश्वरकी दूसरी सृष्टिसे अलग करती है। अगर अेक भी राष्ट्र शस्त्रत्यागका यह सर्वोच्च कर्म बिलाशर्त कर दे तो हममें से बहुतोंको अपने जीवन-कालमें ही पृथ्वी पर प्रत्यक्ष शान्ति स्थापित हुअी दिखेगी।

हरिजन, १८–६–३८, पृ० १५१

मैं अपना दृढ़ विश्वास दोहराता हूं कि मित्रराष्ट्रोंके लिअे अथवा संसारके लिअे अुस वक्त तक शान्ति स्थापित नहीं होगी, जब तक वे युद्धकी अुपयोगितामें अपना विश्वास छोड़ नहीं देंगे और सभी जातियों तथा राष्ट्रोंकी स्वतंत्रता और समानताके आधार पर सच्ची शान्ति स्थापित करनेका निश्चय न कर लेंगे।

दि बॉम्बे क्रॉनिकल १८–४–'४५

२६

प्राणी-जगतके प्रति प्रेम

(क) प्राणियोंकी हत्या न की जाय

अहिंसा व्यापक वस्तु है। हम हिंसाकी होलीके बीच घिरे हुअे पामर प्राणी हैं। यह वचन गलत नहीं है कि जीव जीव पर जीता है। मनुष्य अेक क्षणके लिअे भी बाह्य हिंसाके बिना जी नहीं सकता। खाते-पीते, अुठते-बैठते सभी क्रियाओंमें अिच्छा-अनिच्छासे वह कुछ-न-कुछ हिंसा तो करता ही रहता है। यदि अिस हिंसासे छूटनेके लिअे वह महाप्रयत्न करता है, अुसकी भावनामें अनुकम्पा होती है, वह सूक्ष्म-से-सूक्ष्म जंतुका भी नाश नहीं चाहता और यथाशक्ति अुसे बचानेका प्रयत्न करता है, तो वह अहिंसाका पुजारी है। अुसके कार्योंमें निरन्तर संयमकी वृद्धि होगी अुसमें निरंतर करुणा बढ़ती रहेगी। किन्तु कोअी देहधारी बाह्य हिंसासे सर्वथा मुक्त नहीं हो सकता।

फिर, अहिंसाकी तहमें ही अद्वैत-भावना निहित है। और, यदि प्राणी मात्रमें अभेद हो, तो अेकके पापका प्रभाव दूसरे पर पड़ता है अिस कारण भी मनुष्य हिंसासे बिलकुल अछूता नहीं रह सकता। समाजमें रहनेवाला मनुष्य समाजकी हिंसामें, अनिच्छासे ही क्यों न हो साझेदार बनता है।

आत्मकथा पृ० ३०५ ०६ १९५७

प्राण लेना कर्तव्य हो सकता है। अिस स्थिति पर हम विचार करें।

शरीरको कायम रखनेके लिअे जीवोंका जितना नाश हम जरूरी समझते हैं अुतना हम अवश्य करते हैं। अिस प्रकार हम आहारके लिअे वनस्पतिमें रहनेवाले जीवनका अथवा किसी दूसरे प्रकारके जीवनका नाश करते हैं। और स्वास्थ्यके खातिर हम कृमि-नाशक दवाअियां वगैरा अिस्तेमाल करके मच्छरों आदिको नष्ट करते हैं और हम यह नहीं मानते कि अैसा करके हम अधर्मके अपराधी होते हैं।

यह तो हुआ अपने ही लिअे। दूसरोंके खातिर अर्थात् जातिकी भलाअीके लिअे हम मांसाहारी पशुओंको मारते हैं। जब शेर और चीते अुनके गांवोंको सताते हैं तो ग्रामीण लोग अुन्हें मारना या मरवाना अपना धर्म समझते हैं।

कुछ हालतोंमें मानव-संहार भी जरूरी हो सकता है। मान लीजिये कोअी आदमी पागल होकर तलवार हाथमें लिअे आवेशकी हालतमें अिधर अुधर घूमता है और जो भी मिल जाय अुसीको मारने लगता है। कोअी भी अुसे जिन्दा पकड़नेका साहस नहीं करता। अैसी स्थितिमें जो आदमी अिस पागलका काम तमाम कर देता है वह समाजकी कृतज्ञता प्राप्त करेगा और परोपकारी मनुष्य माना जायगा।

अहिंसाकी दृष्टिसे अैसे आदमीको मार डालना प्रत्येकका स्पष्ट कर्तव्य है। अपवाद कहें तो वास्तवमें अेक ही है। कोअी योगी अिस खतरनाक आदमीका क्रोध शान्त कर सके तो वह अुसे न मारे। मगर यहां हम अैसे प्राणियोंकी बात नहीं कर रहे हैं जो लगभग पूर्णताको प्राप्त कर चुके हैं हम साधारण भूल करनेवाले मानव प्राणियोंके समाजके कर्तव्यका विचार कर रहे हैं।

मेरे दृष्टान्तोंके अुपयुक्त होनेके बारेमें मतभेद हो सकता है। परन्तु यदि वे अपर्याप्त हैं तो दूसरे आसानीसे खोजे जा सकते हैं। अुनका तात्पर्य अितना ही है कि प्राण लेनेसे परहेज करना किसी भी स्थितिमें नितान्त कर्तव्य नहीं हो सकता।

बात यह है कि अहिंसाका मतलब केवल न मारना ही नहीं है। हिंसाका अर्थ है क्रोध या स्वार्थवश अथवा हानि पहुंचानेके हेतुसे किसीको पीड़ित करना या किसीके प्राण लेना। असा न करना अहिंसा है।

जो वैद्य आपको कड़वी दवा बताता है वह आपको कष्ट देता है परन्तु हिंसा नहीं करता। अगर वह जरूरी होने पर भी कड़वी दवा नहीं बताता तो वह अपने अहिंसाके फर्जमें चूकता है। जो सर्जन बीमारको पीड़ा पहुंचानेके डरसे किसी सड़े हुअे अवयवको काट देनेसे हिचकिचाता है वह हिंसाका अपराधी है। कोअी हत्यारा हमारे संरक्षित व्यक्तिको मारने जा रहा है और किसी दूसरे अुपायसे हम अुसे रोक नहीं सकते तो असे मौके पर हत्यारेको न मारनेसे पुण्य नहीं, पाप होता है। असी स्थितिमें हम अहिंसा नहीं करते अहिंसाका गलत अर्थ लगाकर हिंसा करते हैं।

अब हम अहिंसाकी जड़को देखें। वह आत्यंतिक निःस्वार्थता है। निःस्वार्थताका अर्थ है अपने शरीरकी जरा भी परवाह न होना। जब किसी ॠषिने देखा कि मनुष्य असंख्य छोटे-बड़े प्राणियोंका अपने ही शरीरके खातिर संहार कर रहा है तो अुन्हें अुसके अज्ञानसे आघात लगा। अुन्हें मनुष्यके अिस प्रकार नश्वर शरीरके पिंजड़ेमें बन्द अमर आत्माको भूल जाने और आत्माके शाश्वत आनन्दकी अपेक्षा क्षणिक शरीर-सुखको अधिक महत्त्व देने पर दया आअी। अुन्होंने अिस बातसे सम्पूर्ण आत्मोत्सर्गके धर्मका निष्कर्ष निकाला। अुन्होंने देखा कि यदि मनुष्य अपने आपको अर्थात् सत्यको पहचानना चाहता है, तो असा वह शरीरसे सर्वथा अनासक्त होकर अर्थात् दूसरे सब प्राणियोंको अपनी तरफसे सुरक्षित महसूस करा कर ही कर सकता है। यही अहिंसाका मार्ग है।

अिस सत्यको पहचान लेने पर पता चलता है कि हिंसाका पाप केवल प्राण लेनेमें ही नहीं है परन्तु अपने नश्वर शरीरके खातिर प्राण लेनेमें है। अिसलिअे खाने-पीने आदिकी प्रक्रियामें जो भी विनाश होता

है वह स्वार्थपूर्ण है और अिसलिअे हिंसा है। परन्तु मनुष्य अुसे अनिवार्य मानकर सहन करता है। परन्तु यातना-पीड़ित जीवोंको नष्ट करना अुन्हींकी शान्तिके लिअे होनेके कारण हिंसा नहीं समझा जा सकता। अपने संरक्षितोंकी रक्षाके लिअे किया गया अनिवार्य विनाश भी हिंसा नहीं माना जा सकता।

तर्ककी अिस सरणीका बड़ा दुरुपयोग हो सकता है। परन्तु अुसका कारण यह नहीं कि तर्क दोषपूर्ण है। कारण यह है कि मनुष्यमें अपने स्वार्थ या अहंकारकी तुष्टिके लिअे अपनेको धोखा देनेका जो भी बहाना मिल जाय अुसे पकड़ लेनेकी जन्मजात कमजोरी है। परन्तु अिस खतरेके कारण हमें अहिंसाके सच्चे स्वभावकी व्याख्या करनेसे बचना नहीं चाहिये। अिस प्रकार अुपरोक्त विवेचनसे हम नीचे लिखे परिणामों पर पहुंचते हैं

(१) किसी हद तक दूसरे शरीरोंका नाश किये बिना अपने शरीरको कायम रखना असंभव है।

(२) सभीको कुछ जीवोंका नाश करना पड़ता है

(क) अपने शरीरोंको कायम रखनेके लिअे

(ख) अपने संरक्षितोंकी रक्षाके लिअे अथवा

(ग) कभी कभी जिनके प्राण लिये जाते हैं अुनके खातिर।

(३) अंश (२) के (क) और (ख) भागोंका अर्थ थोड़े या बहुत हद तक हिंसा है। (ग) में कोअी हिंसा नहीं है, अिसलिअे वह अहिंसा है। (क) और (ख) में हिंसा अनिवार्य है।

(४) अिसलिअे अेक प्रगतिशील अहिंसावादी (क) और (ख) में वर्णित कमसे कम हिंसा करेगा तो सही परन्तु अनिवार्य होने पर पूरे तथा परिपक्व विचारके बाद और अुससे बचनेके तमाम अुपाय कर लेनेके बाद ही करेगा।

यंग अिंडिया ४–११–२६ पृ० ३८४–८५

किसी जीवित प्राणीको गुस्से या स्वार्थपूर्ण अिरादेसे पीड़ा पहुंचाना अुसका बुरा चाहना या अुसके प्राण लेना हिंसा है। अिसके विपरीत शान्त और स्पष्ट निर्णयके बाद किसी प्राणीको शुद्ध निःस्वार्थ भावसे

भीश्वरकी कृपा मानना यदि वहम हो तो यह वहम भी संग्रह करने जैसा है।

आत्मकथा, पृ० ३७३, १९५७

मेरी अहिंसा मेरी अपनी ही है। मैं जानवरोंको न मारनेका सिद्धान्त पूर्ण रूपसे स्वीकार करनेमें असमर्थ हूं। जो पशु मनुष्यको हानि पहुंचाते या मारकर खा जाते हैं, अुनकी जान बचानेकी मुझमें कोभी भावना नहीं है। मैं अुनकी सन्तान-वृद्धिमें सहायक होना अनुचित समझता हूं। भिस-लिभे मैं चीटियों बन्दरों या कुत्तोंको नहीं खिलाअूंगा। मैं अुनके प्राण बचानेके खातिर किसी मनुष्यकी जान कभी कुरबान नहीं करूंगा।

भिस ढंगसे विचार करते हुअे मैं भिस नतीजे पर पहुंचा हूं कि जहां बन्दर मनुष्यके सुखके लिभे खतरा बन गये हों वहां अुन्हें समाप्त कर देना क्षम्य है, भैसा प्राणी-संहार धर्म हो जाता है। यह प्रश्न अुठ सकता है कि यह नियम मानव प्राणियों पर भी लागू क्यों नहीं होना चाहिये? वह भिसलिभे लागू नहीं किया जा सकता कि वे कितने ही बुरे हों तो भी वैसे ही हैं जैसे हम हैं। आदमीको भगवानने बुद्धिकी शक्ति दी है, जो पशुको नहीं दी।

हरिजन ५–५–'४६ पृ० १२३

(ख) शाकाहार

मेरे खयालमें बकरेके जीवनका मूल्य मनुष्यके जीवनसे कम नहीं है। मनुष्य-देहको निबाहनेके लिभे मैं बकरेकी देह लेनेको तयार नहीं होअूंगा। मैं यह मानता हूं कि जो जीव जितना अधिक अपंग है, अुतना ही अुसे मनुष्यकी क्रूरतासे बचनेके लिभे मनुष्यका आश्रय पानेका अधिक अधिकार है।

आत्मकथा पृ० २०४–०५, १९५७

सही हो या गलत पर मैंने यह धर्म माना है कि मनुष्यको मांसा-दिक नहीं खाना चाहिये। जीवनके साधनोंकी भी सीमा होती है। कुछ बातें भैसी हैं जो जीनेके लिभे भी हमें नहीं करनी चाहिये।

आत्मकथा पृ० २१४, १९५७

मैं नहीं मानता कि मांसाहार हमारे लिये किसी भी स्थितिमें और किसी आबोहवामें जहां मनुष्य मामूली तौर पर जिन्दा रह सकता है जरूरी है। मैं मांसाहारको मानव-जातिके लिये अनुपयुक्त समझता हूं। अगर हम पशु-जगतसे श्रेष्ठ हैं तो हम अुसकी नकल करके भूल करते हैं। अनुभव सिखाता है कि जो अपने विकारोंका दमन करना चाहते हैं अुनके लिये मांसाहार अनुपयुक्त है।

परन्तु चरित्र-निर्माण या अिन्द्रिय-दमनमें आहारके महत्त्वको बहुत बढ़ा-चढ़ाकर समझना अनुचित है। आहार अेक प्रबल तत्त्व है और अुसकी अुपेक्षा नहीं करना चाहिये। मगर जैसा भारतमें अक्सर होता है, सारा धर्म ही आहारमें मान बैठना अुतना ही गलत है जितना आहारके मामलेमें संयमकी कुछ भी परवाह न करना और अपनी रुचिको बेलगाम छोड़ देना है। शाकाहार हिन्दू धर्मकी अनुपम देनोंमें से अेक है। अुसे यों ही नहीं छोड़ा जा सकता। अिसलिये यह भूल सुधार लेना जरूरी है कि शाकाहारने हमें मन या शरीरसे कमजोर और निष्क्रिय अथवा जड़ बना दिया है। बड़ेसे बड़े हिन्दू सुधारक अपनी पीढ़ीमें सबसे सक्रिय व्यक्ति रहे हैं और वे सबके सब शाकाहारी रहे हैं। शंकर या दयानन्दके युगमें अुनसे अधिक क्रियाशीलताका परिचय कौन दे सका?

अपने आहारका चुनाव श्रद्धा पर आधार रखनेवाली चीज नहीं है। यह तो अैसा सवाल है जो हरअेकको बुद्धिसे तय करना चाहिये। खास तौर पर पश्चिममें शाकाहार पर काफी साहित्य पैदा हो गया है, जिसका अध्ययन करके कोअी भी सत्यका शोधक लाभ अुठा सकता है। अनेक मशहूर डॉक्टरोंने अिस साहित्यमें योग दिया है। यहां भारतमें शाकाहारके लिये हमें किसी प्रोत्साहनकी जरूरत नहीं हुअी, क्योंकि अुसे आज तक अत्यंत वांछनीय और आदरणीय वस्तुके रूपमें स्वीकार किया गया है।

यंग अिंडिया ७–१०–२६ पृ० ३४७

यह याद रखना चाहिये कि केवल जीवदयासे हम अपने भीतरी षड्रिपुओं को अर्थात् काम क्रोध लोभ मोह मद और मत्सरको नहीं जीत सकते। जिसने अपने आपको पूरी तरह जीत लिया हो जो सबके

प्रति सद्भाव और प्रेमसे परिपूर्ण हो और जिसके सब काम प्रेमधर्मसे प्रेरित होते हों — अैसा आदमी मांसाहारी हो तो भी मेरा सिर अुसके सामने अत्यंत आदरपूर्वक झुक जायगा। दूसरी ओर जो आदमी रोज कीड़े-मकोड़ोंको खिलाता हो और जीवहिंसा न करता हो, परन्तु काम और क्रोधमें डूबा हुआ हो, अुसकी जीवदयामें कोअी सार नहीं है। वह अेक यांत्रिक कर्म है जिसका कोअी आध्यात्मिक मूल्य नहीं। वह किससे भी बुरी चीज मानी भीतरी भ्रष्टाचारको छिपानेके लिये दंभका परदा हो सकता है।

हरिजन, १५-९-'४०, पृ० २८५

(ग) दूध

"जब तक आप दूध न लेंगे, मैं आपके शरीरको फिरसे हृष्ट-पुष्ट न बना सकूंगा। अुसे पुष्ट बनानेके लिये आपको दूध लेना चाहिये और लोहे तथा आर्सेनिककी पिचकारियां लेनी चाहिये। यदि आप अितना करें तो आपके शरीरको पुनः पुष्ट करनेकी गारन्टी मैं लेता हूं।"

मैंने जवाब दिया "पिचकारी लगाअिये लेकिन दूध मैं नहीं लूंगा।"

डॉक्टरने पूछा "दूधके सम्बन्धमें आपकी प्रतिज्ञा क्या है?"

"यह जानकर कि गाय-भैंस पर फूंकेकी क्रिया की जाती है मुझे दूधसे नफरत हो गयी है। और यह तो मैं सदासे मानता रहा हूं कि दूध मनुष्यका आहार नहीं है। अिसलिये मैंने दूध छोड़ दिया है।"

यह सुनकर कस्तूरबाअी, जो मेरी खटियाके पास खड़ी थी, बोल अुठी "तब तो बकरीका दूध आप जरूर ले सकते हैं।"

डॉक्टर बोले "आप बकरीका दूध लें तो मेरा काम बन जाय।"

मैं गिरा। सत्याग्रहकी लड़ाअीके मोहने मेरे अन्दर जीनेका लोभ पैदा कर दिया, और मैंने प्रतिज्ञाके अक्षरार्थके पालनसे संतोष मानकर अुसकी आत्माका हनन किया। यद्यपि दूधकी प्रतिज्ञा लेते समय मेरे सामने गाय-भैंस ही थीं, फिर भी मेरी प्रतिज्ञा दूधमात्रकी मानी जानी चाहिये। और, जब तक मैं पशुके दूधमात्रको मनुष्यके आहारके रूपमें निषिद्ध मानता हूं तब तक मुझे अुसे लेनेका अधिकार नहीं, अिस बातको जानते हुअे भी मैं बकरीका दूध लेनेको तैयार हो गया। सत्यके पुजारीने

सत्याग्रहकी लड़ाओीके लिये जीनेकी अिच्छा रखकर अपने सत्यको लांछित किया।

अहिंसाकी दृष्टिसे आहारके मेरे प्रयोग मुझे प्रिय हैं। अुनसे मुझे आनन्द प्राप्त होता है। यह मेरा विनोद है। परन्तु बकरीका दूध मुझे आज अिस दृष्टिसे नहीं अखरता। वह अखरता है सत्यकी दृष्टिसे। मुझे अैसा भास होता है कि मैं अहिंसाको जितना पहचान सका हूं सत्यको अुससे अधिक पहचानता हूं। मेरा अनुभव यह है कि अगर मैं सत्यको छोड़ दूं, तो अहिंसाकी भारी गुत्थियां मैं कभी सुलझा नहीं सकूंगा। सत्यके पालनका अर्थ है लिये हुअे व्रतके शरीर और आत्माकी रक्षा शब्दार्थ और भावार्थका पालन। मुझे हर दिन यह बात खटकती रहती है कि मैंने दूधके बारेमें व्रतकी आत्माका — भावार्थका — हनन किया है। यह जानते हुअे भी म यह नहीं जान सका कि अपने व्रतके प्रति मेरा धर्म क्या है, अथवा कहिये कि मुझमें अुसे पालनेकी हिम्मत नहीं है। दोनों बातें अेक ही हैं, क्योंकि शंकाके मूलमें श्रद्धाका अभाव रहता है। हे अीश्वर तू मुझे श्रद्धा दे!

आत्मकथा, ३९४–९५, १९५७

(घ) प्राणियोंकी चीर-फाड़

मैं जीवोंकी चीर-फाड़से सम्पूर्ण अन्तःकरणसे घृणा करता हूं। कथित विज्ञान और मानवताके नाम पर निर्दोष प्राणियोंके अक्षम्य संहारसे मुझे नफरत है और निर्दोष रक्तसे सने हुअे तमाम वैज्ञानिक आविष्कारोंको मैं बिलकुल निकम्मे समझता हूं। अगर कोअी कहे कि जीवोंकी चीर-फाड़के बिना रक्त-संचारके सिद्धान्तका पता नहीं लगाया जा सकता था तो मैं कहूंगा कि अुसके बिना मानव-जातिका काम अच्छी तरह चल सकता था। और मुझे वह दिन साफ तौर पर आता दिखाअी दे रहा है जब पश्चिमके अीमानदार वैज्ञानिक ज्ञानप्राप्तिके मौजूदा तरीकों पर पाबन्दियां लगायेंगे। भविष्यमें केवल मानव-परिवारका ही नहीं बल्कि सभी प्राणियोंका लिहाज रखा जायगा और जैसे हमें धीरे धीरे किन्तु निश्चित रूपमें पता लग रहा है कि यह मान बैठना भूल है कि हिन्दू अपने समाजके पांचवें

प्रति सद्भाव और प्रेमसे परिपूर्ण हो और जिसके सब काम प्रेमधर्मसे प्रेरित होते हों — अैसा आदमी मांसाहारी हो तो भी मेरा सिर अुसके सामने अत्यंत आदरपूर्वक झुक जायगा। दूसरी ओर जो आदमी रोज कीड़े-मकोड़ोंको खिलाता हो और जीवहिंसा न करता हो, परन्तु काम और क्रोधमें डूबा हुआ हो अुसकी जीवदयामें कोअी सार नहीं है। वह-अेक यांत्रिक कर्म है जिसका कोअी आध्यात्मिक मूल्य नहीं। वह जिससे भी बुरी चीज यानी भीतरी भ्रष्टाचारको छिपानेके लिअे दंभका परदा हो सकता है।

हरिजन, १५-९-'४०, पृ० २८५

(ग) दूध

"जब तक आप दूध न लेंगे मैं आपके शरीरको फिरसे हृष्ट-पुष्ट न बना सकूंगा। आपको पुष्ट बनानेके लिअे आपको दूध लेना चाहिये और लोहे तथा आर्सेनिककी पिचकारियां लेनी चाहिये। यदि आप जितना करें तो आपके शरीरको पुन पुष्ट करनेकी गारन्टी मैं लेता हूं।"

मैंने जवाब दिया "पिचकारी लगाअिये लेकिन दूध मैं नहीं लूंगा।"

डॉक्टरने पूछा "दूधके सम्बन्धमें आपकी प्रतिज्ञा क्या है?"

यह जानकर कि गाय-भैंस पर फूंकेकी क्रिया की जाती है मुझे दूधसे नफरत हो गयी है। और यह तो मैं सदासे मानता रहा हूं कि दूध मनुष्यका आहार नहीं है। जिसलिअे मैंने दूध छोड़ दिया है।

यह सुनकर कस्तूरबाअी, जो मेरी खटियाके पास खड़ी थी बोल अुठी "तब तो बकरीका दूध आप जरूर ले सकते हैं।"

डॉक्टर बोले "आप बकरीका दूध लें तो मेरा काम बन जाय।"

मैं गिरा। सत्याग्रहकी लड़ाअीके मोहने मेरे अन्दर जीनेका लोभ पैदा कर दिया, और मैंने प्रतिज्ञाके अक्षरार्थके पालनसे संतोष मानकर अुसकी आत्माका हनन किया। यद्यपि दूधकी प्रतिज्ञा लेते समय मेरे सामने गाय-भैंस ही थीं, फिर भी मेरी प्रतिज्ञा दूधमात्रकी मानी जानी चाहिये। और, जब तक मैं पशुके दूधमात्रको मनुष्यके आहारके रूपमें निषिद्ध मानता हूं, तब तक मुझे अुसे लेनेका अधिकार नहीं, जिस बातको जानते हुअे भी मैं बकरीका दूध लेनेको तैयार हो गया। सत्यके पुजारीने

सत्याग्रहकी लड़ाओके लिओ जीनेकी अिच्छा रखकर अपने सत्यको लांछित किया।

अहिंसाकी दृष्टिसे आहारके मेरे प्रयोग मुझे प्रिय हैं। अुनसे मुझे आनन्द प्राप्त होता है। वह मेरा विनोद है। परन्तु बकरीका दूध मुझे आज अिस दृष्टिसे नहीं अखरता। वह अखरता है सत्यकी दृष्टिसे। मुझे अैसा भास होता है कि मैं अहिंसाको जितना पहचान सका हूं सत्यको अुससे अधिक पहचानता हूं। मेरा अनुभव यह है कि अगर मैं सत्यको छोड़ दूं तो अहिंसाकी भारी गुत्थियां मैं कभी सुलझा नहीं सकूंगा। सत्यके पालनका अर्थ है, लिये हुओ व्रतके शरीर और आत्माकी रक्षा, शब्दार्थ और भावार्थका पालन। मुझे हर दिन यह बात खटकती रहती है कि मैंने दूधके बारेमें व्रतकी आत्माका — भावार्थका — हनन किया है। यह जानते हुओ भी मैं यह नहीं जान सका कि अपने व्रतके प्रति मेरा धर्म क्या है, अथवा कहिये कि मुझमें अुसे पालनेकी हिम्मत नहीं है। दोनों बातें अेक ही हैं क्योंकि शंकाके मूलमें श्रद्धाका अभाव रहता है। हे ओश्वर, तू मुझे श्रद्धा दे!

आत्मकथा, २९४–९५ १९५७

(घ) प्राणियोंकी चीर-फाड़

मैं जीवोंकी चीर-फाड़से सम्पूर्ण अन्तःकरणसे घृणा करता हूं। कथित विज्ञान और मानवताके नाम पर निर्दोष प्राणियोंके असम्य संहारसे मुझे नफरत है और निर्दोष रक्तसे सने हुओ तमाम वैज्ञानिक आविष्कारोंको मैं बिलकुल निकम्मे समझता हूं। अगर कोओ कहे कि जीवोंकी चीर-फाड़के बिना रक्त-संचारके सिद्धान्तका पता नहीं लगाया जा सकता था तो मैं कहूंगा कि अुसके बिना मानव-जातिका काम अच्छी तरह चल सकता था। और मुझे वह दिन साफ तौर पर आता दिखाओ दे रहा है जब पश्चिमके ओमानदार वैज्ञानिक ज्ञानप्राप्तिके मौजूदा तरीकों पर पाबन्दियां लगायेंगे। भविष्यमें केवल मानव-परिवारका ही नहीं बल्कि सभी प्राणियोंका लिहाज रखा जायगा और जैसे हमें धीरे धीरे किन्तु निश्चित रूपमें पता चल रहा है कि यह मान बैठना भूल है कि हिन्दू अपने समाजके पांचवें

भागको पतित रखकर फल-फूल सकते हैं या पश्चिमके लोग पूर्वी और अफ्रीकी राष्ट्रोंके शोषण और पतन पर अपने वुठ सकते हैं या अपना पोषण करते रह सकते हैं, वैसे ही समय पाकर हम यह अनुभव कर लेंगे कि निम्न श्रेणीके जीवों पर हमारा जो प्रभुत्व है वह अुनके संहारके लिये नहीं, परन्तु अुनके और हमारे समान लाभके लिये है। कारण मुझे यकीन है कि जैसे मेरे आत्मा है वैसे ही अुनके भी है।

यंग अिंडिया १७-१२-२५ पृ० ४४०

पृथ्वीको नमस्कार करके हम पृथ्वीकी तरह ही नम्र बनना सीखते हैं या हमें सीखना चाहिये। जो प्राणी अुसे रौंदते हैं अुनका भी वह पालन करती है। अिसलिये वह विष्णुकी पत्नी होने लायक ही है। मेरी रायमें यह कल्पना सत्यके विरुद्ध नहीं है। अुलटे वह सुन्दर है और अीश्वरकी सर्वव्यापकताके विचारसे पूरी तरह उचित है। अीश्वरके लिये कोअी वस्तु जड़ नहीं है। हम तो मिट्टीके ही बने हुअे हैं। मिट्टी न हो तो हम भी न हों। मैं अीश्वरको पृथ्वीके द्वारा अनुभव करके अीश्वरके साथ अधिक निकटता अनुभव करता हूं। पृथ्वीको नमस्कार करते ही मैं अीश्वरके प्रति अपना ऋण महसूस करता हूं। और अगर मैं अुस माताका सपूत हूं तो मैं तुरन्त अपनेको मिट्टी बना लूंगा और न केवल छोटे-से-छोटे मानव प्राणियोंके साथ ही बल्कि सृष्टिके निम्नतम जीवोंके साथ भी आत्मीयता स्थापित करनेमें आनन्द मानूंगा। क्योंकि मिट्टीमें मिल जानकी अुनकी जो गति है वही गति मेरी भी होगी। और अगर अिस भौतिक शरीरके बिना केवल जीवका विचार किया जाय तो सृष्टिका निम्नतम प्राणी ठीक अुतना ही अविनाशी है जितनी मेरी आत्मा है।

बापूके पत्र मीराके नाम पृ० १५१, १९५१

२७

अुपवास और प्रार्थना

यह अेक प्राचीन प्रथा है। सच्चे दिलसे किया हुआ अुपवास शरीर, मन और आत्मा तीनोंको शुद्ध करता है। वह अिन्द्रियोंका दमन करता है और अुस हद तक आत्माको मुक्त करता है। सच्चे दिलसे की हुअी प्रार्थना चमत्कार पैदा कर सकती है। वह और भी अधिक शुद्धिके लिअे आत्माकी गहरी पुकार है। अिस प्रकार प्राप्त की हुअी शुद्धताका जब किसी शुभ हेतुके लिअे अुपयोग किया जाता है तब वह प्रार्थना बन जाती है। अिसलिअे अुपवास और प्रार्थना शुद्धिकी अेक अत्यंत बलशाली प्रक्रिया है। और जो चीज हमें शुद्ध करती है वह अवश्य ही हमें अपना कर्तव्य अधिक अच्छी तरह करने और अपना ध्येय प्राप्त करनेमें समर्थ बनाती है। अिसलिअे यदि अुपवास और र्थना कभी कभी असफल दिखाअी देते हैं तो अुसका कारण यह नहीं है कि वे निकम्मे हैं बल्कि यह है कि अुनके पीछे सच्ची वृत्ति नहीं है।

सच्चे अुपवासके साथ साथ शुद्ध विचारोंको ग्रहण करनेकी तैयारी और शैतानके सारे प्रलोभनोंसे लड़नेका संकल्प होना चाहिये। अिसी तरह सच्ची प्रार्थना समझमें आने लायक और निश्चित होनी चाहिये। अुसके साथ हमारा अेकाकार होना जरूरी है। मन सब तरफ भटकता हो तो माला फेरना और जबानसे अीश्वरका नाम लेना बिलकुल बेकार है।

यंग अिंडिया २४–३–२० पृ० १

मेरा धर्म मुझे यह सिखाता है कि जब कभी अैसा कष्ट हो जिसे हम दूर नहीं कर सकें तब हमें अुपवास और प्रार्थना करनी चाहिये।

यंग अिंडिया, २५–९–२४ पृ० ३१९

(ख) अुपवास

यह मेरा दृढ़ विश्वास है कि अिन्द्रियोंका दमन जितना होता है आत्माकी ताकत अुतनी ही बढ़ती जाती है।

यंग अिंडिया, २३–१०–२४, पृ० ३५४

जो मनुष्य अीश्वरसे डरकर चलना चाहता है, जो अीश्वरके प्रत्यक्ष दर्शन करनेकी अिच्छा रखता है, अैसे साधक और मुमुक्षुके लिये अपने आहारका चुनाव — त्याग और स्वीकार — अुतना ही आवश्यक है, जितना कि विचार और वाणीका चुनाव — त्याग और स्वीकार — आवश्यक है।

आत्मकथा पृ० २३५, १९५७

अुपवासके बिना प्रार्थना नहीं हो सकती यह वचन बिलकुल ठीक है। यहां अुपवासका अर्थ अधिकसे अधिक व्यापक करना पड़ेगा। शरीरके अुपवासके साथ समस्त अिन्द्रियोंका भी अुपवास करना पड़ेगा। और गीताका अल्पाहार भी शरीरका अेक अुपवास ही है। गीता भोजनके संयमकी बात नहीं करती, परन्तु अल्पाहार की करती है' अल्पाहार हमेशाका अुपवास है। अल्पाहारका अर्थ यह है कि जिस सेवाके लिये शरीर बनाया गया है सिर्फ अुसके लिये शरीरको कायम रखने लायक ही खाया जाय। दूसरी परीक्षा यों हो सकती है कि भोजन भी औषधिकी तरह नपी-तुली मात्रामें, निश्चित समय पर और स्वादके लिये नहीं परन्तु शरीरके हितके लिये लिया जाय। अल्पाहारका अधिक अच्छा अनुवाद शायद नपी तुली मात्रा' होगा। मुझे आर्नल्डका अनुवाद याद नहीं आ रहा है। जिसलिये पेटभर भोजन अीश्वर और मनुष्य दोनोंके प्रति अपराध है — मनुष्यके प्रति जिसलिये कि पेटभर खानेवाले लोग अपने पड़ोसियोंका हिस्सा छीनते हैं। अीश्वरकी अर्थ-व्यवस्थामें जितनी ही गुंजाअिश रखी गयी है कि सबको केवल औषधिकी मात्रामें रोज भोजन मिल जाय। हम सब पेटभर खानेवाले हैं। आवश्यक औषधिके रूपमें भोजनकी निश्चित मात्रा स्वभावतः जान लेना बहुत मुश्किल काम

है, क्योंकि मां-बापकी ओरसे हमें अतिभोजनकी शिक्षा मिलती है। बादमें 'जब चिड़ियां चुग गयीं खेत' वाली बात हो जाती है तब हममें से कुछ लोगोंको भान होता है कि भोजन स्वाद लेनेके लिये नहीं परन्तु शरीरको दासके तौर पर पालनेके लिये बनाया गया है। अुसी क्षणसे स्वादके लिये खानेकी पैतृक और डाली हुयी आदतके खिलाफ जबरदस्त लड़ाओ शुरू हो जाती है। अिसीलिये बीच-बीचमें पूरे और सदा आंशिक अपवासोंकी जरूरत है। आंशिक अपवास ही गीताका अल्पाहार या मिताहार है।

बापूके पत्र मीराके नाम पृ० २५०—५१ १९५१

अल्पका अर्थ है काफीसे कम। काफी क्या है यह अनुमानका विषय है और अिसलिये हमारे अपने ही मनकी कल्पना है। सत्यभक्त मनुष्यने यह जानकर कि मनुष्य सदा शरीरके प्रति आसक्त होता है अुस आसक्तिको मिटानेकी दृष्टिसे कहा कि अुसके विचारसे जितना भोजन काफी हो अुससे थोड़ा कम लेना चाहिये। तब कहीं यह संभव होगा कि वह जितना सचमुच काफी हो अुतना ही भोजन ले। अिस प्रकार जिसे अकसर हम अल्प समझते हैं संभव है वह काफीसे ज्यादा हो। कम खानेके कारण जितने लोग कमजोर रहते हैं अुनसे अधिक लोग ज्यादा या गलत भोजनके कारण रहते हैं। अगर हम अुचित भोजन चुन लें, तो यह देखकर आश्चर्य होता है कि कितनी थोड़ी मात्रा काफी हो जाती है।

बापूके पत्र मीराके नाम पृ० २६३ १९५१

संकल्पके बिना केवल शरीरके अपवासका कोओी अर्थ नहीं है। शारीरिक अपवास आन्तरिक अपवासका हार्दिक स्वीकार, सत्य और केवल सत्यको प्रकट करनेकी अदम्य आकांक्षाका परिचायक होना चाहिये।

हरिजन १—५— ३३

मैं जानता हूं कि अगर मैं अपने सुधारके लिये अपने तप, अपवास और प्रार्थना पर आधार रखूं तो यह प्रयत्न व्यर्थ होगा। परन्तु यदि वे जैसी मुझे आशा है, अेक साधक आत्माके अपने सर्जनहारकी गोदमें

अपना पका हुआ सिर रख देनेकी लालसाके प्रतीक हों तो अुनका अपार मूल्य है।

हरिजन १८-४-'३९, पृ० ७७

जब अिन्द्रियां हमारे खिलाफ विद्रोह करने लगें तब अुनका दमन जरूरी है लेकिन जब अिन्द्रियां हमारे वशमें आ जायं और सेवाका साधन बनाओ जा सकें तब अुनका दमन पाप है। दूसरे शब्दोंमें, अिन्द्रियदमनमें अपने आपमें कोओ पुण्य नहीं है।

हरिजन २-११-'३५, पृ० २९९

हिन्दू धर्मग्रंथोंमें अुपवासके अुदाहरण भरे पड़े हैं और जरासा निमित्त पाते ही हजारों हिन्दू आज भी अुपवास करते हैं। यही अेक वस्तु है जो कमसे कम हानि करती है। अिसमें शक नहीं कि हरअेक अच्छी चीजकी तरह अुपवासोंका भी दुरुपयोग होता है। यह अनिवार्य है। चूंकि कभी कभी भलाओकी आड़में बुराओ की जाती है, अिसलिअे हम भलाओ करना नहीं छोड़ सकते।

संसारभरमें अिन्द्रिय-दमनको आध्यात्मिक प्रगतिकी अेक शर्त माना गया है। सम्पूर्ण अुपवास स्व का संपूर्ण त्याग है। वह सबसे सच्ची प्रार्थना है। "मेरा जीवन ले ले और अैसा कर कि वह सदा केवल तेरे लिअे ही हो" यह कोओ मौखिक या केवल आलंकारिक वचन नहीं है नहीं होना चाहिये। यह तो परिणामकी परवाह न करते हुअे, खुशीसे और मनमें कोओ भी दुराव न रखकर किया जानेवाला समर्पण है। अन्न और जल तक न लेना केवल प्रारंभ-मात्र है, समर्पणका न्यूनतम भाग है।

व्यक्तिगत और सार्वजनिक दोनों प्रकारके अुपवासोंमें मेरा गहरा विश्वास है।

हरिजन १५-४-३३ पृ० ४

अब मैं पहलेसे भी ज्यादा अच्छी तरह यह जानता हूं कि अुप वास कितना ही अल्प हो प्रार्थनाके लिअे वह जरूरी है। अुसके बिना

प्रार्थना नहीं हो सकती। और अुस अुपवासका सम्बन्ध केवल जिह्वासे नहीं परन्तु सभी अिन्द्रियों और अंगोंसे है। प्रार्थनामें पूरी तरह लीन होनेका अर्थ यह है कि सारी शारीरिक प्रवृत्तियां अुस समय तक बिलकुल बन्द रहें, जब तक कि प्रार्थना हमारी सारी हस्ती पर पूरी तरह छा न जाय हम तमाम शारीरिक कर्मोंसे अूपर न अुठ जायं और पूर्णतः अनासक्त न हो जायं। यह स्थिति अिन्द्रियोंके सतत और स्वेच्छापूर्वक दमनके बाद ही आ सकती है। अिस प्रकार अुपवास-मात्र यदि वह कोअी आध्यात्मिक कर्म है अेक अुत्कट प्रार्थना या अुसकी तैयारी है। यह आत्माकी भगवत्-तत्त्वमें समा जानेकी अुत्कट लालसा है।

हरिजन, ८-७-३३ पृ० ४

(ख) प्रार्थना

प्रार्थना धर्मकी आत्मा और अुसका सार है। अिसलिअे प्रार्थना मानव-जीवनका मर्म होना चाहिये क्योंकि कोअी मनुष्य धर्मके बिना जी नहीं सकता।

यंग अिंडिया २३-१-३० पृ० २५

अीश्वरके सहस्र नाम हैं या यों कहिये कि वह नाम-रहित है। हमें जो भी नाम पसन्द हो अुसीसे अुसकी पूजा या प्रार्थना कर सकते हैं। कुछ लोग अुसे राम कहते हैं, कुछ कृष्ण और कुछ रहीम कहते हैं और कुछ अुसे गॉड कहते हैं। सब अुसी परम तत्त्वकी पूजा करते हैं परन्तु जैसे सब आहार सबको अनुकूल नहीं पड़ते वैसे सब नाम सबको नहीं जंचते। हरअेक अपने अपने संस्कारोंके अनुसार अपना प्रिय नाम चुन लेता है और वह अन्तर्यामी सर्व-शक्तिमान और सर्वज्ञ होनेके कारण हमारे भीतरी भाव जानता है और हमारी पात्रताके अनुसार हमें फल देता है।

अिसलिअे पूजा या प्रार्थना वाणीसे नहीं हृदयसे करनेकी चीज है। और यही कारण है कि गूंगा तुतलानेवाला अज्ञान और मूर्ख सभी अुसे समान रूपसे कर सकते हैं। लेकिन जिनकी वाणीमें अमृत

जीते हैं। अिसलिअे सब धर्मोंने सामान्य प्रार्थनाके लिअे अलग समय नियत कर दिया है। दुर्भाग्यसे प्रार्थना आजकल दंभपूर्ण नहीं तो निरी यांत्रिक और नाममात्रकी जरूरत हो गयी है। अिसलिअे जरूरत अिस बातकी है कि अिस भक्तिके साथ सच्चा भाव हो।

अीश्वरसे किसी वस्तुकी याचनाके अर्थमें निश्चित व्यक्तिगत प्रार्थना अपनी ही भाषामें होनी चाहिये। अिससे अधिक भव्य याचना और क्या हो सकती है कि हम अीश्वरसे यह मांगें कि हम सब प्राणियोंके साथ न्यायका बरताव करें?

यंग अिडिया १०–६–२६, पृ० २११

मनुष्यका निश्चित हेतु यह है कि वह पुरानी आदतोंको जीते अपने भीतरकी बुराअी पर विजय प्राप्त करे और भलाअीको अुसके अुचित स्थान पर फिरसे स्थापित करे। अगर धर्म हमें यह विजय प्राप्त करना नहीं सिखाता तो कुछ नहीं सिखाता। जीवनके अिस सच्चेसे सच्चे साहसमें सफलताका कोअी राजमार्ग नहीं है। कायरता शायद सबसे बड़ा दुर्गुण है जिससे हम पीड़ित हैं, और शायद सबसे बड़ी हिंसा भी है। वह रक्तपातसे और अैसी ही दूसरी चीजोंसे जिन्हें आम तौर पर हिंसाका नाम दिया जाता है अवश्य ही कहीं बड़ी हिंसा है। कारण वह अीश्वरमें श्रद्धा न होने और अुसके गुणोंका अज्ञान होनेसे पैदा होती है। मैं स्वयं अपना प्रमाण देकर कह सकता हूं कि मनुष्यके पास कायरता और दूसरी तमाम बुरी पुरानी आदतों पर काबू पानेके लिअे सबसे प्रबल अस्त्र बेशक हार्दिक प्रार्थना ही है। अपने भीतर अीश्वरके होनेमें सजीव श्रद्धा रहे बिना प्रार्थना हो ही नहीं सकती।

हमें अपना चुनाव कर लेना है कि हम बुराअीकी ताकतोंके साथ दोस्ती करें या भलाअीकी ताकतोंके साथ। अीश्वरकी प्रार्थना करना और कुछ नहीं अीश्वर और मनुष्यके बीच वह पवित्र मैत्री है जिससे मनुष्य शैतानके पंजेसे छुटकारा पा जाता है। परंतु हार्दिक प्रार्थना महज शब्दोंका अुच्चारण नहीं है वह तो अैसी भीतरी लगन है जो मनुष्यके प्रत्येक शब्द प्रत्येक कार्य और प्रत्येक विचारमें प्रगट होती है। जब कोअी बुरा विचार अुस पर सफलतापूर्वक आक्रमण करे

तब वह जान ले कि अुसने केवल मौखिक प्रार्थना की है। यही बात अुसके मुँहसे निकलनेवाले बुरे शब्द या अुसके हाथसे होनेवाले बुरे कर्मके बारेमें लागू होगी। सच्ची प्रार्थना ही बुराअियोंकी अिस त्रिमूर्तिके विरुद्ध पक्की ढाल और रक्षा है। अिस प्रकारकी सच्ची और सजीव प्रार्थनाके पहले प्रयत्नमें ही हमेशा सफलता नहीं मिल जाती। हमें अपने ही विरुद्ध प्रयत्न करना पड़ता है, अपने ही बावजूद विश्वास करना पड़ता है, क्योंकि हमारे लिअे महीने ही वर्ष जैसे हैं। अिसलिअे हमें प्रार्थनाकी क्षमताका अनुभव करना हो तो हमें अपनेमें अनन्त धैर्य पैदा करना होगा। अंधकार होगा, निराशा होगी और अुससे भी बुरी बुरी चीजें होंगी, परंतु हमें अिन सबसे युद्ध करने और कायरताके वशीभूत न होने लायक साहस रखना पड़ेगा। प्रार्थना-परायण मनुष्यके लिअे पीछे हटने जैसी कोअी चीज नहीं है।

मैं जो कुछ कह रहा हूं वह कोअी परियोंकी कहानी नहीं है। मैंने कोअी काल्पनिक तसवीर नहीं खींची है। मैंने अुन पुरुषोंकी गवाहीका सार दे दिया है, जिन्होंने प्रार्थनाके द्वारा अपनी अूर्ध्व गतिमें आनेवाली प्रत्येक कठिनाअीको पार किया है, और मैंने अपना भी नम्र प्रमाण जोड़ दिया है कि जैसे जैसे मेरी अुम्र बढ़ती जाती है वैसे वैसे मैं यह अनुभव करता जाता हूं कि मुझे श्रद्धा और प्रार्थनासे कितनी शक्ति प्राप्त हुअी है। और ये दोनों वस्तुअें मेरे लिअे अेक ही हैं। मैं जिस अनुभवका हवाला दे रहा हूं वह कुछ घटों दिनों या हफ्तों तक ही सीमित नहीं है यह अनुभव मुझे लगभग ४० वर्षोंसे लगातार मिलता रहा है। मुझे भी निराशाओंके घोर अंधकारका हार स्वीकार करने या सावधानी बरतनेकी सलाहोंका और अहंकारके सूक्ष्म आक्रमणोंका अपना हिस्सा मिला है, परंतु मैं कह सकता हूं कि मेरी श्रद्धाने — और मैं जानता हूं कि वह अभी तक बहुत थोड़ी है, कमसे कम अुतनी बड़ी तो नहीं है जितनी मैं चाहता हूं — अन्तमें अुन सब कठिनाअियों पर अब तक विजय प्राप्त की है। अगर हमें अपनेमें श्रद्धा है, अगर हमारे भीतर प्रार्थनापूर्ण हृदय है, तो हम अीश्वरको प्रलोभन न दें अुसके साथ कोअी शर्त न करें। हमें अपनेको शून्यवत् बना लेना चाहिये।

अकसर जरूरी होता है, परंतु प्रार्थनाका अुपवास तो हो ही नहीं सकता।

राजनीतिक क्षितिज पर निराशा छाओी रहने पर भी मैंने कभी अपनी शान्ति नहीं खोओी। सच तो यह है कि मेरी शान्तिसे अीर्षा करनेवाले लोग मैंने देखे हैं। मैं कहता हूं कि यह शान्ति प्रार्थनासे आती है। मैं विद्वान आदमी नहीं हूं, परंतु मैं प्रार्थना-परायण मनुष्य होनेका नम्रतापूर्वक दावा करता हूं। मुझे अिसकी परवाह नहीं कि प्रार्थनाका स्वरूप क्या हो। अिस बारेमें हरअेकको अपना रास्ता खुद बनाना चाहिये। परंतु कुछ सुनिश्चित मार्ग हैं और प्राचीन गुरुओंके बताये हुमे अिन मार्गों पर चलना सुरक्षित है। प्रार्थनाके पक्षमें मैंने अपनी निजी गवाही दे दी। अब हरअेक आदमी कोशिश करके देख ले कि रोज प्रार्थना करके वह अपने जीवनमें कोओी नभी चीज जोड़ता है या नहीं — कोओी अैसी चीज जिसकी किसीसे तुलना नहीं हो सकती।

यंग अिंडिया २४-९-'३१ पृ० २७४

[यह गुजरातके छात्रालयोंमें रहनेवाले विद्यार्थियोंके सम्मेलनमें साबरमतीमें दिये गये गांधीजीके गुजराती प्रवचनका सार है]

मुझे खुशी है कि आप मुझसे प्रार्थनाके अर्थ और असकी आवश्यकताके बारेमें सुनना चाहते हैं।

प्रार्थना जैसे धर्मका सबसे मार्मिक अंग है वैसे ही वह मानव जीवनका भी सबसे मार्मिक अंग है। प्रार्थना या तो याचना-रूप होती है या व्यापक अर्थमें वह अीश्वरसे भीतरी लौ लगानेकी क्रिया है। दोनों ही सूरतोंमें अंतिम परिणाम अेक ही होता है। जब वह याचनाके रूपमें हो तब याचना आत्माकी सफाओी और शुद्धिके लिये अुसके चारों ओर लिपटे हुमे अज्ञान और अंधकारके आवरणको हटानेके लिये होनी चाहिये। अिसलिये जो अपने भीतर दिव्य ज्योति जगानेको तड़प रहा हो अुसे प्रार्थनाका आसरा लेना होगा। परंतु प्रार्थना शब्दोंका या कानोंका व्यायाममात्र नहीं है, खाली मंत्र-जाप नहीं है। प्रार्थनामें शब्दोंके बिना हृदयका होना ज्यादा अच्छा है, हृदयके अभावमें केवल शब्दोंसे काम नहीं होता। वह स्पष्ट रूपसे आत्माकी भूखको शांत करनेके लिये होनी

चाहिये। जैसे कोअी भूखा आदमी मनचाहे भोजनमें मजा लेता है ठीक वैसे ही भूखी आत्माको हार्दिक प्रार्थनामें आनंद आता है। और यह मैं अपने और अपने साथियोंके अनुभवसे कहता हूं कि जिसने प्रार्थनाके जादूका अनुभव किया है वह लगातार कअी दिन तक आहारके बिना तो रह सकता है, परंतु प्रार्थनाके बिना अेक क्षण भी नहीं रह सकता। कारण प्रार्थनाके बिना भीतरी शांति नहीं मिलती।

अगर यह बात है तो कोअी कहेगा कि हमें अपने जीवनके हर क्षणमें प्रार्थना करते रहना चाहिये। असमें कोअी संदेह नहीं। परंतु हम भूल करनेवाले प्राणी हैं अेक क्षणके लिअे भी भगवानसे भीतरी लौ लगानेके लिअे बाहरी विषयोंसे हटकर अन्तर्मुख होना हमें कठिन जान पड़ता है। तब हर क्षण अीश्वरसे लौ लगाये रखना तो हमारे लिअे असंभव ही होगा। असलिअे हम कुछ घंटे नियत करके अुस समय थोड़ी देरके लिये संसारका मोह छोड़ देनेका गंभीर प्रयत्न करते हैं, अेक प्रकारसे अिन्द्रियातीत रहनेकी हार्दिक कोशिश करते हैं। आपने सूरदासका भजन सुना है। यह अीश्वरसे मिलनेके लिअे भूखी आत्माकी करुण पुकार है। हमारे पैमानेसे वे अेक सन्त थे परंतु अुनके अपने पैमानेसे वे घोर पापी थे। आध्यात्मिक दृष्टिसे वे हमसे मीलों आगे थे परन्तु अुन्हें अीश्वर-वियोगकी अितनी तीव्र पीड़ा थी कि अुन्होंने आत्मग्लानि और निराशाके स्वरमें अपनी पीड़ा अिस तरह व्यक्त की 'मो सम कौन कुटिल खल कामी ।

मैंने प्रार्थनाकी आवश्यकताकी बात कही है और अुसके द्वारा प्रार्थनाका सार भी बताया है। हमारा जन्म अपने मानव-बन्धुओंकी सेवाके लिअे हुआ है और यह काम हम अच्छी तरह नहीं कर सकते यदि हम पूरी तरहसे जाग्रत न रहें। मनुष्यके हृदयमें अंधकार और प्रकाशकी शक्तियोंमें सतत संग्राम होता रहता है और जिसके पास प्रार्थनाकी ढालका सहारा नहीं है वह अंधकारकी शक्तियोंका शिकार हो जायगा। प्रार्थना करनेवाला आदमी अपने मनमें शांतिका अनुभव करेगा और संसारके साथ भी अुसका संबंध शांतिका होगा। जो मनुष्य प्रार्थनापूर्ण हृदयके बिना सांसारिक कर्म करेगा वह स्वयं दुःखी होगा और

संसारको भी दुखी करेगा। अिसलिअे मनुष्यकी मरणोत्तर स्थिति पर प्रार्थनाका जो प्रभाव होता है, अुसके सिवा भी प्रार्थनाका मनुष्यके पार्थिव जीवनमें असीम महत्त्व है। हमारे दैनिक कामोंमें व्यवस्था शांति और सुसंवादिता लानेका अेकमात्र अुपाय प्रार्थना है।

अिसलिअे दिनका काम प्रार्थनासे शुरू कीजिये और अुसमें अितनी आत्मा अुंडेलिये कि वह शाम तक आपके साथ बनी रहे। दिनका अन्त भी प्रार्थनाके साथ कीजिये ताकि आपकी रात शांतिपूर्ण तथा स्वप्नों और दुःस्वप्नोंसे मुक्त रहे। प्रार्थनाके स्वरूपकी चिन्ता न कीजिये। स्वरूप कुछ भी हो, वह अैसा होना चाहिये जिससे भगवानके साथ हमारे मनकी लौ लग जाय। अितना ध्यान रखिये कि स्वरूप कैसा भी हो मगर आपके मुंहसे प्रार्थनाके शब्द निकलते समय आपका मन अिधर-अुधर न भटकने पाये।

मैंने जो कुछ कहा है वह आपको जच गया हो तो आपको तब तक चैन नहीं आयगी जब तक कि आप अपने छात्रालयके अधिकारियोंको अपनी प्रार्थनामें दिलचस्पी लेने और अुसे अनिवार्य बनानेको विवश न कर देंगे। स्वतः स्वीकार किये हुअे संयममें कोअी जबरदस्ती नहीं होती। जो मनुष्य संयमसे मुक्तिका यानी भोगका रास्ता चुनता है वह विकारोंका क्रीतदास ही बनेगा और जो अपनेको नियमोंसे बांध लेता है, वह मुक्त हो जाता है। विश्वके सब पदार्थोंको, जिनमें सूर्य चन्द्र और तारे भी शामिल हैं कुछ नियमोंका पालन करना पड़ता है। अिन नियमोंके नियंत्रणके बिना दुनियाका काम क्षणभर भी नहीं चल सकता। आपका जीवनोद्देश्य अपने मानव-बन्धुओंकी सेवा करना है। यदि आप अपने पर किसी न किसी तरहका अनुशासन नहीं लगायेंगे तो आपका सर्वनाश ही हो जायगा। प्रार्थना अेक प्रकारका आवश्यक आध्यात्मिक अनुशासन है। अनुशासन और संयम ही हमें पशुओंसे अलग करता है। अगर हम सिर अूंचा करके चलनेवाले मनुष्य होना चाहते हैं और चौपाये नहीं बनना चाहते तो हमें यह बात समझ लेना चाहिये और अपने आपको स्वेच्छासे अनुशासन और संयममें रखना चाहिये।

यंग अिंडिया, २३-१-३० पृ० २५ २६

हम प्रार्थना करें ही क्यों? अगर अीश्वर है तो जो कुछ हुआ है या हो रहा है, अुसे क्या वह जानता नहीं है? क्या अुसे कर्तव्य पालन कर सकनेके लिअे अिस बातकी जरूरत होती है कि लोग अुसकी प्रार्थना करें?

नहीं अीश्वरको याद दिलानेकी आवश्यकता नहीं। वह तो अन्तर्यामी है, सबके भीतर है। अुसकी आज्ञाके बिना कुछ नहीं होता। हमारी प्रार्थना तो हृदयकी खोज है। प्रार्थनाके द्वारा हम अपनेको ही यह याद दिलाते हैं कि प्रभुके सहारेके बिना हम लाचार हैं। कोअी प्रयत्न प्रार्थनाके बिना सम्पूर्ण नहीं होता। प्रयत्नके साथ ही हमें निश्चय पूर्वक यह भी मानना चाहिये कि अुत्तमसे अुत्तम मानव-प्रयत्न भी बेकार है यदि अुसे अीश्वरका आशीर्वाद प्राप्त नहीं है। प्रार्थना नम्रताकी प्राप्तिके लिअे की गअी पुकार है। वह आत्मशुद्धिकी भीतरी खोजकी पुकार है।

हरिजन ८–६–१५, पृ० १३२

बुद्धके अेक अनुयायी डॉ० फावरी अेबटाबादमें गांधीजीसे मिलने आये। अुन्होंने पूछा

"क्या प्रार्थनासे अीश्वरका मन बदला जा सकता है? क्या प्रार्थनासे अुसे जाना जा सकता है?"

गांधीजीने कहा 'प्रार्थना करते समय म क्या करता हूं अिसे पूरी तरह समझाना कठिन बात है। परंतु मैं आपके प्रश्नका अुत्तर देनेका प्रयत्न अवश्य करूंगा। अीश्वरका मन नहीं बदला जा सकता परंतु अीश्वर जड़ चेतन सभी पदार्थों और जीवोंमें है। प्रार्थनाका अर्थ यह है कि मैं अपने भीतरवाले अुस अीश्वरको पुकारता हूं जगाता हूं। हो सकता है कि मुझे अिसका बौद्धिक निश्चय तो हो परंतु कोअी सजीव अनुभूति न हो। अिसलिअे जब मैं स्वराज्य या भारतकी स्वाधीनताके लिअे प्रार्थना करता हूं तो मैं अुस स्वराज्यको प्राप्त करनेकी या अुसे प्राप्त करनेमें अधिकसे अधिक योग देनेकी पर्याप्त शक्तिके लिअे प्रार्थना या भिक्षा करता हू। और मैं मानता हूं कि प्रार्थनाके अुत्तरमें मैं वह शक्ति प्राप्त कर सकता हूं।"

डॉ० फाबरीने कहा "तब तो आपका अुसे प्रार्थना कहना ठीक नहीं है, प्रार्थना करनेका अर्थ याचना या मांग करना है।"

"हां यह सही है। आप कह सकते हैं कि मैं अपने आपसे, अपने शुद्ध स्वरूपसे, अपनी वास्तविक आत्मासे याचना करता हूं, जिसके साथ मैं अभी तक पूर्ण अेकता स्थापित नहीं कर सका हूं। अिसलिअे आप अिसका वर्णन यों कर सकते हैं कि जिस परमात्मामें सब समाये हुअे हैं अुसमें अपने आपको खो देनेकी सतत आकांक्षा करना ही प्रार्थना है।'

डॉ० फाबरीने पूछा 'जो लोग प्रार्थना नहीं कर सकते, अुनके लिअे आपका क्या कहना है?"

गांधीजीने कहा, "मैं अुनसे कहूंगा कि नम्र बनो और बुद्धकी अपनी कल्पना द्वारा सच्चे बुद्धको सीमित मत करो। अगर अुनमें प्रार्थना करने लायक विनम्रता न होती तो करोड़ों मनुष्योंके जीवन पर अुन्होंने जो राज्य किया और आज भी कर रहे हैं वह वे न कर सकते। बुद्धिसे कहीं अूंची कोअी अैसी चीज है जो हम पर और शंका करनेवालों पर भी शासन करती है। अुनके जीवनके नाजुक मौकों पर अुनकी शंकाशीलता और अुनका तत्त्वज्ञान अुनकी मदद नहीं करते। अुन्हें सहारा देनेके लिअे किसी बेहतर चीजकी अपनेसे बाहर किसी चीजकी जरूरत होती है। और अिसलिअे अगर कोअी मेरे सामने अैसी पहेली रखता है तो मैं अुससे कहता हूं जब तक तुम अपने आपको शून्य नहीं बना लोगे तब तक तुम्हें अीश्वर या प्रार्थनाका अर्थ मालूम नहीं होगा। तुममें यह समझने लायक नम्रता होनी ही चाहिये कि तुम्हारी महानता और जबरदस्त बुद्धिके बावजूद तुम विश्वमें अेक बिन्दुके समान हो। जीवनकी बातोंकी निरी बौद्धिक कल्पना काफी नहीं होती। बुद्धिके लिअे अगम्य आध्यात्मिक कल्पना ही अैसी चीज है जो मनुष्यको संतोष दे सकती है। धनवान लोगोंके जीवनमें भी नाजुक समय आते हैं। यद्यपि अुनके चारों ओर वे सब चीजें होती हैं जो रुपयेसे खरीदी जा सकती हैं और प्रेमसे मिल सकती हैं, फिर भी अपने जीवनमें अुन्हें कुछ अव सरों पर थोड़ी भी सान्त्वना नहीं मिलती। अिन्हीं अवसरों पर हमें

अीश्वरकी झांकी होती है अुसके दर्शन होते हैं, जो जीवनमें हर कदम पर हमें रास्ता बता रहा है। यही प्रार्थना है।'"

डॉ० फावरीने कहा 'आपका मतलब अुस चीजसे है जिसे हम सच्चा धार्मिक अनुभव कह सकते हैं और जो बौद्धिक कल्पनासे अधिक बलवान होता है।"

यही प्रार्थना है, यह बात गांधीजीने जितने आग्रहके साथ कही कि वह डॉ० फावरीके मनको छुओे बिना नहीं रही होगी।

हरिजन १९-८-३९, पृ० २३७-३८

प्र० — क्या यह ज्यादा अच्छा नहीं होगा कि कोअी आदमी अीश्वरकी पूजामें जो समय खर्च करता है अुसे वह गरीबोंकी सेवामें लगाये? और यदि वह सच्ची सेवा करता है तो क्या अैसे आदमीके लिअे भक्ति और पूजा अनावश्यक नहीं हो जाती?

अु० — जिस प्रश्नमें मुझे मानसिक आलस्य और अज्ञेयवादकी गंध आती है। बड़ेसे बड़े कर्मयोगी भी कभी भजन या पूजाको छोड़ते नहीं। आदर्शके तौर पर यह कहा जा सकता है कि दूसरोंकी सच्ची सेवा स्वयं पूजा है और अैसे भक्तोंको भजन आदिमें समय लगानेकी जरूरत नहीं। असलमें भजन वगैरा सच्ची सेवामें सहायक होते हैं और भक्तके हृदयमें अीश्वरकी याद ताजी रखते हैं।

हरिजन १३-१०-'४६, पृ० ३५७

(ग) रामनाम

योगकी क्रियायें मैं बिलकुल नहीं जानता। मैं जो अभ्यास करता हूं वह मैंने बचपनमें अपनी धायसे सीखा था। मुझे भूतका डर लगता था। वह मुझसे कहा करती थी भूत जैसी कोअी चीज है ही नहीं, परन्तु तुम्हें डर लगता हो तो रामनाम लिया करो। जो चीज मैंने अपने बचपनमें सीखी अुसने समय पाकर मेरे मानसिक आकाशमें विशाल रूप धारण कर लिया है। जिस सूर्यने मुझे घने अंधकारके समय प्रकाश दिखाया है। यही सान्त्वना अेक अीसाअीको अीसाका नाम लेनेसे और अेक मुसलमानको अल्लाहका नाम लेनेसे मिल सकती है। जिन सब

वस्तुओंके अेकसे फलितार्थ होते हैं और समान परिस्थितियोंमें अुनसे अेकसे परिणाम अुत्पन्न होते हैं। मितना ही है कि जप केवल वाणीसे न होकर हमारे जीवनका अंग बन जाना चाहिये।

हरिजन, ५-१२-३६, पृ० ३३९

ज्ञानकी वृद्धि और आयुके बढ़नेके साथ रामनामका जप मेरे लिये दूसरा स्वभाव बन गया है। मैं यहां तक कह सकता हूं कि यह शब्द मेरी जबान पर न हो तो भी मेरे मनमें दिन-रात बसा रहता है। यह मेरा रक्षक रहा है और मुझे अिसका सदा आधार रहता है।

हरिजन १७-८-'३४ पृ० २११

अीश्वरकी कृपा अुन पर अुतरेगी जो अुसकी आज्ञाका पालन करेंगे और अुसकी सेवामें रहेंगे अुन पर नहीं जो केवल मुंहसे रामनाम लेंगे।

यंग अिंडिया ८-४-'२६, पृ० १११-१२

अीश्वर और अुसका कानून अेक ही हैं। अिसलिये अुसके नियमोंका पालन करना अुत्तम प्रकारकी पूजा है। जो मनुष्य अुस कानूनके साथ अेक हो जाता है अुसे जबानसे नाम लेनेकी जरूरत नहीं रहती। दूसरे शब्दोंमें जिस मनुष्यके लिये अीश्वरका ध्यान सांसकी तरह स्वाभाविक हो वह अीश्वरीय भावनासे अितना ओतप्रोत हो जाता है कि कानूनका ज्ञान या पालन अुसका स्वभाव-सा बन जाता है।

हरिजन २४-३-'४६, पृ० ५९

अीश्वरका सच्चा भक्त प्रकृतिके पांच तत्त्वोंकी आज्ञाओंका वफादारीसे पालन करता है। अगर वह अैसा करता है तो कभी बीमार नहीं पड़ता। और संयोगवश कभी पड़ जाता है तो पंचतत्त्वकी सहायतासे अपना अिलाज कर लेता है। शरीरमें रहनेवाली आत्माका यह काम नहीं है कि वह येन केन प्रकारेण शरीरको रोगमुक्त करे। जो यह मानता है कि वह शरीरके सिवा कुछ नहीं है वह स्वभावतः शरीरकी बीमारियोंका अिलाज करानेके लिये दुनिया भरमें चक्कर लगायेगा। परंतु जिसे अिस सत्यकी प्रतीति हो गयी है कि आत्मा शरीरमें रहते

तुमसे भी अुससे अलग है शरीर नश्वर है जब कि आत्मा अविनश्वर है, वह पंचतत्त्वोंके असफल सिद्ध होने पर न तो अशान्त होगा न शोक करेगा। अिसके विपरीत वह मृत्युको मित्र समझकर अुसका स्वागत करेगा। वह डॉक्टरोंके पीछे पीछे फिरनेके बजाय अपना चिकित्सक खुद ही बन जायगा। वह निरन्तर आत्माका भान जाग्रत रखेगा और आदिसे अन्त तक अन्तर्यामीकी ही परवाह करेगा।

अैसा आदमी हर सांसके साथ अीश्वरका नाम लेगा। अुसका राम तब भी जागता होगा जब अुसका शरीर सोता होगा। वह जो कुछ करेगा अुसमें राम सदा अुसके साथ रहेगा। अैसा भक्त अिस पवित्र साथके छूट जानेको ही वास्तविक मृत्यु मानेगा।

अपने रामको साथ रखनेमें सहायक साधनके तौर पर वह अुन्हीं चीजोंको लेगा जो पंचतत्त्व अुसे देंगे। अर्थात् पृथ्वी वायु जल अग्नि और आकाशसे जो लाभ अुठाया जा सकता है अुसके लिअे वह सादेसे सादा और आसानसे आसान अुपाय काममें लेगा। यह सहायता रामनामकी पूरक नहीं है। वह तो अुसके साक्षात्कारका साधनमात्र है। असलमें रामनामको किसी सहायताकी जरूरत ही नहीं। परन्तु अेक तरफ रामनाममें विश्वास रखनेका दावा करना और साथ ही डॉक्टरोंके पीछे दौड़ना ये दोनों बातें साथ-साथ नहीं चल सकतीं।

अेक भाअीने जो धार्मिक साहित्यके पंडित हैं रामनाम पर मेरे अुद्‌गार पढ़कर कुछ समय पहले मुझे लिखा कि रामनाम तो वह कीमिया है जो शरीरका पूरा रूपान्तर कर सकता है। वीर्यरक्षाको संचित धनकी अुपमा दी गअी है, परन्तु अुसे सतत बढ़नेवाले अध्यात्म-बलकी महती धारा बना देना और पतनको असम्भव कर देना रामनामका ही कार्य है। जैसे शरीर रक्तके बिना नहीं रह सकता वैसे आत्माको श्रद्धाके अद्वितीय और शुद्ध बलकी जरूरत होती है। यह बल मनुष्यकी तमाम शारीरिक अिन्द्रियोंकी दुर्बलतामें फिरसे शक्तिका संचार कर सकता है। अिसीलिअे कहा जाता है कि जब रामनाम हृदयमें बस जाता है तब मनुष्यका पुनर्जन्म हो जाता है। यह नियम बूढ़े और जवान स्त्री और पुरुष सब पर लागू होता है।

यह विश्वास पश्चिममें भी पाया जाता है। ओसाओी विज्ञान (क्रिश्चियन साअिन्स) में अिसकी झांकी मिलती है।

भारतको यह विश्वास अत्यंत प्राचीन कालसे परम्परा द्वारा मिलता आ रहा है। अतः अिस सम्बन्धमें मुझे किसी बाहरी सहारेकी जरूरत नहीं।

हरिजन, २९-६-'४७, पृ० २१२

मेरी कल्पनाके रामनाम और जतर-मंतरमें कोअी सम्बन्ध नहीं है। मैंने कहा है कि किसे रामनाम जैसा किसी अद्वितीय शक्तिसे सहायता प्राप्त करना है। यह शक्ति सब पीड़ाओंको मिटानेमें समर्थ है। परन्तु यह स्वीकार करना होगा कि रामनाम हृदयसे निकलना चाहिये अैसा कहना आसान है, परन्तु अिस सत्यको पाना बड़ा कठिन है। जो भी हो मनुष्यके पानेकी यह सबसे बड़ी चीज है।

हरिजन १३-१०-'४६, पृ० ३५७

मेरा राम हमारी प्रार्थनाका राम अैतिहासिक राम नहीं है जो दशरथका पुत्र और अयोध्याका राजा था। वह नित्य अजन्मा और अद्वितीय परमेश्वर है। मैं अुसीकी पूजा करता हूं। मैं अुसीकी सहायता चाहता हूं और आपको भी अैसा ही करना चाहिये। वह समान रूपसे सबका है। अिसलिअे मुझे कोअी कारण नहीं दीखता कि किसी मुसलमानको या और किसीको भी अुसका नाम लेनेमें आपत्ति क्यों होनी चाहिये। परन्तु अीश्वरको रामके रूपमें पहचाननेके लिअे वह किसी प्रकार बंधा नहीं है। वह मन ही मन अल्लाह या खुदाका नाम ले, अलबत्ता, अिस तरह से कि स्वरकी अेकता भंग न हो।

हरिजन २८-४-'४६, पृ० १११

प्र०——बातचीत करते समय या मस्तिष्कका काम करते समय या अचानक चिन्तित हो जाने पर क्या कोअी अपने हृदयमें रामनाम लेता रह सकता है? क्या अैसे अवसरों पर लोग अैसा करते हैं? और अगर करते हैं तो कैसे?

अु० — अनुभव बताता है कि मनुष्य किसी भी समय अैसा कर सकता है नींदमें भी कर सकता है, बशर्ते कि रामनाम अुसके हृदयमें बस गया हो। अगर रामनाम लेना आदत बन गया हो तो हृदयमें अुसका जप करना अुतना ही स्वाभाविक हो जाता है जितना हृदयका धड़कना। अैसा न हो तो समझना चाहिये कि हमारा रामनामका जप केवल यांत्रिक क्रिया जैसा ही है, या अधिकसे अधिक अुसने हमारे हृदयका स्पर्श अूपरसे ही किया है। जब रामनाम हृदय पर प्रभुत्व स्थापित कर लेता है तब मौखिक जपका प्रश्न पैदा नहीं होता, क्योंकि अुस हालतमें वह वाणीसे परे हो जाता है। परन्तु यह कहा जा सकता है कि अिस स्थितिको पहुंचनेवाले विरले ही होते हैं।

अिसमें जरा भी शक नहीं कि रामनाममें वह सारी शक्ति है जो अुसमें बताओी गयी है। कोअी भी केवल अिच्छा करके रामनामको अपने हृदयमें नहीं बसा सकता। अुसके लिओ अथक प्रयत्न और धीरजकी जरूरत होती है। जिस पारस पत्थरका अस्तित्व नहीं है अुसे प्राप्त करनेके प्रयत्नमें मनुष्योंने कितना श्रम और धैर्य लुटाया है? अवश्य ही अीश्वरका नाम अुससे अधिक मूल्यवान है और वह सदा वर्तमान रहा है।

प्र० — यदि कामकी अधिकता या आकस्मिकताके कारण कोअी निश्चित विधिके अनुसार दैनिक अुपासना न कर सके तो अुसमें कोअी हानि है? सेवा और माला दोनोंमें किसको अधिक महत्त्व दिया जाय?

अु० — सेवा या विपत्ति कुछ भी हो रामनाम बन्द नहीं होना चाहिये। अवसरके अनुसार बाहरी रूप बदल जायगा। रामनाम हृदयमें स्थायी हो चुका हो तो मालाके न होनेसे अुसमें बाधा नहीं पड़ती।

हरिजन, १७–२–४६, पृ० १२–१३

२८

आश्रमके व्रत

[सन् १९३० में गांधीजीने यरवडा जेलसे साबरमती आश्रमके आश्रमवासियोंके नाम कुछ साप्ताहिक प्रवचन भेजे थे। अुनमें से सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य अपरिग्रह और अस्तेय — आश्रमके अिन व्रतोंकी चर्चा करनेवाले प्रवचन यहां दिये जा रहे हैं। आश्रमके अन्य व्रत अिस प्रकार हैं अस्वाद, अभय, अस्पृश्यता-निवारण, शरीर-श्रम, सर्वधर्म-समभाव और स्वदेशी। 'मंगल-प्रभात'[1] नामक पुस्तकमें अिन विषयों पर भी गांधीजीके प्रवचन संगृहीत हैं। अुनमें से कुछ अिस पुस्तकके अन्य भागोंमें दिये गये हैं।]

व्रतोंका महत्त्व

व्रत लेना निर्बलताका नहीं किन्तु बलका सूचक है। कोअी वस्तु करना अुचित हो तो अुसे अवश्य करना अिसका नाम है व्रत, और यह मनुष्यको बल देता है। अिसे व्रत न कहें और कोअी दूसरा नाम देना चाहें तो भले दे दें। लेकिन जो आदमी अैसा कहता है कि जहां तक सम्भव होगा वहां तक मैं अैसा करूंगा वह या तो अपनी निर्बलता प्रगट करता है या अभिमान भले वह अुसे अपनी नम्रता ही क्यों न कहे। अुसके अिस कथनमें मैं तो कहूंगा कि नम्रताकी गंध भी नहीं है। मैंने तो अपने जीवनमें और दूसरे कअी लोगोंके जीवनमें अैसा देखा है कि 'जहां तक सम्भव होगा वहां तक' — यह कथन शुभ निश्चयोंकी सफलतामें जहर जैसा है। 'जहां तक सम्भव होगा वहां तक' करनेकी बात मानो अपने रास्तेमें आनेवाली पहली ही बाधाके सामने घुटने टेक देना है। 'मैं सत्यका पालन जहां तक सम्भव होगा वहां तक करूंगा' — अिस वाक्यका कोअी अर्थ ही नहीं है। जिस तरह व्यापारमें जहां तक सम्भव होगा वहां तक अमुक रकम अमुक तारीखको चुका दी जायगी अैसी चिट्ठीको कोअी चेक या हुंडीकी तरह स्वीकार नहीं करेगा अुसी तरह 'जहां तक सम्भव होगा वहां तक सत्य पालनेवालेकी हुंडी अीश्वरकी दुकानमें भुनायी नहीं जा सकती।

[1] नवजीवन ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित।

अीश्वर स्वयं सित्यकी व्रतकी संपूर्ण मूर्ति है। यदि वह अपने कानूनसे अेक अणु भी यहां वहां टल जाये तो वह अीश्वर न रह जाय। सूर्य महाव्रतधारी है अिसीलिये दुनियामें कालका निर्माण होता है और पंचांगोंकी रचना हो सकती है। अुसने अपनी अैसी साख निर्माण की है कि अुसका अुदय हमेशा होता रहा है और हमेशा होता रहेगा और अिसीलिये हम अपनेको सुरक्षित मानते हैं। व्यापार-मात्रका आधार वचन-पालन पर है। व्यापारी अेक-दूसरेके प्रति अपने वचनका पालन न करें तो व्यापार चले ही नहीं। अिस तरह हम देखते हैं कि व्रत अेक सर्व व्यापक वस्तु है। तो फिर जहां हमारे अपने जीवनके नियमनका प्रश्न है, अीश्वर-दर्शन सिद्ध करनेका प्रश्न है, वहां व्रत लिये बिना हमारा काम कैसे चल सकता है? अिसलिये व्रतकी आवश्यकताके विषयमें हमारे मनमें शंका कभी अुठनी ही नहीं चाहिये।

मंगल-प्रभात (गु) पृ० ४२-४३ १९५४

(क) सत्य

'सत्य' शब्द सत्से बना है। सत्का अर्थ है—होना या अस्ति, सत्यका अर्थ हुआ—होनेका भाव या अस्तित्व। सत्यके सिवा दूसरी किसी चीजकी हस्ती ही नहीं है। परमेश्वरका सच्चा नाम ही सत् या सत्य है। अिसलिये 'परमेश्वर सत्य है' अैसा कहनेकी अपेक्षा 'सत्य ही परमेश्वर है' अैसा कहना अधिक अुचित है।

अिस सत्यकी आराधनाके लिये ही हमारी हस्ती है। हमारी, प्रत्येक प्रवृत्ति हमारा प्रत्येक श्वासोच्छ्वास अुसीके लिये होना चाहिये। अैसा करना सीख लेने पर बाकी सारे नियम हमारे हाथ सहज ही लग जाते हैं और अुनका पालन भी सरल हो जाता है। सत्यके बिना किसी भी नियमका शुद्ध पालन अशक्य है।

सामान्यतः सत्यका अर्थ केवल सच बोलना ही समझा जाता है। लेकिन हमने सत्य शब्दका प्रयोग विशाल अर्थमें किया है। विचारमें वाणीमें और आचारमें सत्यका होना ही सत्य है।

(ख) अहिंसा या प्रेम

सत्यका सम्पूर्ण दर्शन तो अिस देहसे होना असंभव है। अुसकी केवल कल्पना ही की जा सकती है। क्षणिक देहके द्वारा शाश्वत धर्मका साक्षात्कार नहीं हो सकता। अिसलिअे अन्तमें श्रद्धाके अुपयोगकी आवश्यकता तो रहती ही है।

अिसीलिअे अहिंसा जिज्ञासुके हाथ लगी। अुसके सम्मुख यह प्रश्न अुपस्थित हुआ कि मेरे मार्गमें जो मुसीबतें आयें अुन्हें मैं सहन करता जाअूं, या अुनके निवारणके लिअे जो हिंसा करना आवश्यक हो जाय वह करूं और अपने मार्ग पर आगे बढूं? अुसने देखा कि यदि वह नाशकी क्रियामें प्रवृत्त होता है तो वह अपने मार्ग पर आगे नहीं बढ़ता है बल्कि जहां था वहीं रहता है और यदि वह संकटोंको सहन करता है तो आगे बढ़ता है। हिंसाकी पहली क्रियामें ही अुसने देख लिया कि जिस सत्यको वह खोज रहा है वह बाहर नहीं पर अुसके अंतरमें है। फलतः ज्यों ज्यों वह हिंसामें प्रवृत्त होता है त्यों त्यों वह अपने प्रयासमें पीछे पड़ता जाता है और सत्य अुससे दूर हटता जाता है।

चोर हमें सताते हैं अुनके अुपद्रवसे बचनेके लिअे हम अुन्हें दण्ड देते हैं। अुस समय वे भाग जरूर जाते हैं लेकिन जाकर वे किसी दूसरी जगह सेंध लगाते हैं। लेकिन यह दूसरी जगह भी हमारी ही है, अिसलिअे हम गोया अंधेरी गलीमें भटक जाते हैं। चोरोंका अुपद्रव बढ़ता ही जाता है, क्योंकि अुन्होंने तो चोरीको कर्तव्य माना है। अिस तरह हम देखते हैं कि चोरोंका अुपद्रव सहन कर लेना ज्यादा अच्छा है वैसा करनेसे अुन्हें समझ आयगी। अितना सहन करने पर हम यह भी समझते हैं कि चोर हमसे कोअी भिन्न नहीं हैं। हम सब आपसमें भाअी-भाअी हैं मित्र हैं। अुन्हें दण्ड देना अुचित नहीं। लेकिन अुपद्रव सहते जायं यह भी काफी नहीं है। अिससे तो कायरता पैदा होती है। अिसलिअे हम अिसके आगे अेक दूसरे धर्म पर पहुंचते हैं। यदि चोर हमारे भाअी-बंधु हैं, तो हमें अुनमें यह भावना पैदा करनी चाहिये। अिसलिअे हमें अुन्हें अपनानेके अुपाय खोजने चाहिये और अुसके लिअे आवश्यक कष्ट अुठानेको तैयार रहना चाहिये। यही अहिंसाका मार्ग है। अिसमें अुत्तरोत्तर दुःख स्वीकार

करनेकी अटूट धैर्य सीखने और पालनेकी बात आती है। और यदि हम असा कर सकें तो असमें चोर साहूकार बनता है और हमें सत्यका अधिक स्पष्ट दर्शन प्राप्त होता है। अिस तरह हम दुनियाको मित्र बनाना सीखते हैं, अीश्वरकी सत्यकी महिमाका ज्यादा अनुभव करते हैं, सङ्कट भोगते हुअे भी हमारा शांति-सुख बढ़ता है, हमारा साहस और हिम्मत बढ़ती है, हमें शाश्वत और अशाश्वतका भेद ज्यादा समझमें आता है, कर्तव्य और अकर्तव्यका भेद ज्ञात होता है, हमारा अभिमान गल जाता है, हममें नम्रताकी वृद्धि होती है, हमारा परिग्रह अपने-आप घट जाता है और हमारे दिलका मैल दिन-प्रतिदिन कम होता जाता है।

यह अहिंसा आज अहिंसाके नामसे प्रचलित जो स्थूल वस्तु हम देखते हैं वह नहीं है। किसीको न मारनेका भाव तो असमें है ही। कुविचार-मात्र हिंसा है। अुतावली हिंसा है। मिथ्या भाषण हिंसा है। द्वेष हिंसा है। किसीका बुरा चाहना हिंसा है। जगतको जिस चीजकी आवश्यकता है असु पर अपना कब्जा रखना भी हिंसा है। लेकिन जगतको हम जो खाते हैं वह भी चाहिये। हम कहीं भी खड़े हों हमारे पांवोंके नीचे सैकड़ों जीव होते हैं वे कुचल जाते हैं। वह जगह अुनकी है। तो क्या हम आत्महत्या कर लें? तो भी छुटकारा नहीं है। हां, विचारमें हम देहकी आसक्ति छोड़ें तो अन्तमें देह हमें छोड़ेगी। यह अमूर्छित — आसक्तिरहित — स्वरूप ही सत्यनारायण है। यह दर्शन अधीरतासे नहीं हो सकता। देह हमारी नहीं है, वह हमें मिली हुअी धरोहर है — असा समझकर हम अुसका अुपयोग करें और अपने मार्ग पर आगे बढ़ें।

अितना सब जान लें, अहिंसाके बिना सत्यकी खोज असंभव है। अहिंसा और सत्य अेक-दूसरेमें अितने ओतप्रोत हैं, मानो किसी सिक्केके या चिकनी चकरीके दो बाजू हों। अुनमें हम किसे अुलटा कहें और किसे सीधा? फिर भी असा कहना चाहिये कि अहिंसा साधन है और सत्य साध्य। साधन अपने हाथकी बात है, अिसलिअे अहिंसा हमारा परम धर्म है और सत्य परमेश्वर है। यदि हम साधनकी चिन्ता करते रहें, तो साध्यके दर्शन किसी दिन अवश्य हो जायंगे। यदि हमने अितना

निश्चय कर लिया तो जग जीत लिया। हमारे मार्गमें कितने ही संकट आयें बाह्य दृष्टिसे हमारी कितनी ही हार होती दिखे लेकिन हम अपना विश्वास कायम रखकर अेक ही मंत्र जपते रहें — सत्य है। अेकमात्र सत्य ही है। सत्य ही अेक परमेश्वर है। अुसके साक्षात्कारका अेक ही मार्ग, अेक ही साधन है और वह है अहिंसा। अुसे हम कदापि न छोड़ें।

मंगल-प्रभात (गु), पृ० ४–७ १९५४

(ग) ब्रह्मचर्य

जिस मनुष्यने सत्यका वरण किया है, जो अुसीकी अुपासना करता है, वह किसी दूसरी वस्तुकी आराधना करे तो व्यभिचारी सिद्ध होता है। तब फिर, विकारकी आराधना तो वह कर ही कैसे सकता है? जिसके प्रत्येक कर्मका अुद्देश्य सत्यका दर्शन करना है, वह प्रजोत्पत्तिमें अथवा घर गृहस्थी चलानेके कार्यमें कैसे पड़ सकता है? भोग-विलाससे किसीको सत्यकी प्राप्ति हुवी हो अैसा अेक भी अुदाहरण आज तक हमारे पास नहीं है।

अथवा अहिंसाके पालनको लें, तो अुसका पूर्ण पालन ब्रह्मचर्यके बिना असंभव है। अहिंसाका अर्थ है सर्वव्यापी प्रेम। जहां किसी पुरुषने अेक स्त्रीको या किसी स्त्रीने अेक पुरुषको अपना प्रेम सौंप दिया वहां अुनके पास दूसरोंके लिअे क्या रहा? अुसका तो यही अर्थ हुआ कि 'हम दो पहले और बाकी सब बादमें।" पतिव्रता स्त्री पुरुषके लिअे और पत्नीव्रत पुरुष स्त्रीके लिअे अपना सर्वस्व होमनेके लिअे तैयार रहेगा अिसलिअे यह स्पष्ट है कि वे सर्वव्यापी प्रेमका पालन नहीं कर सकते। वे अखिल सृष्टिको अपना कुटुम्ब नहीं बना सकते क्योंकि अुनके पास 'अपना' माना हुआ अेक कुटुम्ब मौजूद है अथवा तैयार हो रहा है। अुसमें जितनी वृद्धि होती है, सर्वव्यापी प्रेममें अुतना ही अधिक विक्षेप होता है। सारी दुनियामें हम अैसा ही होता देखते हैं। अिसलिअे अहिंसा-व्रतका पालन करनेवाला विवाह नहीं कर सकता तब विवाहके बाहर विकारकी तृप्तिकी बात तो सोची ही कैसे जा सकती है?

तब जो विवाह कर बैठे हैं अुनका क्या हो? क्या अुन्हें सत्यकी प्राप्ति कभी होगी ही नहीं? क्या अुनमें सर्वार्पण करनेकी शक्ति

कभी आयेगी ही नहीं ? हम लोगोंने अिसका रास्ता निकाल ही रखा है विवाहित अविवाहितों जैसे बन जायें। अिस दिशामें अिससे अधिक सुन्दर मार्ग मैंने और नहीं देखा। अिस स्थितिका रस जिसने चखा है वह मेरे अिस कथनकी गवाही दे सकेगा। अब तो अिस प्रयोगकी सफलता सिद्ध हुआी कही जा सकती है। विवाहित स्त्री-पुरुष अेक-दूसरेको भाअी-बहन मानने लगें कि वे सारे जंजालसे मुक्त हो जाते हैं। दुनियामें जितनी भी स्त्रियां हैं वे या तो हमारी बहन हैं, मातायें हैं या कन्यायें हैं — यह विचार ही मनुष्यको अेकदम अूंचा अुठानेवाला बन्धनोंसे मुक्ति दिलानेवाला है। अिसमें पति-पत्नी कुछ खोते नहीं बल्कि अपनी पूंजीमें कुछ वृद्धि ही करते हैं, वे कुटुम्बका विस्तार करते हैं और अुनका प्रेम भी विकाररूपी मैलके कट जानेसे अधिक अुज्ज्वल हो जाता है। विकार मिट जाता है, अिसलिअे वे अेक-दूसरेकी सेवा ज्यादा अच्छी तरह कर सकते हैं अुनके बीचमें कलहके अवसर कम आते हैं। जहां प्रेम स्वार्थी और अेकांगी होता है, वहां कलहकी ज्यादा गुंजाअिश होती है।

ब्रह्मचर्यके सम्बन्धमें अूपर प्रस्तुत मुख्य विचार समझ लिया जाय और वह हृदयंगम हो जाय तो फिर ब्रह्मचर्यसे होनेवाले शारीरिक लाभ वीर्यलाभ आदि बहुत गौण हो जाते हैं। जान-बूझकर भोग-विलासके लिअे वीर्यकी हानि करना और शरीरको निःसत्त्व बनाना कितनी बड़ी मूर्खता है! वीर्यका अुपयोग दोनोंकी शारीरिक और मानसिक शक्ति बढ़ानेके लिअे है। अुसका अुपयोग विषय-भोगमें करना तो अुसका अत्यन्त दुरुपयोग है और यह दुरुपयोग अनेक रोगोंकी जड़ होता है।

अैसे ब्रह्मचर्यका पालन मन, वचन और काया तीनोंके द्वारा होना चाहिये। व्रतमात्रका पालन अिसी तरह होना चाहिये। जो मनुष्य शरीरको तो नियंत्रणमें रखता दीखता है, लेकिन मनसे विकारका पोषण करता है, वह मूढ़ मिथ्याचारी है, अैसा हमने गीतामें पढ़ा है। सबका अनुभव भी यही है। मनको विकारी रहने देनेमें और शरीरका दमन करनेमें नुकसानके सिवा और कुछ नहीं है। जहां मन रहता है अन्तमें शरीर भी-वहां खिंचे बिना नहीं रहता। यहां अेक भेद समझ लेनेकी आवश्यकता है। मनको विकारवश होने देना अेक बात है और हमारी

अनिच्छाके बावजूद मन खुद हठात् विकारी हो जाय या हुआ करे, यह दूसरी बात है। अुसके अिस विकारमें हम सहायक न हों तो अन्तमें हमारी जीत निश्चित है। शरीर हाथमें रहता है, पर मन नहीं रहता, अैसा हम क्षण-क्षण अनुभव करते हैं। अिसलिअे यदि हम शरीरको तुरन्त ही अपने अधीन कर लें और मनको अपने अधीन करनेका नित्य प्रयत्न करते रहें, तो कहा जा सकता है कि हमने अपना कर्तव्य-पालन कर लिया। पर यदि हम मनके वश हो जायं, तो शरीर और मनके बीच विरोध शुरू होता है और मिथ्याचारका आरम्भ हो जाता है। जहां तक हम मनोविकारको दबाते रहते हैं वहां तक कह सकते हैं कि शरीर और मन दोनों साथ-साथ चल रहे हैं।

अिस ब्रह्मचर्यका पालन बहुत मुश्किल लगभग अशक्य माना गया है। अिसका कारण ढूंढने पर अैसा मालूम होता है कि ब्रह्मचर्यका बहुत संकीर्ण अर्थ किया गया है। अैसा माना जाता रहा कि जननेन्द्रियके विकारका निरोध ही ब्रह्मचर्यका पालन है। मुझे लगता है कि यह व्याख्या अधूरी और गलत है। विषय-मात्रका निरोध ही सच्चा ब्रह्मचर्य है। जो व्यक्ति दूसरी अिन्द्रियोंको यहां-वहां भटकने देकर केवल अेक ही अिन्द्रियको रोकनेका प्रयत्न करता है वह निष्फल प्रयत्न करता है, अिसमें क्या सन्देह है? हम कानोंसे विकार अुत्पन्न करनेवाली बात सुनें आंखोंसे विकार अुत्पन्न करनेवाली वस्तु देखें, जीभसे विकारोत्तेजक वस्तुका स्वाद लें और अिसके बावजूद जननेन्द्रियको नियंत्रणमें रखनेकी अिच्छा करें, यह तो अग्निमें हाथ डालकर भी न जलनेका प्रयत्न करने जैसा है। अिसलिअे जो जननेन्द्रियको नियंत्रणमें रखनेका निश्चय करता है, अुसे अिन्द्रिय-मात्रको विकारोंके स्पर्शसे बचानेका निश्चय करना ही चाहिये। ब्रह्मचर्यकी संकुचित व्याख्यासे नुकसान हुआ है। मेरा तो दृढ़ मत है और अनुभव है कि यदि हम सारी अिन्द्रियोंको अेकसाथ वशमें रखनेका अभ्यास करें, तो जननेन्द्रियको वशमें रखनेका प्रयत्न तुरन्त सफल हो सकता है।

ब्रह्मचर्यका मूल अर्थ हम सब याद रखें। ब्रह्मचर्य यानी ब्रह्मकी — सत्यकी — शोधमें सहायक चर्या यानी अुसके अनुकूल आचार। अिस

मूळ अर्थमें से सर्वेन्द्रिय-संयमका विशेष अर्थ निकलता है। मात्र जननेन्द्रियके संयमका अधूरा अर्थ तो हमें भूल ही जाना चाहिये।

मंगल-प्रभात (गु) पृ० ७–१०, १९५४

ब्रह्मचर्यके सम्पूर्ण पालनका अर्थ है ब्रह्म-दर्शन। यह ज्ञान मुझे शास्त्रोंके द्वारा नहीं हुआ। यह अर्थ मेरे सामने क्रम-क्रमसे अनुभवसिद्ध होता गया। अुससे सम्बन्ध रखनेवाले शास्त्रवाक्य मैंने बादमें पढ़े। काम-वासनाके सम्पूर्ण त्यागके बिना औश्वरका साक्षात्कार असंभव है।

यंग अिंडिया, २४–६–२६, पृ० २३०

काम-वासनाकी विजय किसी पुरुष या स्त्रीके जीवनका सर्वोच्च प्रयत्न है। काम पर विजय प्राप्त किये बिना अपने पर शासन करनेकी आशा नहीं रखी जा सकती। और आत्म शासनके बिना स्वराज्य या राम राज्य नहीं मिल सकता। आत्म-शासनके बिना सबका राज्य वैसी ही धोखेकी और निराशाकी वस्तु होगी जैसा रंगा हुआ खिलौनेका आम होता है। वह दीखनेमें मोहक परन्तु भीतरसे खोखला और खाली होता है। जिस कार्यकर्ताने वासनाको नहीं जीता वह हरिजन-सेवा साम्प्रदायिक अेकता खादी गोरक्षा या ग्राम-सुधार आदि कार्योंसे सच्ची सेवा करनेकी आशा नहीं रख सकता। अैसे बड़े काम केवल बुद्धि-बलसे नहीं किये जा सकते। अुनके लिअे आध्यात्मिक प्रयत्न या आत्मबलकी जरूरत होती है। आत्मबल केवल औश्वरकी कृपासे मिलता है, और औश्वरकी कृपा अुस आदमी पर कभी नहीं अुतरती जो वासनाका दास है।

हरिजन २१–११–३६ पृ० ३२१

ब्रह्मचर्यकी मेरी व्याख्याका याद रखो। अुसका अर्थ अेक या अनेक अिन्द्रियोंका दमन नहीं है परन्तु अुन सब पर पूर्ण विजय प्राप्त करना है। दोनों स्थितियोंमें बुनियादी भेद है। मैं अपनी सारी अिन्द्रियोंको दबा तो आज भी सकता हूं परन्तु अुन्हें जीतनेमें मुझे कल्प लग सकते हैं। विजयका अर्थ यह है कि वे स्वेच्छासे दासोंका काम दें। मैं अेक सादे कष्ट रहित औपरेशनसे कानके परदेमें छेद करके श्रवणेन्द्रियका दमन कर

सकता हूं। पर यह निकम्मी चीज है। मुझे कानको असी तालीम देनी चाहिये कि वह गपशप गन्दी चर्चा और निन्दा सुननेसे अिनकार कर दे, दिव्य संगीतके लिअे खुला रहे और हजारों मील दूरसे आनेवाली सहायताकी पुकारको सुन ले। कहते हैं कि सन्त रामदासने असा किया था। तो कर्मेन्द्रियोंको किस तरह काममें लिया जाय? हमारे पास जो सबसे बड़ी सर्जनात्मक शक्ति है अुससे अपने जैसी हाड़मांसकी मूर्तियां पैदा करनेके बजाय हम जीवनभरके लिअे रचनात्मक कामकी सृष्टि करें।

बापूके पत्र मीराके नाम पृ० २६६–६७ १९५१

ब्रह्मचर्यके सहायक साधन

अेक भाओी लिखते हैं

> मैं दुःखी हूं मुझे दफ्तरमें काम करते हुअे रास्ते चलते हुअे, दिन-रात, पढ़ते हुअे और काम करते हुअे यहां तक कि प्रार्थनाके समय भी विकार सताते हैं। अिस तरह भटकते हुअे मनको संयममें कैसे रखा जाय? प्रत्येक स्त्रीको अपनी माता समझना कैसे सीखा जाय? आंखोंमें से विशुद्ध प्रेमकी किरणें कैसे निकलें? बुरे विचारोंका निरसन कैसे किया जाय? मेरे सामने आपका ब्रह्मचर्य पर (बरसों पहले लिखा हुआ) लेख है, परन्तु अुससे मुझे सहायता नहीं मिली है।'

यह स्थिति हृदय-विदारक है। अनेकों अिससे पीड़ित हैं। परन्तु जब तक मन बुरे विचारोंसे सतत संग्राम करता रहता है, तब तक निराशाका कोअी कारण नहीं। जब आंखोंका दोष हो तो अुन्हें बन्द कर लेना चाहिये। जब कानोंका दोष हो तो अुन्हें बन्द कर लेना चाहिये। हमेशा नीची निगाह करके चलना अुत्तम है। फिर अुन्हें भटकनेका मौका नहीं मिलेगा। जहां गन्दी बातचीत होती हो या गंदे गीत गाये जाते हों वहां नहीं जाना चाहिये। जीभ पर पूरा नियंत्रण होना चाहिये। मैं जानता हूं कि जिसने जीभ पर काबू नहीं पाया वह भोगकी अिच्छाको नहीं जीत सकता। मुझे मालूम है कि जीभ पर काबू पाना मुश्किल है। परन्तु जिह्वाजयसे अन्य सब अिन्द्रियों पर अपने आप काबू हो जाता

है। स्वादेन्द्रियके नियंत्रणका अेक नियम सब मसालोंको पूरी तरह या यथाशक्ति छोड़ देना है। अिससे भी कठिन नियम मनमें यह भावना पैदा कर लेना है कि हम जो आहार लेते हैं वह शरीरकी रक्षाके लिअे है, स्वादके लिअे हरगिज नहीं। हम हवाको आनन्दके लिअे नहीं लेते श्वासके लिअे लेते हैं। हम पानी अपनी प्यास बुझानेके लिअे पीते हैं, अिसी तरह भोजन भूख मिटानेके लिअे ही करना चाहिये। परन्तु बचपनसे ही हमें अेक दूसरी आदत सिखाओी जाती है। हमारे माता पिता हमें तरह तरहके स्वादोंकी आदत डाल देते हैं, अिसलिअे नहीं कि हमें पोषण मिले बल्कि हमारे प्रेमके अतिरेकसे वे अैसा करते हैं। अिस प्रकार हम बिगड़ जाते हैं। अिसलिअे हमें अपने लालन-पालनके ही परिणामोंसे संग्राम करना पड़ता है।

परन्तु काम-वासना पर काबू पानेके लिअे अेक स्वर्ण नियम भी है। वह है रामका दिव्य नाम या अैसा ही कोअी मंत्र जपना।

हरअेकको अपना प्रिय मंत्र चुन लेना चाहिये। मैंने राम शब्द अिसलिअे सुझाया है कि मुझे बचपनमें अुसे जपनेकी शिक्षा मिली थी। और तबसे मुझे सदा अुससे बल और पोषण मिला है। कोअी भी मंत्र चुना जाय अुसे जपते समय अुसके साथ हमारे हृदयका योग होना चाहिये। मुझे जरा भी शक नहीं है कि अैसे किसी मंत्रको पूर्ण श्रद्धाके साथ जपनेसे अन्तमें सफलता अवश्य मिलेगी भले ही दूसरे विचार मनको भटकाते रहें। वह मंत्र हमारे जीवनको प्रकाश देगा और सब कष्टोंसे बचायेगा। जाहिर है कि अिन पवित्र मंत्रोंका अुपयोग भौतिक हेतुओंके लिअे हरगिज नहीं होना चाहिये। यदि अुनका अुपयोग केवल सदाचारकी रक्षामें ही किया जाय तो मिलनेवाला परिणाम चमत्कारी होगा। अवश्य ही अैसे मंत्रको तोतेकी तरह रटने मात्रसे कोअी लाभ नहीं होता। हमें अिसमें अपनी सारी आत्मा अुडेलनी चाहिये। तोता अुसे यंत्रकी तरह रटता है। हमें अुसका जप अवांछनीय विचारोंको रोकनेकी दृष्टिसे और मंत्रकी अुक्त क्षमतामें पूरी श्रद्धा रखकर करना चाहिये।

यंग अिंडिया ५-६-'२४, पृ० १८६-८७

ब्रह्मचर्यका पालन करना हो तो स्वादेन्द्रिय पर प्रभुत्व प्राप्त करना ही चाहिये। मैंने स्वयं अनुभव किया है कि यदि स्वादको जीत लिया

जाय तो ब्रह्मचर्यका पालन बहुत सरल हो जाता है। अिस कारण अबसे आगेके मेरे आहार-संबंधी प्रयोग केवल अन्नाहारकी दृष्टिसे नहीं, बल्कि ब्रह्मचर्यकी दृष्टिसे होने लगे। मैंने प्रयोग करके अनुभव किया कि आहार थोड़ा सादा बिना मिर्च-मसालेका और प्राकृतिक स्थितिवाला होना चाहिये। ब्रह्मचारीका आहार वनपक्व फल है, अिसे अपने विषयमें तो मैंने छह वर्ष तक प्रयोग करके देखा है। जब मैं सूखे और हरे वनपक्व फलों पर रहता था, तब जिस निर्विकार अवस्थाका अनुभव मैंने किया वैसा अनुभव आहारमें परिवर्तन करनेके बाद मुझे नहीं हुआ। फलाहारके दिनोंमें ब्रह्मचर्य स्वाभाविक हो गया था। दुग्धाहारके कारण वह कष्ट-साध्य बन गया है।

बाह्य अुपचारोंमें जिस तरह आहारके प्रकार और परिमाणकी मर्यादा आवश्यक है, अुसी तरह अुपवासके बारेमें भी समझना चाहिये। अिन्द्रियां अितनी बलवान हैं कि अुन्हें चारों तरफसे अूपरसे और नीचेसे दसों दिशाओंसे घेरा जाय तो ही वे अंकुशमें रहती हैं। सब जानते हैं कि आहारके बिना वे काम नहीं कर सकतीं। अतअेव अिन्द्रिय-दमनके हेतुसे स्वेच्छापूर्वक किये गये अुपवाससे अिन्द्रिय-दमनमें बहुत मदद मिलती है अिसमें मुझे कोअी सन्देह नहीं। कअी लोग अुपवास करते हुअे भी अिसमें विफल होते हैं। अुसका कारण यह है कि अुपवास ही सब कुछ कर सकेगा अैसा मानकर वे केवल स्थूल अुपवास करते हैं और मनसे छप्पन भोगोंका स्वाद लेते रहते हैं। अुपवासके दिनोंमें वे अुपवासकी समाप्ति पर क्या खायेंगे अिसके विचारोंका स्वाद लेते रहते हैं और फिर शिकायत करते हैं कि न स्वादेन्द्रियका संयम सधा और न जननेन्द्रियका! अुपवासकी सच्ची अुपयोगिता वहीं होती है जहां मनुष्यका मन भी देह दमनमें साथ देता है। तात्पर्य यह है कि मनमें विषय-भोगके प्रति विरक्ति आनी चाहिये। विषयकी जड़ें मनमें रहती हैं। अुपवास आदि साधनोंसे यद्यपि बहुत सहायता मिलती है फिर भी वह अपेक्षाकृत कम ही होती है। कहा जा सकता है कि अुपवास करते हुअे भी मनुष्य विषयासक्त रह सकता है। पर बिना अुपवासके विषयासक्तिको जड़मूलसे मिटाना संभव नहीं है। अतअेव ब्रह्मचर्यके पालनमें अुपवास अनिवार्य अंग है।

ब्रह्मचर्यका अर्थ है मन-वचन-कायासे समस्त अिन्द्रियोंका संयम। अिस संयमके लिअे अूपर बताये गये त्यागोंकी आवश्यकता है, अिसे मैं दिन-प्रतिदिन अनुभव करता रहा हूं और आज भी कर रहा हूं। त्यागके क्षेत्रकी कोअी सीमा ही नहीं है, जैसे ब्रह्मचर्यकी महिमाकी कोअी सीमा नहीं है। अैसा ब्रह्मचर्य अल्प प्रयत्नसे सिद्ध नहीं होता। करोड़ों लोगोंके लिअे यह सदा केवल आदर्शरूप ही रहेगा। क्योंकि प्रयत्नशील ब्रह्मचारी अपनी त्रुटियोंका नित्य दर्शन करेगा, अपने अन्दर कोने-कोनेमें छिपकर बैठे हुअे विकारोंको पहचान लेगा और अुन्हें निकालनेका सतत प्रयत्न करेगा। जब तक विचारों पर अितना अंकुश प्राप्त नहीं हो जाय कि अिच्छाके बिना अेक भी विचार मनमें न आये तब तक ब्रह्मचर्य सम्पूर्ण नहीं कहा जा सकता। विचार-मात्र विकार हैं। अुन्हें वशमें करनेका मतलब है मनको वशमें करना और मनको वशमें करना तो वायुको वशमें करनेसे भी कठिन है। फिर भी यदि आत्मा है तो यह वस्तु भी साध्य है ही। हमारे मार्गमें कठिनाअियां आकर बाधा डालती हैं अिससे कोअी यह न माने कि वह असाध्य है। वह परम अर्थ है। और परम अर्थके लिअे परम प्रयत्नकी आवश्यकता हो तो अुसमें आश्चर्य ही क्या?

परन्तु अैसा ब्रह्मचर्य केवल प्रयत्न-साध्य नहीं है, अिसे मने (दक्षिण अफ्रीकासे) हिन्दुस्तान आनेके बाद अनुभव किया। कहा जा सकता है कि तब तक मैं मूर्च्छावश था। मैंने यह मान लिया था कि फलाहारसे विकार समूल नष्ट हो जाते हैं और मैं अभिमानपूर्वक यह मानता था कि अब मुझे कुछ करना बाकी नहीं है।

पर अिस विचारके प्रकरण तक पहुंचनेमें अभी देर है। अिस बीच अितना कह देना आवश्यक है कि अीश्वर-साक्षात्कारके लिअे जो लोग मेरी व्याख्यावाले ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहते हैं, वे यदि अपने प्रयत्नके साथ ही अीश्वर पर श्रद्धा रखनेवाले हों तो अुनके लिअे निराशाका कोअी कारण नहीं रहेगा। आत्मार्थीके लिअे रामनाम और रामकृपा ही अन्तिम साधन हैं।

आत्मकथा पृ० १८०–८२, १९५७

जाय तो ब्रह्मचर्यका पालन बहुत सरल हो जाता है। अिस कारण अबसे आगेके मेरे आहार-संबंधी प्रयोग केवल अन्नाहारकी दृष्टिसे नहीं, बल्कि ब्रह्मचर्यकी दृष्टिसे होने लगे। मैंने प्रयोग करके अनुभव किया कि आहार थोड़ा सादा बिना मिर्च-मसालेका और प्राकृतिक स्थितिवाला होना चाहिये। ब्रह्मचारीका आहार वनपक्व फल है, जिसे अपने विषयमें तो मैंने छह वर्ष तक प्रयोग करके देखा है। जब मैं सूखे और हरे वनपक्व फलों पर रहता था, तब जिस निर्विकार अवस्थाका अनुभव मैंने किया वैसा अनुभव आहारमें परिवर्तन करनेके बाद मुझे नहीं हुआ। फलाहारके दिनोंमें ब्रह्मचर्य स्वाभाविक हो गया था। दुग्धाहारके कारण वह कष्ट-साध्य बन गया है।

बाह्य अुपचारोंमें जिस तरह आहारके प्रकार और परिमाणकी मर्यादा आवश्यक है, अुसी तरह अुपवासके बारेमें भी समझना चाहिये। अिन्द्रियां अितनी बलवान हैं कि अुन्हें चारों तरफसे, अूपरसे और नीचेसे दसों दिशाओंसे घेरा जाय तो ही वे अंकुशमें रहती हैं। सब जानते हैं कि आहारके बिना वे काम नहीं कर सकतीं। अतअेव अिन्द्रिय-दमनके हेतुसे स्वेच्छापूर्वक किये गये अुपवाससे अिन्द्रिय-दमनमें बहुत मदद मिलती है, अिसमें मुझे कोअी सन्देह नहीं। कअी लोग अुपवास करते हुअे भी अिसमें विफल होते हैं। अुसका कारण यह है कि अुपवास ही सब कुछ कर सकेगा अैसा मानकर वे केवल स्थूल अुपवास करते हैं और मनसे छप्पन भोगोंका स्वाद लेते रहते हैं। अुपवासके दिनोंमें वे अुपवासकी समाप्ति पर क्या खायेंगे अिसके विचारोंका स्वाद लेते रहते हैं और फिर शिकायत करते हैं कि न स्वादेन्द्रियका संयम सधा और न जननेन्द्रियका! अुपवासकी सच्ची अुपयोगिता वहीं होती है जहां मनुष्यका मन भी देह दमनमें साथ देता है। तात्पर्य यह है कि मनमें विषय-भोगके प्रति विरक्ति आनी चाहिये। विषयकी जड़ें मनमें रहती हैं। अुपवास आदि साधनोंसे यद्यपि बहुत सहायता मिलती है फिर भी वह अपेक्षाकृत कम ही होती है। कहा जा सकता है कि अुपवास करते हुअे भी मनुष्य विषयासक्त रह सकता है। पर बिना अुपवासके विषयासक्तिको जड़मूलसे मिटाना संभव नहीं है। अतअेव ब्रह्मचर्यके पालनमें अुपवास अनिवार्य अंग है।

ब्रह्मचर्यका अर्थ है, मन-वचन-कायासे समस्त अिन्द्रियोंका संयम। अिस संयमके लिअे अूपर बताये गये त्यागोंकी आवश्यकता है, अिसे मैं दिन प्रतिदिन अनुभव करता रहा हूं और आज भी कर रहा हूं। त्यागके क्षेत्रकी कोअी सीमा ही नहीं है जैसे ब्रह्मचर्यकी महिमाकी कोअी सीमा नहीं है। अैसा ब्रह्मचर्य अल्प प्रयत्नसे सिद्ध नहीं होता। करोड़ों लोगोंके लिअे यह सदा केवल आदर्शरूप ही रहेगा। क्योंकि प्रयत्नशील ब्रह्मचारी अपनी त्रुटियोंका नित्य दर्शन करेगा अपने अन्दर कोने-कोनेमें छिपकर बैठे हुअे विकारोंको पहचान लेगा और अुन्हें निकालनेका सतत प्रयत्न करेगा। जब तक विचारों पर अितना अंकुश प्राप्त नहीं हो जाय कि अिच्छाके बिना अेक भी विचार मनमें न आये तब तक ब्रह्मचर्य सम्पूर्ण नहीं कहा जा सकता। विचार-मात्र विकार हैं। अुन्हें वशमें करनेका मतलब है मनको वशमें करना और मनको वशमें करना तो वायुको वशमें करनेसे भी कठिन है। फिर भी यदि आत्मा है तो यह वस्तु भी साध्य है ही। हमारे मार्गमें कठिनाअियां आकर बाधा डालती हैं अिससे कोअी यह न माने कि यह असाध्य है। यह परम अर्थ है। और परम अर्थके लिअे परम प्रयत्नकी आवश्यकता हो तो अुसमें आश्चर्य ही क्या?

परन्तु अैसा ब्रह्मचर्य केवल प्रयत्न-साध्य नहीं है अिसे मैंने (दक्षिण अफ्रीकासे) हिन्दुस्तान आनेके बाद अनुभव किया। कहा जा सकता है कि तब तक मैं मूर्च्छावश था। मैंने यह मान लिया था कि फलाहारसे विकार समूल नष्ट हो जाते हैं और मैं अभिमानपूर्वक यह मानता था कि अब मुझे कुछ करना बाकी नहीं है।

पर अिस विचारके प्रकरण तक पहुंचनेमें अभी देर है। अिस बीच अितना कह देना आवश्यक है कि अीश्वर-साक्षात्कारके लिअे जो लोग मेरी व्याख्यावाले ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहते हैं, वे यदि अपने प्रयत्नके साथ ही अीश्वर पर श्रद्धा रखनेवाले हों तो अुनके लिअे निराशाका कोअी कारण नहीं रहेगा। आत्मार्थीके लिअे रामनाम और रामकृपा ही अन्तिम साधन हैं।

आत्मकथा पृ० १८०–८२, १९५७

अनुभव सिखाता है कि जो अपने विकारोंका दमन करना चाहते हैं अुनके लिये मांसाहार अनुकूल नहीं होता। परन्तु चरित्र-निर्माण अथवा अिन्द्रिय-दमनमें आहारके महत्त्वको जरूरतसे ज्यादा समझना भूल है। आहार अेक अच्छा सहायक साधन है और अुसकी अुपेक्षा नहीं करनी चाहिये। परन्तु आहारमें ही सारा धर्म समझ लेना, जैसा भारतमें अकसर किया जाता है, अुतना ही गलत है जितना आहारके सम्बन्धमें संयमकी कोभी परवाह ही न करना और अपनी अिच्छाको बेलगाम छोड़ देना।

यंग अिंडिया ७-१०-'२६ पृ० ३४७

ब्रह्मचर्यकी सीढ़ियां

पहली सीढ़ी अुसकी आवश्यकताको अच्छी तरह समझ लेना है।

दूसरी सीढ़ी है धीरे-धीरे अिन्द्रियोंको वशमें करना। ब्रह्मचारीको अपनी जीभ जरूर वशमें कर लेनी चाहिये। अुसे जीनेके लिये न कि भोगके लिये खाना चाहिये। अुसे केवल पवित्र वस्तुअें ही देखनी चाहिये और हरअेक गंदी चीजके सामने आंख बन्द रखनी चाहिये। यह कुलीनताका चिह्न है कि हम अपनी आंखें नीची रखकर चलें और अिधर-अुधर न देखें। अिसी तरह अेक ब्रह्मचारी कोभी अश्लील या अपवित्र बात नहीं सुनेगा और न कोभी तेज और अुत्तेजक पदार्थ सूंघेगा। साफ मिट्टीकी सुगन्ध बनावटी अित्र-फुलेलकी सुगन्धसे कहीं मीठी होती है। ब्रह्मचर्यार्थीको सारे समय अपने हाथ-पैरोंको भी अुपयोगी कामोंमें लगाये रखना चाहिये। वह कभी कभी अुपवास भी करे।

तीसरी सीढ़ी है शुद्ध साथी — शुद्ध मित्र और शुद्ध पुस्तकें रखना।

अन्तिम परन्तु महत्त्वकी दृष्टिसे अत्यन्त श्रेष्ठ सीढ़ी है प्रार्थना। ब्रह्मचर्यार्थीको नित्य नियमसे पूरे दिलके साथ रामनाम लेना चाहिये और अीश्वर-कृपाकी याचना करनी चाहिये।

साधारण पुरुष या स्त्रीके लिये अिनमें से कोभी भी बात कठिन नहीं है। ये बिलकुल सीधी-सादी हैं परन्तु अुनकी सादगी ही परेशान करनेवाली है। जहां अिरादा होता है वहां रास्ता बहुत सरल हो जाता है। लोगोंमें अिरादा नहीं होता अिसलिये वे व्यर्थ भटकते हैं। यह हकीकत

है कि संसारका आधार थोड़े या बहुत ब्रह्मचर्य या संयमके पालन पर है। अिसीसे जाहिर है कि यह आवश्यक और व्यावहारिक है।

यंग अिंडिया, २९-४-२६, पृ० १५७-५८

पतञ्जलिने पांच नियम बताये हैं। अिस युगके लिओ वे पांचसे बढ़ाकर ग्यारह कर लिये गये हैं। वे हैं अहिंसा सत्य, अस्तेय ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, शरीर-श्रम, अस्वाद, अभय, सर्वधर्म-समभाव स्वदेशी और अस्पृश्यता-निवारण।

यह याद रखना चाहिये कि ये सब नियम समान रूपसे महत्त्व पूर्ण हैं। अेकका भंग होनेसे सबका भंग होता है। अिसलिओ यह अत्या वश्यक है कि सारे यम-नियमोंको अेक समझा जाय। अिससे हम ब्रह्मचर्यका पूरा अर्थ और महत्त्व अनुभव कर सकेंगे।

हरिजन ८-६-'४७, पृ० १८०

संतति-नियमन

संतति-नियमनकी आवश्यकताके बारेमें दो राय नहीं हो सकती। परन्तु अुसका अेकमात्र अुपाय जो प्राचीन कालसे चला आ रहा है संयम या ब्रह्मचर्य ही है। यह अेक अचूक और श्रेष्ठ अुपाय है और जो अुसका प्रयोग करते हैं अुनका वह कल्याण करता है। चिकित्साशास्त्री मानव जाति पर बड़ा अहसान करेंगे अगर संतति-निग्रहके बनावटी अुपाय खोजनेके बजाय वे संयमके साधन ढूंढ निकालेंगे। संभोगका हेतु सुख नहीं संतानोत्पत्ति है। जहां संतानकी अिच्छा नहीं होती वहां संभोग अपराध है।

कृत्रिम अुपाय बुराअीको प्रतिष्ठा प्रदान करनेके बराबर है। अुनसे पुरुष और स्त्री लापरवाह बन जाते हैं। और, अिन अुपायोंको जो प्रतिष्ठा दी जा रही है अुससे वे पाबंदियां जल्दी ही भंग हो जायेंगी जो लोकमतने हम पर लगा रखी हैं। कृत्रिम अुपायोंको अपनानेका परिणाम नपुंसकता और मानसिक विनाश होगा। यह अिलाज रोगसे भी बुरा साबित होगा। अपने कर्मोंके फलसे बचनेका प्रयत्न करना अनुचित और

अनैतिक है। जो आदमी अधिक खा लेता है अुसके लिअे यही अच्छा है कि अुसके पेटमें दर्द हो और फिर वह अुपवास करके अुस दर्दसे मुक्त हो। वह स्वादके लोभमें मनमाना खाये और फिर पौष्टिक अथवा दूसरी औषधियां लेकर अपनी बदपरहेजीके परिणामोंसे बच निकले, यह अुसके लिअे अच्छा नहीं है। यह तो और भी बुरा है कि वह अपने काम-विकारोंका पोषण और भोग करे और फिर अपने कृत्योंके फलसे बच जाय। प्रकृति बड़ी कठोर है। वह अपने नियमोंके किसी भी अुल्लंघनका पूरा बदला लेती है। नैतिक परिणाम नैतिक प्रतिबंधोंके पालनसे ही अुत्पन्न हो सकते हैं। अन्य सब प्रतिबंधोंसे वह अुद्देश्य ही विफल हो जाता है जिसके लिअे वे प्रतिबंध लगाये जाते हैं। कृत्रिम अुपायोंके प्रयोगके पीछे दलील यह है कि भोग जीवनकी आवश्यकता है। अिससे अधिक तर्कहीन बात और क्या हो सकती है। जो लोग संतति-नियमन करना चाहते हैं अुन्हें पुराने लोगोंके खोजे हुअे विहित अुपाय आजमाकर देखने चाहियें और यह जाननेकी कोशिश करनी चाहिये कि अुन्हें फिरसे कैसे जारी किया जा सकता है। अुनके सामने अिस दिशामें काफी प्रारम्भिक काम करनेके लिअे पड़ा हुआ है। बाल-विवाह आबादीके बढ़नेका बहुत बड़ा कारण है। जीवनका मौजूदा ढंग भी अनियंत्रित सन्तान-वृद्धिकी बुराअीका अेक बड़ा कारण है। अगर अिन कारणोंकी खोज की जाय और अुनका अुपाय किया जाय तो समाजका नैतिक अुत्थान होगा। अगर अधीर अुत्साही अुनकी अुपेक्षा करेंगे और कृत्रिम अुपायों पर चल पड़ेंगे तो परिणाम नैतिक पतनके सिवा कुछ नहीं होगा। और हमारा समाज, जो विभिन्न कारणोंसे पहलेसे ही दुर्बल हो चुका है कृत्रिम अुपायोंके अपनानेसे और भी दुर्बल हो जायेगा। अिसलिअे जो लोग हल्के मनसे कृत्रिम अुपायोंका समर्थन कर रहे हैं अुनके लिअे अुत्तम यही है कि वे अिस विषयका दुबारा अध्ययन करें, अपनी हानिकारक प्रवृत्तिको रोक दें और विवाहितों और अविवाहितों दोनोंके लिअे ब्रह्मचर्यको लोकप्रिय बनायें। संतति-नियमनका अेकमात्र अुदात्त और सीधा तरीका यही है।

यंग अिंडिया, १२-३-२५, पृ० ८८-८९

(घ) अपरिग्रह या गरीबी

परिग्रह यानी संचय अथवा अिकट्ठा करना। सत्यका शोधक, अहिंसाका अुपासक परिग्रह नहीं कर सकता। परमात्मा परिग्रह नहीं करता। अुसे जितनी चीजें 'चाहिये' अुतनी वह रोजकी रोज पैदा करता है। अिसलिअे यदि हमारा अुसमें विश्वास हो तो हमें मानना चाहिये कि हमारे लिअे जितना चाहिये अुतना वह रोज-रोज देता है और देता रहेगा। साधु-संतोंका भक्तोंका यह अनुभव है। रोजके लिअे जितना चाहिये अुतना ही रोज पैदा करनेके अीश्वरीय नियमका हम जानते नहीं हैं अथवा जानते हुअे भी पालते नहीं हैं। अिसीलिअे तो जगतमें विषमता और अुससे अुत्पन्न होनेवाले दुःख हम भोगते हैं। धनाढ्यके घर अुसके लिअे आवश्यक वस्तुओंके भण्डार भरे होते हैं जिनका अपव्यय होता है और जो खराब हो जाती हैं। दूसरी ओर अुनके अभावमें करोड़ों लोग मारे-मारे फिरते हैं, भूखों मरते हैं, ठंडसे ठिठुरते हैं। सब लोग जितना अुनके लिअे आवश्यक हो अुतना ही संग्रह करें, तो किसीको तंगी न सहनी पड़े और सबको संतोष रहे। आज तो दोनों ही तंगीका अनुभव करते हैं। लखपति करोड़पति होनेकी धुनमें रहता है फिर भी अुसे संतोष नहीं होता। गरीब लखपति होना चाहता है, गरीबको अपने पेटके लायक मिलनेसे ही संतोष होता नजर नहीं आता। लेकिन गरीबको अपने पेटके लायक पानेका अधिकार है और अुसे अुतना मिल जाय वैसी व्यवस्था कर देना समाजका धर्म है। अतः अुसके और अपने संतोषके लिअे धनाढ्यको अिस दिशामें पहल करनी चाहिये। वह अपना अतिशय परिग्रह छोड़ दे, तो गरीबको अुसकी आवश्यकताके अनुसार सहज मिल सके, और दोनों पक्ष साथ-साथ संतोषका पाठ भी सीखें। आदर्श आत्यंतिक अपरिग्रह तो अुसका ही होता है जो मनसे और कर्मसे दिगम्बर है। यानी वह पक्षीकी तरह घर, वस्त्र और अन्नकी परवाह किये बिना विचरण करेगा। अन्न अुसे रोज जितना चाहिये अुतना भगवान देता रहेगा। अिस अवधूत स्थितिको तो कोअी विरला ही पहुंच सकता है। हम सामान्य कोटिके सत्याग्रही और जिज्ञासु अिस आदर्शको ध्यानमें रखकर, जिस तरह बने अुस तरह, नित्य अपने परिग्रहकी जांच-पड़ताल करते रहें

भौर मुसे कम करते रहें तो बस है। सच्ची प्रगति और सच्ची सम्यताका लक्षण परिग्रहकी वृद्धि नहीं परन्तु विचारपूर्वक और बिच्छापूर्वक मुसमें की गयी कमी है। परिग्रह ज्यों ज्यों कम किया जाता है, त्यों त्यों सच्चा सुख और सच्चा संतोष बढ़ता है सेवाकी शक्ति बढ़ती है।

बिस तरह विचार करते हुमे हम आत्यंतिक त्यागके आदर्श पर जा पहुंचते हैं और शरीर जब तक है तब तक बुसका बुपयोग सेवाके लिये करना सीख लेते हैं यहां तक कि बुसका सच्चा आहार सेवा ही हो जाता है। बुसका खाना-पीना बुठना-बैठना जागना-सोना — सारी क्रियायें सेवाके लिये ही होती हैं। बिसमें से बुत्पन्न होनेवाला सुख ही सच्चा सुख है, और बैसा करनेवाला मनुष्य अन्तमें सत्यका दर्शन करेगा। बिस दृष्टिसे हम सबको अपने परिग्रहका विचार कर लेना चाहिये।

यह भी याद रखें कि वस्तुओंकि अपरिग्रहकी तरह विचारोंका भी अपरिग्रह होना चाहिये। जो मनुष्य अपने दिमागमें निरर्थक ज्ञान भर रखता है वह परिग्रही ही है। जो विचार हमें अीश्वरसे विमुख करें या बुसकी ओर न ले जायं बुनकी गिनती परिग्रहमें होगी और बिसलिये वे त्याज्य हैं।

मंगल प्रभात (गु), पृ० १८–२० १९५४

भौतिक सुख-सुविधा और आराम अेक हद तक जरूरी हैं, परन्तु बुसके बाद वे सहायक होनेके बजाय बाधक बन जाते हैं। बिसलिये असंख्य आवश्यकतायें पैदा करने और बुन्हें पूरा करनेका आदर्श अेक भ्रमजाल मालूम होता है। मनुष्यकी शारीरिक आवश्यकतायें और संकुचित बौद्धिक आवश्यकतायें भी अेक हदके बाद रुक जानी चाहिये। अन्यथा वे शारीरिक और बौद्धिक विलास बन जाती हैं। मनुष्यको अपनी शारीरिक और सांस्कृतिक सुविधाओंकी व्यवस्था बिस तरह करनी चाहिये कि बुससे मानव-सेवामें बाधा न पड़े। बुसकी सारी शक्तियां बिस सेवाकार्यमें ही लगनी चाहिये।

हरिजन २९–८–१९, पृ० २२९

मेरे पास कोअी सम्पत्ति नहीं फिर भी मैं महसूस करता हूं कि मैं संसारमें सबसे धनवान आदमी हूं, क्योंकि मुझे अपने लिये या अपनी

सार्वजनिक संस्थाओंके लिअे कभी अभाव नहीं रहा। ीश्वरने सदा ही समय पर मेरी पुकार सुनी है। मुझे कभी अैसे अवसर याद हैं जब मेरे सार्वजनिक कामोंके लिअे लगभग आखिरी कौड़ी खर्च हो चुकी थी। तब रुपया वहांसे आ गया जहांसे अुसकी कोअी आशा नहीं थी। अिन कृपाओंने मुझे नम्र बनाया है और ीश्वर तथा अुसके भलेपनमें मेरी श्रद्धा अितनी दृढ़ कर दी है कि जीवनमें कभी मुझे घोर कष्टका सामना करना पड़े तो मैं अुसका भार भी सहन कर सकूंगा। अिस लिअे दुनिया चाहे तो मेरी सम्पत्तिका त्याग कर देनेकी बात पर हंस सकती है। मेरे लिअे तो यह त्याग निश्चित लाभ ही सिद्ध हुआ है। मैं चाहता हूं कि लोग मेरे संतोषमें मेरी स्पर्धा करें। वह मेरी सबसे कीमती निधि है। और अिसलिअे शायद यह कहना सही है कि दरिद्रताका प्रचार तो मैं करता हूं लेकिन मैं हूं धनवान।

दिस वाज बापू ले०—आर० के० प्रभु, पृ० १२० १९५४

मुझे अिसमें संदेह है कि पाषाण-युगकी तुलनामें फौलाद-युग अुन्नतिका सूचक है। यह अुन्नति मुझे प्रभावित नहीं करती। हमारी बुद्धि और दूसरी तमाम शक्तियां आत्माके विकासमें ही लगनी चाहिये।

यंग अिंडिया १३-१०-'२१ पृ० ३२५

(क) अस्तेय

अस्तेय यानी चोरी न करना। जो चोरी करता है, अुसके विषयमें अैसा नहीं कहा जा सकता कि वह सत्यको जानता है या प्रेमधर्मका पालन करता है। फिर भी हम सभी जाने-अनजाने, कम या ज्यादा मात्रामें चोरीका अपराध करते ही हैं। किसी दूसरेकी वस्तु अुसकी अनुमतिके बिना लेना तो चोरी है ही, परन्तु जिसे वह अपनी मानता है अुस वस्तुको भी मनुष्य चुरा सकता है। अुदाहरणके लिअे कोअी पिता अपने बालकोंके जाने बिना अुनसे छिपानेके लिअे कोअी चीज चुपचाप खा ले तो वह चोरी ही होगी।

किसी वस्तुकी हमें आवश्यकता नहीं हो फिर भी जिसके अधिकारमें वह है अुससे—अुसकी अनुमति लेकर ही क्यों न हो—वह वस्तु

लेना भी चोरी ही है। अनावश्यक कोअी भी वस्तु नहीं लेना चाहिये। असी चोरी दुनियामें ज्यादासे ज्यादा खाने-पीनेकी वस्तुओंके विषयमें होती है। मुझे अमुक फलकी आवश्यकता नहीं है, फिर भी मैं अुसे ले लेता हूं अथवा आवश्यकतासे अधिक प्रमाणमें लेता हूं तो वह चोरी है। अुसकी आवश्यकता वस्तुतः कितनी है, अिस बातको मनुष्य हमेशा जानता नहीं है, और प्रायः हम सब अपनी आवश्यकताओंको, वे जितनी होनी चाहियें अुससे अधिक बढ़ा लेते हैं। अिस तरह हम अनजाने चोर बनते हैं। विचार करने पर हम देखेंगे कि अपनी बहुत-सी आवश्यकतायें हम कम कर सकते हैं। अस्तेय-व्रतका पालन करनेवाला अपनी आवश्यकतायें अुत्तरोत्तर कम करेगा। दुनियाकी अधिकांश गरीबी अस्तेय व्रतके भंगसे पैदा हुअी है।

अूपर बताअी गअी चोरियां बाह्य या शारीरिक हैं। अिससे सूक्ष्म और आत्माको नीचे गिरानेवाली या रखनेवाली चोरी मानसिक है। मनसे दूसरेकी कोअी वस्तु प्राप्त करनेकी अिच्छा करना या अुस पर लोभकी मलिन दृष्टि डालना मानसिक चोरी है।

अस्तेय-व्रतका पालन करनेवाला भविष्यमें संग्रहणीय वस्तुओंकी चिंताके फेरमें नहीं पड़ेगा। अगर खोज की जाय तो अधिकांश चोरियोंकी जड़में यही मलिन अिच्छा काम करती दिखाअी देगी। आज जो वस्तु केवल हमारे विचारमें होती है, कल अुसे प्राप्त करनेके लिअे हम भले-बुरे अुपायोंकी योजना करने लग जाते हैं।

और जिस तरह वस्तुकी चोरी होती है, अुसी तरह विचारकी भी चोरी होती है। अमुक अुत्तम विचार हमें न सूझा हो फिर भी यदि हम अहंकारवश असा कहें कि वह हमें सूझा है तो हम विचारकी चोरी करते हैं। असी चोरी दुनियाके अितिहासमें अनेक विद्वानोंने की है और वह आज भी चलती है।

अिसलिअे अस्तेय-व्रतका पालन करनेवालेको बहुत नम्र बहुत विचारशील बहुत सावधान और बहुत सादा रहना होता है।

मंगल-प्रभात (गु) पृ० १५–१७ १९५४

मेरा कहना है कि अेक प्रकारसे हम चोर हैं। अगर मैं कोअी अैसी चीज लेता हूं जो मेरे अुपयोगके लिअे तुरत जरूरी नहीं है और अुसे अपने पास रख छोड़ता हूं तो अुसका यही अर्थ है कि मैं अुसे किसी अन्य व्यक्तिसे चुराकर लेता हूं। मैं यह कहनेका साहस करता हूं कि यह प्रकृतिका निरपवाद रूपमें बुनियादी कानून है कि प्रकृति हमारी जरूरतोंके लिअे रोज काफी पैदा करती है और अगर प्रत्येक मनुष्य अपनी आवश्यकतासे अधिक न ले तो अिस दुनियामें गरीबी न हो, अिस संसारमें कोअी भूखसे न मरे। परन्तु जब तक यह असमानता रहेगी तब तक हम चोरी करते ही रहेंगे। मैं समाजवादी नहीं हूं और जिनके पास सम्पत्ति है अुनसे मैं अुसे छीनना नहीं चाहता परन्तु मैं यह जरूर कहना चाहता हूं कि हममें से जो अंधकारमें से प्रकाशमें आना चाहते हैं अुन्हें खुद तो अिसी नियम पर अमल करना चाहिये। मैं किसीकी भी सम्पत्ति छीनना नहीं चाहता। अैसा करूं तो मैं अहिंसाके नियमसे विचलित होता हूं। अगर किसीके पास मुझसे अधिक है तो भले ही हो। परन्तु जहां तक मेरे अपने जीवनके नियमनका सम्बंध है मैं जरूर कहूंगा कि मुझे जिस चीजकी जरूरत नहीं है अुसे मुझे नहीं रखना चाहिये। भारतमें तीस लाख आदमी अैसे हैं जिन्हें अेक जून खाकर संतोष कर लेना पड़ता है। आपको और मुझे जो अधिक समझदार हैं अपनी आवश्यकतायें कम करनी होंगी और स्वेच्छासे भूख भी सहनी होगी ताकि अुन लोगोंको पोषण भोजन और वस्त्र मिल सकें।

स्पीचेज अेण्ड राअिटिंग्ज ऑफ महात्मा गांधी पृ० ३८४

अगर हमें अहिंसक बनना है तो हमें अिस पृथ्वी पर अैसी किसी वस्तुकी अिच्छा नहीं करनी चाहिये जो छोटेसे छोटे आदमीको नसीब न हो सके।

विथ गांधीजी अिन सीलोन ले०—महादेव देसाअी पृ० १३२, १९२८

२९

धर्म जीवनके सब क्षेत्रोंमें व्याप्त होना चाहिये

आज मानव-प्रवृत्तियोंका सारा सप्तक अेक अविभाज्य वस्तु है। आप सामाजिक, आर्थिक राजनीतिक और विशुद्ध धार्मिक कामके अलग अलग खाने नहीं बना सकते। मुझे मानव-सेवासे भिन्न कोआी धर्म मालूम नहीं है। जिससे और सब कार्मोंको अेक नैतिक आधार मिल जाता है, जिसका अुनमें अन्यथा अभाव होता है, और अुस अभावके कारण जीवन अेक अर्थका शोरगुल-मात्र रह जाता है।

हरिजन २४-१२-३८ पृ० ३९३

हमें सत्य और अहिंसाको केवल व्यक्तिगत व्यवहारका विषय नहीं बल्कि समूहों समाजों और राष्ट्रोंके व्यवहारकी चीज भी बनाना होगा। कमसे कम मेरा स्वप्न तो यही है, जिसे पूरा करनेका प्रयत्न करते हुअे ही मुझे जीना है और मरना है। मेरी श्रद्धा मुझे नित नये सत्य खोजनेमें मदद देती है। अहिंसा आत्माका गुण है और जीवनकी हरअेक चीजमें सभीको अुसका पालन करना चाहिये। अगर अुस पर सभी क्षेत्रोंमें अमल नहीं हो सकता तो अुसका कोआी व्यावहारिक मूल्य नहीं है।

हरिजन, २-३-४० पृ० २३

३०
सामाजिक क्षेत्रमें

सब मनुष्य समान हैं

मेरी रायमें जन्मजात या कर्मप्राप्त श्रेष्ठता जैसी कोओी चीज नहीं है। मैं अद्वैतके मूलभूत सिद्धान्तको मानता हूं और अद्वैतके मेरे अर्थमें किसी भी स्थितिमें श्रेष्ठताके विचारकी कोओी गुंजाअिश नहीं है। मैं अिस बातको पूरी तरह मानता हूं कि जन्मसे सब मनुष्य समान हैं। सभी — चाहे वे भारतमें पैदा हुअे हों या अिंग्लैण्ड-अमरीकामें या किसी भी परिस्थितिमें पैदा हुअे हों — अेक ही आत्मा रखते हैं। और चूंकि मेरा सब मनुष्योंकी अिस जन्मजात समानतामें विश्वास है, अिसी लिअे मैं अुस श्रेष्ठताके सिद्धान्तसे लड़ता हूं जो हमारे बहुतसे शासक अपनेमें मान लेनेकी धृष्टता करते हैं। श्रेष्ठताके अिस सिद्धान्तसे मैं दक्षिण अफ्रीकामें पग-पग पर लड़ा हूं और अिस जन्मजात विश्वासके कारण ही मैं अपनेको भंगी, कतवैया, जुलाहा किसान और मजदूर कहता हूं और अैसा कहनेमें आनन्दका अनुभव करता हूं। और जब कभी ब्राह्मणोंने अपने लिअे अपने जन्मके कारण अथवा बादमें प्राप्त किये हुअे ज्ञानके कारण किसी श्रेष्ठताका दावा किया है तो मैं अुनसे भी लड़ा हूं। मैं समझता हूं कि किसी भी व्यक्तिका अपने ही अेक मानव-बन्धुसे श्रेष्ठ होनेका दावा करना पुरुषोचित नहीं है। जो श्रेष्ठताका दावा करता है वह अुसी क्षण मनुष्यताका दावा खो देता है। यह मेरा निश्चित मत है।

यंग अिंडिया २९-९-२७ पृ० ३२९

रूप अनेक हैं परन्तु अुन्हें अनुप्राणित करनेवाली आत्मा अेक है। जहां बाह्य अेकताकी जड़में यह सर्वव्यापी बुनियादी अेकता हो वहां अूंच-नीचके भेदभावोंकी गुंजाअिश कैसे हो सकती है? और यह हकीकत आपको दैनिक जीवनमें हर कदम पर नजर आती है। सब धर्मोंका अंतिम लक्ष्य अिसी मूल अेकताको सिद्ध करना है।

हरिजन १५-१२-३३ पृ० ३

व्यक्तिवाद बनाम सामाजिक दायित्व

मैं व्यक्तिगत स्वतंत्रताको महत्व देता हूं परंतु आपको यह नहीं भूलना चाहिये कि मनुष्य असलमें सामाजिक प्राणी है। वह अपने मौजूदा दरजे पर अपने व्यक्तित्वका सामाजिक प्रगतिकी आवश्यकताओंके साथ मेल बिठाकर पहुंचा है। अनियंत्रित व्यक्तिवाद जंगली जानवरोंका धर्म है। हमें व्यक्तिगत स्वतंत्रता और सामाजिक संयमके बीचका मार्ग निकालना सीखना होगा। सारे समाजकी भलाईके खातिर समाजकी पाबंदियोंको खुशीसे मान लेनेसे व्यक्ति और वह समाज जिसका वह सदस्य है, दोनों समृद्ध बनते हैं।

हरिजन, २७–५–३९, पृ० १४४

अेक भी नैतिक गुण अैसा नहीं है जिसका ध्येय केवल व्यक्तिका कल्याण हो या जिसे मिलनेसे ही संतोष हो जाय। अिसी तरह दूसरी ओर अेक भी नैतिक अपराध अैसा नहीं है जो वास्तविक अपराधीके सिवा और बहुतसे लोगों पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव न डालता हो। अिसलिये किसी व्यक्तिका अच्छा या बुरा होना अुसीके सोचनेकी बात नहीं है, बल्कि वास्तवमें सारे समाजके नहीं सारे संसारके सोचनेकी बात है।

अेथिकल रिलीजन ले०–मो० क० गांधी, पृ० ५५

मैं मनुष्यकी और अिसलिये सब प्राणियोंकी अेकतामें विश्वास करता हूं। अिसलिये मैं मानता हूं कि यदि अेक मनुष्यका आध्यात्मिक लाभ होता है तो अुसके साथ साथ सारे संसारको लाभ होता है और यदि अेक मनुष्यका पतन होता है तो अुतना पतन जगतभरका होता है।

यंग अिंडिया ४–१२–२४ पृ० ३९८

३१

आर्थिक क्षेत्रमें

आधार प्रेम हो

मनुष्य-रूपी यंत्रको सचालित करनेवाली शक्ति अुसकी आत्मा है। अिस यंत्रमें पैसा-रूपी कोयला भरकर अुससे ज्यादासे ज्यादा काम लिया जा सकता है यह समझना गलत है। वह अच्छा और अधिक काम तभी करेगा जब अुसकी सद्भावनाओंको जगाया जाय। सच्चा नियम यह है कि दो समान होशियार मालिक और समान योग्यतावाले नौकर लिये जायं तो सहानुभूतिशील मालिकका नौकर सहानुभूतिशून्य मालिकके नौकरकी अपेक्षा ज्यादा और अच्छा काम करेगा। मतलब यह कि मनुष्यके प्रति परोपकारकी दृष्टि रखनेसे परिणाम हमेशा अच्छा ही आता है। अलबत्ता मालिक प्रतिफल प्राप्त करनेकी आशासे ही प्रेम बताये तो यह सम्भव है कि अुसको निराश होना पड़े। प्रेम प्रेमके ही लिओ बताया जाना चाहिये और अुसका प्रतिफल बिना मांगे अपने-आप मिल जाता है। जैसा कि कहा जाता है जो अपनी जान बचा रखनेकी कोशिश करता है वह अुसे खो देता है और जो मरनेकी तैयारी रखता है वह अुसे बचा लेता है।

जो नवयुवक बड़े कारखानोंमें या पेढ़ियोंमें नौकरी कर लेते हैं, अुन्हें कभी-कभी अपना घर छोड़कर दूर जाना होता है। अैसी स्थितिमें मालिकको अुनके मां-बापका स्थान ले लेना चाहिये। यदि मालिक अुनकी कोअी चिन्ता न करे, तो वे बिचारे बिना मां-बापके अनाथ-जैसे हो जाते हैं। अिसलिअे व्यापारी या मालिकको पद-पद पर अपने मनसे यह सवाल करते रहना चाहिये कि, "मैं अपने लड़कोंको जिस तरह रखता हूं अुसी तरह अपने नौकरोंके प्रति बरतता हूं या नहीं?

और जिस तरह जहाजके कप्तानका यह फर्ज है कि जिस समय जहाज संकटमें फंस जाय अुस समय वह अुसे सबसे अन्तमें छोड़े अुसी तरह दुष्काल आ पड़ने पर या दूसरे संकटोंमें व्यापारीका यह फर्ज है कि अपने नौकरोंकी रक्षा वह अपने पहले करे। ये विचार, संभव है,

किसीको आश्चर्यकारक मालूम हों। परन्तु सच पूछिये तो अुनका आश्चर्यकारक मालूम होना ही अिस जमानेकी विचित्रता है। कारण, विचार करने पर कोअी भी यह देख सकता है कि सच्ची नीति तो हमने अभी बनायी नहीं है।

सर्वोदय (गु), पृ० ११-१२ १०-१८ १९५७

न्यायका अर्थशास्त्र

सच्चे अर्थशास्त्रका अूंचेसे अूंचे नैतिक मापदण्डसे हरगिज विरोध नहीं होता। ठीक अिसी तरह सच्चे नीतिशास्त्रका अगर वह किसी कामका है तो साथ ही साथ अच्छा अर्थशास्त्र भी होना चाहिये। जो अर्थशास्त्र धनकी पूजा सिखाता है और कमजोरको चूसकर बलवानको दौलत अिकट्ठी करनेमें समर्थ बनाता है वह झूठा और मनहूस विज्ञान है। वह तो मानो मृत्युका संदेशवाहक है। अिसके विपरीत सच्चा अर्थशास्त्र सामाजिक न्यायका पक्ष लेता है सबकी — कमजोरसे कमजोर तककी — समान रूपसे भलाअी करता है और शालीन जीवनके लिअे अनिवार्य होता है।

हरिजन, ९–१०–'३७ पृ० २९२

नये दृष्टिकोणके अनुसार हम यह सोचना बंद कर देंगे कि जो कुछ मिल सकता हो वह हम ले लें। और जो सबको नहीं मिल सकता अुसे लेनेसे तो हम अिनकार ही कर देंगे।

यंग अिंडिया १–९–२५, पृ० ३०४

यदि मैं मजदूरोंको अुचित मजदूरी दूं तो मेरे पास अनावश्यक धन अिकट्ठा नहीं होगा, मैं अपने पैसेका अुपयोग आमोद-प्रमोदमें नहीं कर सकूंगा और मेरे हाथों गरीबी नहीं बढ़ेगी। मैं जिस व्यक्तिको अुचित मजदूरी दूंगा वह भी दूसरेको अुसकी अुचित मजदूरी देना सीखेगा। अिस तरह न्यायका झरना सूखेगा नहीं बल्कि ज्यों ज्यों आगे बढ़ेगा त्यों त्यों बलवान बनेगा। और यदि प्रजामें अैसी न्यायबुद्धि होगी, तो प्रजा सुखी होगी और अुचित रीतिसे समृद्ध भी होगी।

अिस दृष्टिके अनुसार अर्थशास्त्री गलत सिद्ध होते हैं। वे तो अैसा कहते हैं कि ज्यों ज्यों स्पर्धा बढ़ती है त्यों त्यों प्रजा समृद्ध होती है। वास्तवमें यह मान्यता गलत है। स्पर्धाका अुद्देश्य मजदूरीका दर घटाना होता है। और अुसमें धनवान अधिक धन अिकट्ठा करता है और गरीब ज्यादा गरीब बनता है। अैसी स्पर्धासे अन्तमें प्रजाका नाश तक हो सकता है। मालिक और मजदूरमें लेन-देनका नियम तो यह होना चाहिये कि हरअेक मनुष्यको अुसकी योग्यताके अनुसार मजदूरी मिले। अुसमें भी अेक प्रकारकी स्पर्धा रहेगी लेकिन अुसका परिणाम यह होगा कि मनुष्य सुखी और अपने काममें होशियार बनेंगे। कारण अुस हालतमें अुन्हें काम प्राप्त करनेके लिये अपनी मजदूरीकी दर घटानेकी नहीं बल्कि ज्यादा होशियार बननेकी आवश्यकता होगी। यही कारण है कि लोग सरकारी नौकरियां करना चाहते हैं। सरकारी नौकरियोंमें वेतन नौकरियोंके दरजेके अनुसार बंधे होते हैं। वहां स्पर्धा सिर्फ होशियारीकी होती है। प्रार्थी यह नहीं कहता कि वह कम वेतनमें काम करनेके लिये तैयार है वह तो यह दिखाता है कि अुसमें दूसरोंकी अपेक्षा अधिक योग्यता है। किन्तु व्यापारमें गलत स्पर्धा है और अुसके फलस्वरूप धोखा-धड़ी बेअीमानी चोरी आदि बुराअियां बढ़ गयी हैं। दूसरी तरफ जो माल तैयार होता है वह खराब और सड़ा हुआ होता है। व्यापारी चाहता है कि मैं खाअूं, मजदूर चाहता है कि मैं ठग लूं और ग्राहक सोचता है कि म बीचमें से लाभ अुठा लूं। अिस तरह व्यवहार बिगड़ता है लोगोंमें लड़ाअी-झगड़े होते है, भूखों मरनेकी स्थिति पैदा होती है और हड़तालें बढ़ती हैं। महाजन ठग बन जाते है और ग्राहक नीतिका पालन नहीं करते। अेक अन्यायमें से अन्य अनेक अन्याय पैदा होते है और अंतमें महाजन, मजदूर और ग्राहक — सबको दुःख और बरबादी भोगनी पड़ती है। प्रजाके पास जो पैसा होता है वही मानो अुसके लिये अभिशापरूप हो जाता है।

सच्चा अर्थशास्त्र तो वही है जिसका आधार न्यायबुद्धि पर हो। प्रत्येक स्थितिमें न्यायका व्यवहार कैसे करना नीतिका पालन किस प्रकार करना — यह शास्त्र जो प्रजा सीखती है वही सुखी होती

है। बाकी सब व्यर्थ है और जिससे वासना पोषण सिद्ध होता है कि विगाड़-कामसे बुद्धि विपरीत हो जाती है। लोगोंको जैसे बने वैसे धनवान होना सिखाना विपरीत बुद्धि सिखाने जैसा है।

सर्वोदय (गु) पृ० ११–११, १९५७

आर्थिक समानता

समाजकी मेरी कल्पना यह है कि यद्यपि हम सब जन्मसे समान हैं अर्थात् हमें समान अवसर पानेका हक है, लेकिन सबकी क्षमता अेक-सी नहीं होती। प्रकृतिका विधान अैसा है कि यह सम्भव ही नहीं है। अुदाहरणके लिअे, सबकी अेक ही अूंचाअी, अथवा अेक ही रंग या सबमें बुद्धिकी समान मात्रा वगैरा नहीं हो सकती, अिसलिअे प्रकृतिकी व्यवस्थाके अनुसार कुछ लोगोंमें कमानेकी शक्ति अधिक होगी और कुछमें कम। बुद्धिशाली लोगोंमें कमानेकी शक्ति अधिक होगी और वे अपनी बुद्धिका अुपयोग अिस प्रयोजनके लिअे करेंगे। अगर वे अपनी बुद्धिका अुपयोग दयाभावसे करेंगे तो वे राज्यका कार्य पूरा करेंगे। अैसे लोग संरक्षकके तौर पर रहेंगे और किसी रूपमें नहीं। मैं बुद्धिशाली आदमीको अधिक कमाने दूंगा, मैं अुसकी बुद्धिको कुंठित नहीं करूंगा। परंतु जिस प्रकार बापके सब कमाअू बेटोंकी आय सम्मिलित पारिवारिक कोषमें जाती है, ठीक अुसी तरह अुस बुद्धिशाली आदमीकी अधिक कमाईका अधिकांश राज्यकी भलाअीके लिअे खर्च होना चाहिये।

यंग अिंडिया २६–११–'३१ पृ० ३६८

समान वितरणका असली अर्थ यह है कि हरअेक आदमीको अुसकी समान स्वाभाविक आवश्यकतायें पूरी करनेका साधन मिलना चाहिये, अुससे अधिक नहीं। अुदाहरणके लिअे, यदि अेक मनुष्यकी पाचन-शक्ति कमजोर है और अुसे अपनी रोटीके लिअे आधा पाव आटा ही चाहिये और दूसरेको आधा सेर चाहिये तो दोनोंकी जरूरतें पूरी होनी चाहिये। अिस आदर्शकी सिद्धिके लिअे सारी समाज-व्यवस्थाकी रचना फिरसे करनी पड़ेगी। अहिंसाके आधार पर बना हुआ समाज और किसी

आदर्शका समर्थन नहीं कर सकता। शायद हम अिस लक्ष्यको सिद्ध न कर सकें परंतु हमें अिसे ध्यानमें रखना और अुसके निकट पहुंचनेके लिये सतत काम करना होगा। हम अपने लक्ष्यकी ओर जितनी प्रगति करेंगे अुतना ही हमें सुख और संतोष मिलेगा। और अुतना ही अेक अहिंसक समाज पैदा करनेके काममें हमारा हाथ माना जायगा।

अब हम अिस बातका विचार करें कि अहिंसाके द्वारा समान वित-रण कैसे कराया जा सकता है? अिस दिशामें पहला कदम यह होगा कि जिसने अिस आदर्शको अपने जीवनका अंग बना लिया है वह अपने व्यक्तिगत जीवनमें तदनुसार जरूरी परिवर्तन करेगा। भारतकी दरिद्रताको ध्यानमें रखते हुअे वह अपनी जरूरतें कमसे कम कर लेगा। अुसकी कमाअी बेअीमानीसे मुक्त होगी। वह सट्टा करके कमानेकी अिच्छा छोड़ देगा। अुसका निवास-स्थान जिन्दगीके नये ढंगके अनुरूप होगा। जीवनके हर क्षेत्रमें वह संयमका पालन करेगा। जब वह अपने ही जीवनमें जो कुछ हो सकता है वह सब कर लेगा तभी वह अिस स्थितिमें होगा कि अपने साथियों और पड़ोसियोंमें अिस आदर्शका प्रचार करे।

वास्तवमें समान वितरणके अिस सिद्धान्तकी जड़में ट्रस्टीशिप या संरक्षकताका सिद्धान्त होना चाहिये। यानी अमीरोंको अपने अतिरिक्त धनका ट्रस्टी या संरक्षक बनना स्वीकार करना चाहिये। समान वितरणका सिद्धान्त कहता है कि अमीरोंको भी अपने पड़ोसियोंसे अेक भी रुपया अधिक नहीं रखना चाहिये। यह सब कैसे किया जाय? अहिंसाके द्वारा? या धनवानोंकी सम्पत्ति छीन कर? सम्पत्ति छीननेके लिअे हमें स्वभा-वत हिंसाका आश्रय लेना पड़ेगा। यह हिंसक कार्रवाअी समाजको लाभ नहीं पहुंचा सकती। समाज अुलटा घाटेमें रहेगा क्योंकि वह अुस आदमीके गुणोंसे वंचित हो जायगा जो धन अिकट्ठा करना जानता है। अिसलिअे अहिंसक अुपाय स्पष्ट ही श्रेष्ठ है। धनवान आदमीके पास अुसका धन रहने दिया जायगा। परंतु अुसका अुतना ही भाग वह अपने काममें लेगा जितना अुसे अपनी जरूरतोंके लिअे अुचित रूपमें चाहिये बाकीको वह समाजके अुपयोगके लिअे धरोहर-रूप समझेगा। अिस तर्कमें यह मान लिया गया है कि संरक्षक प्रामाणिक होगा।

परंतु यदि भरसक कोशिशके बावजूद धनवान लोग सच्चे अर्थमें निर्धनोंके संरक्षक न बनें और गरीबोंको अधिकाधिक कुचला जाय और वे भूखसे मरें, तो क्या किया जाय? अिस पहेलीका हल ढूंढ़नेके प्रयत्नमें मुझ अहिंसक असहयोग और सविनय आज्ञाभंगका सही और अचूक अुपाय सूझा है। धनवान लोग समाजके गरीबोंके सहयोगके बिना धन संग्रह नहीं कर सकते। यदि यह ज्ञान गरीबोंमें प्रवेश करके फैल जाय तो वे बलवान हो जायंगे और अहिंसाके द्वारा अपनेको अुन कुचलनेवाली असमानताओंसे मुक्त करना सीख लेंगे, जिन्होंने अुन्हें भुखमरीके किनारे पहुंचा दिया है।

हरिजन २५-८-'४०, पृ० २६०-६१

अहिंसात्मक आर्थिक रचना

मेरा कहना है कि यदि भारतको अहिंसक मार्ग पर चलकर विकास करना है तो मुझे बहुतसी बातोंमें विकेन्द्रीकरण करना होगा। पर्याप्त बलके बिना केन्द्रीकरण न तो कायम रखा जा सकता है, न अुसकी रक्षा की जा सकती है।

हरिजन १०-१२-'३९, पृ० ३९१

आप कारखानोंकी सभ्यताके आधार पर अहिंसाका निर्माण नहीं कर सकते परंतु आत्म-निर्भर गांवोंके आधार पर अुसका निर्माण किया जा सकता है। ग्रामीण अर्थ-व्यवस्थाकी जो कल्पना मैंने की है अुसमें शोषणकी बिलकुल गुंजािश नहीं है और शोषण हिंसाका सार है। अिसलिये अहिंसक होनेसे पहले आपको देहाती मानसवाला बनना पड़ेगा।

हरिजन, ४-११-'३९ पृ० ३३१

भारी पैमाने पर अुद्योगीकरणका परिणाम लाजमी तौर पर देहातियाका निष्क्रिय अथवा सक्रिय शोषण होगा, क्योंकि अुद्योगीकरणके साथ ही स्पर्धा और बिक्रीकी समस्यायें आयेंगी। अिसलिये हमें अपनी सारी शक्ति अिसी बात पर लगानी चाहिये कि देहात स्वावलम्बी बनें और वे अपने अुपयोगके लिये ही ज्यादातर माल तैयार करें। अगर

ग्रामोद्योगोंका यह रूप कायम रखा जाय तो सिस बातमें कोसी आपत्ति नहीं होगी कि गांववाले अुन आधुनिक यन्त्रों और औजारोंको भी काममें लें जिन्हें वे बना सकते हैं और जो अुन्हें पुसा सकते हैं। शर्त सितनी ही है कि अुनका अुपयोग दूसरोंके शोषणके साधनके रूपमें न किया जाय।

हरिजन २९-८-'३६, पृ० २२६

अुद्योगीकरण और बड़े पैमानेवाले अुत्पादनका विकास हालमें हुआ है। हम नहीं जानते कि हमारे सुखकी वृद्धिमें अुनका क्या हाथ है, परन्तु सितना हमें मालूम है कि अुनके पीछे (कच्चे माल और मंडियोंके लिअे)* हालके विश्वयुद्ध अवश्य आये हैं।

दि हिन्दुस्तान स्टैण्डर्ड ९-१२-'४४

सबका — सर्वोदय होना चाहिये

अहिंसावादी (अधिकसे अधिक लोगोंकी अधिकसे अधिक भलाओीके) अुपयोगितावादी सूत्रको स्वीकार नहीं कर सकता। वह सबकी अधिकसे अधिक भलाओीका प्रयत्न करेगा और सिस आदर्शकी सिद्धिमें प्राणोंकी बाजी लगा देगा। सिसलिअे वह मरनेको तैयार रहेगा ताकि दूसरे जिन्दा रह सकें। सबकी ज्यादासे ज्यादा भलाओीमें अधिकसे अधिक लोगोंकी भलाओी तो आ ही जाती है और सिसलिअे वह तथा अुपयोगितावादी अपनी प्रगति-यात्रामें कभी जगह अेक हो जायंगे परन्तु अेक समय अैसा अवश्य आता है जब अुन्हें जुदा होना और विरोधी दिशाओंमें भी काम करना पड़ेगा। अुपयोगितावादी तो अपने तर्कके अनुसार कभी अपना बलिदान नहीं करेगा। सर्वोदयवादी अपने आपको भी क़ुर्बान कर देगा।

यंग अिंडिया ९-१२-'२६, पृ० ४३२

अगर हम अुस जगत-पिताके अंश हैं और हमारा निर्माण अुसके स्वरूपके अनुसार हुआ है, तो हमारा कर्तव्य चंद लोगोंकी भलाओी नहीं,

* कोष्ठकके भीतरके शब्द हमारे हैं — सम्पादक।

बहुतोंकी भलाओ भी नहीं परन्तु सबकी भलाओ करना ही होना चाहिये।

स्पीचेज अेण्ड रायटिंग्ज ऑफ महात्मा गांधी, पृ० १५० १९११

३२

राजनीतिक क्षेत्रमें

प्रेमके जरिये स्वतंत्रता

मैंने जिस लोकतंत्रकी कल्पना की है, अुसमें — यानी अहिंसा द्वारा स्थापित लोकतंत्रमें — सबको बराबर आजादी होगी। हरअेक स्वयं अपना मालिक होगा।

गांधीजीज कॉरेस्पॉण्डेंस विथ दि गवर्नमेण्ट १९४२-४४ पृ० १७१

सच्चा लोकतंत्र या जनताका स्वराज्य असत्य और हिंसामय अुपायोंसे कभी नहीं आ सकता। जिसका सीधासा कारण यह है कि अुनके प्रयोगका स्वाभाविक परिणाम यह होगा कि विरोधियोंको दबाकर अुनका सफाया करके सारा विरोध समाप्त कर दिया जायगा। अैसे वातावरणमें व्यक्तिगत स्वतंत्रता नहीं पनप सकती। व्यक्तिगत स्वतंत्रता विशुद्ध अहिंसाके राज्यमें ही पूरी तरह काम कर सकती है।

हरिजन २७-५-'३९ पृ० १४३

राज्य सर्वशक्तिमान न हो

राजनीतिक सत्ताका अर्थ है राष्ट्रीय प्रतिनिधियोंके द्वारा राष्ट्रीय जीवनका नियमन करनेकी क्षमता। अगर राष्ट्रीय जीवन जितना सम्पूर्ण बन जाय कि अुसका कामकाज अपने आप चलने लगे तो प्रतिनिधित्वकी जरूरत नहीं रह जाती। तब अेक ज्ञानपूर्ण अराजकताका राज्य हो जाता है। अैसे राज्यमें हरअेक अपना अपना राजा होता है। वह अपने पर जिस ढंगसे शासन करता है कि अपने पड़ोसीके लिअे कभी बाधक नहीं बनता। जिसलिअे आदर्श राज्यमें कोअी राजनीतिक सत्ता नहीं होती क्योंकि कोअी राज्य नहीं होता। परन्तु आदर्श जीवनमें कभी

पूरा पूरा सिद्ध नहीं होता। अिसीलिअे थोरोका प्रसिद्ध वचन है कि अुत्तम सरकार वह है जो कमसे कम हुकूमत करती है।

यंग अिंडिया, २-७-३१, पृ० १६२

म राज्यकी सत्ताकी वृद्धिको अत्यत भयकी दृष्टिसे देखता हूं क्योंकि यद्यपि वह दीखनेमें तो शोषणको कमसे कम करके भलाअी करती है फिर भी व्यक्तित्वका नाश करके वह मानव-जातिका सबसे बड़ा अहित करती है। कारण, सब प्रकारकी प्रगतिकी जड़ तो व्यक्तित्व ही है।

दि मॉडर्न रिव्यू पृ० ४१३ १९३५

अिसलिअे वचन और कर्म दोनोंसे मैंने यह सिद्ध करनेका प्रयत्न किया है कि राजनीतिक स्वराज्य — अर्थात् बहुसंख्यक स्त्री-पुरुषोंका स्वराज्य — व्यक्तिके स्वराज्यसे बेहतर नहीं है और अिसलिअे वह अुन्हीं अुपायोंसे प्राप्त होता है जो व्यक्तिगत स्वराज्य या आत्म-शासनके लिअे जरूरी होते हैं।

विथ गांधीजी अिन सीलोन ले०— महादेव देसाअी पृ० ९३ १९२८

अहिंसात्मक राजनीतिक रचना

सच्चे लोकतंत्रका काम बीस आदमी केन्द्रमें बैठकर नहीं चला सकते। अुसका काम हर गांवके लोगों द्वारा नीचेसे चलाना पड़ता है।

हरिजन १८-१-'४८ पृ० ५१९

अैसा समाज अनगिनत गांवोंका बना होगा। अुसका फैलाव अेकके अूपर अेकके ढंगका नहीं बल्कि लहरोंकी तरह अेकके बाद अेकके रूपका होगा। जीवन अेक मीनारकी शकलमें नहीं होगा जहां अूपरकी तंग चोटीको नीचेके चौड़े पाये पर खड़ा रहना पड़ता है। अुसमें तो समुद्रकी लहरोंकी तरह जीवन अेकके बाद अेक घेरेकी शकलमें होगा और व्यक्ति अुनका केन्द्र होगा। यह व्यक्ति सदा गांवके लिअे मिटनेको तैयार होगा और गांव ग्राम-समूहके लिअे मिटनेको तैयार रहेगा। अिस तरह आखिर सारा समाज अैसे लोगोंका बन जायगा, जो मगरूर बनकर कभी किसी

पर हमला नहीं करते, लेकिन हमेशा नम्र रहते हैं और अपनेमें समुद्रकी भुस शानको महसूस करते हैं जिसके वे अभिन्न अंग हैं।

अिसलिअे सबसे बाहरका घेरा अपनी सत्ता और शक्तिका अुपयोग भीतरी घेरेको कुचलनेमें नहीं करेगा, बल्कि अुसके भीतरके सब लोगोंको बल देगा और स्वयं अुनसे बल ग्रहण करेगा। मुझे ताना दिया जा सकता है कि यह सब अेक ख्याली तसवीर है और अिसलिअे जरा भी विचारणीय नहीं है। यदि युक्लिडकी परिभाषावाले बिन्दुका किसी भी व्यक्ति द्वारा चित्रित न किये जा सकने पर भी अविनाशी मूल्य रहा है तो मेरे चित्र भी मानव-जातिके जीवित रहनेके लिअे अपना मूल्य रखता है। यह चित्र पूरी तरह तो कभी सिद्ध नहीं होगा फिर भी हिन्दुस्तानको अिस सच्चे चित्रके लिअे जीना चाहिये। हमें पता चाहिये अिसका हमारे पास ठीक चित्र होना चाहिये तभी हम अुससे मिलती जुलती कोअी वस्तु प्राप्त कर सकते हैं। अगर हिन्दुस्तानके प्रत्येक गांवमें कभी प्रजातंत्र या पंचायती राज्य कायम हुआ, तो मैं अपने अिस चित्रकी सचाअी साबित कर सकूंगा जिसमें आखिरी व्यक्ति पहले व्यक्तिके बराबर होगा या दूसरे शब्दोंमें कहें तो कोअी भी व्यक्ति न पहला होगा, न आखिरी।

हरिजन २८-७-'४६ पृ० २१६

अहिंसा पर आधारित स्वराज्यमें कोअी किसीका दुश्मन नहीं होता, प्रत्येक सबकी भलाअीमें हाथ बटाता है, सब पढ़-लिख सकते हैं और अुनका ज्ञान रोज बढ़ता रहता है। बीमारी और रोग कमसे कम हो जाते हैं। कोअी मुफलिस नहीं होता और मजदूरोंको हमेशा काम मिल जाता है। अैसे शासनमें जुआ शराब और दुराचार या वर्गद्वेषके लिअे कोअी स्थान नहीं होता।

हरिजन, २५-३-'३९ पृ० ६५

राष्ट्रवाद और आन्तर-राष्ट्रवाद

मेरा देशप्रेम वर्जनशील नहीं है अुसमें अैसा कुछ नहीं है जिससे किसी दूसरे राष्ट्रको हानि पहुंचे। अितना ही नहीं यह सब देशोंको

सच्चे अर्थमें लाभ पहुंचायेगा। मेरी कल्पनाके भारतीय स्वातंत्र्यसे संसारको कभी खतरा नहीं हो सकता।

यंग अिंडिया १-४-२४ पृ० १०९

जैसे देशभक्तिका धर्म आज हमें सिखाता है कि व्यक्तिको परिवारके लिअे, परिवारको गांवके लिये, गांवको जिलेके लिये जिलेको प्रान्तके लिये और प्रान्तको देशके लिये मरना चाहिये ठीक असी तरह किसी देशको असलिये आजाद होना चाहिये कि जरूरत हो तो वह संसारके लाभके लिये मर सके। असमें जातीय द्वेषके लिये कोअी गुंजािअश नहीं।

गांधीजी अिन अिंडियन विलेजेज, ले० — महादेव देसाअी, पृ० १७०, १९२७

राज्य-निर्मित सीमाओंके पारवाले हमारे पड़ौसियों तक हमारी सेवाओंके विस्तारकी कोअी मर्यादा नहीं है। अीश्वरने कभी वे सीमायें नहीं बनाअीं।

यंग अिंडिया ३१-१२-३१, पृ० ४२७

मुझे अीश्वरके अेक होनेमें और असलिये मानव-जातिके भी अेक होनेमें पूरा विश्वास है। क्या हुआ यदि हमारे अनेक शरीर हैं। हमारी आत्मा तो अेक ही है। सूर्यकी किरणें आवर्तन (refraction) के कारण अनेक हो जाती हैं। परन्तु अुनका अुद्गम तो अेक ही है।

यंग अिंडिया, २५-९-२४ पृ० ३१३

मेरे धर्ममें और अुस धर्मसे निकले हुअे देशप्रेममें जीव-मात्रका समावेश होता है। मैं मानव-प्राणी कहलानेवालोंके साथ ही नहीं, परन्तु सब प्राणियोंके साथ यहां तक कि कीड़े-मकोड़ोंके साथ भी भाअीचारा या अेकता सिद्ध करना चाहता हूं। अगर आपको आघात न लगे तो मैं पृथ्वी पर रेंगनेवाले प्राणियोंके साथ भी तादात्म्य सिद्ध करना चाहता हूं, क्योंकि हम अेक ही अीश्वरकी सन्तान हैं और अैसी हालतमें सब प्राणी चाहे वे किसी भी रूपमें प्रगट हों वास्तवमें अेक ही हैं।

यंग अिंडिया ४-४-२९, पृ० १०७

३१

त्याग और समर्पण — हिन्दू धर्मका सार

[पहले-पहल त्रिवकनकी आम सभामें गांधीजीने अेक अुपनिषद्के मंत्र द्वारा हिन्दू धर्मके मूल सिद्धांतका सार बताया और अुसके बाद प्रत्येक सभामें अुस धर्मग्राही मंत्रके अनेक गूढ़ार्थोंका स्पष्ट और सरल विवेचन किया। अुक्त मंत्रकी शुद्ध व्याख्या जिसमें ज्यादा विवेचन नहीं था अुन्होंने पहले दिन क्विलनमें की थी। वह नीचे दी जाती है।]

मैं अुपनिषद्का अेक मंत्र आज आपके सामने बोलकर रखता हूं। अुसमें मैं मानता हूं, हिन्दू धर्मका सारा सार आ गया है। आपमें से बहुतसे श्रीशोपनिषद्को जानते हैं। मैंने वर्षों पहले अिसे अनुवाद और टीकाके साथ पढ़ा था। यरवडा जेलमें मैंने अुसे कण्ठस्थ किया। परन्तु अुस समय अुसने मुझे वैसा मोहित नहीं किया जैसा कि पिछले चंद महीनोंमें किया है और अब मैं अिस अंतिम निर्णय पर पहुंचा हूं कि अगर सारे अुपनिषद् और अन्य धर्मग्रंथ अचानक जलकर राख हो जायं और हिन्दुओंकी स्मृतिमें केवल श्रीशोपनिषद्का पहला मंत्र ही रह जाय तो भी हिन्दू धर्म सदा जीवित रहेगा।

अिस मंत्रके चार भाग हैं। पहला भाग है 'ओशावास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्'। अिसका अर्थ मैं अैसा करता हूं कि अिस विशाल जगतमें हम जो कुछ देखते हैं वह सब अीश्वरसे व्याप्त है। दूसरे और तीसरे भागको मैं साथ ले लेता हूं 'तेन त्यक्तेन भुंजीथा'। अिनको मैं दो हिस्सोंमें बांटकर अिस प्रकार अनुवाद करता हूं अुसका त्याग करो और भोगो। अेक और अनुवाद है जिसका वही अर्थ है वह तुम्हें जो कुछ देता है अुसे भोगो। अिस तरह भी आप अुसे दो भागोंमें बांट सकते हैं। फिर अंतिम और सबसे महत्त्वपूर्ण भाग आता है 'मा गृधः कस्यस्विद्

धनम्। जिसका अर्थ है किसीके धनका लोभ न करो। जिस प्राचीन अुपनिषद्के शेष सब मंत्र जिस पहले मंत्रकी टीका जैसे हैं या अुसका पूरा अर्थ बतानेकी कोशिश करते हैं।

मुझे यह मंत्र समाजवादी और साम्यवादीकी दार्शनिककी और अर्थशास्त्रीकी मानो सबकी भूख शान्त करनेवाला मालूम होता है। और अगर यह सच है — जैसा कि म मानता हूं — तो आपको हिन्दू धर्ममें कोअी अैसी चीज लेनेकी जरूरत नहीं जो जिस मंत्रके अर्थके विरुद्ध हो या अुससे मेल नहीं खाती हो। अेक साधारण आदमी जिससे ज्यादा और क्या सीखना चाहता है कि अेक अद्वितीय अीश्वर भूतमात्रका स्रष्टा और स्वामी सम्पूर्ण विश्वके अणु-अणुमें व्याप्त है। जिस मंत्रके दूसरे तीन भाग पहले भागसे ही सीधे फलित होते हैं। अगर आप मानते हैं कि अीश्वरने जो चीजें बनाअी हैं अुन सबमें वह मौजूद है तो आपको मानना ही चाहिये कि जो चीज अुसने नहीं दी है अुसे आप नहीं भोग सकते। और यह देखते हुअे कि वह अपनी असंख्य संतानोंका स्रष्टा है, यह निष्कर्ष निकलता है कि आप किसीकी सम्पत्तिका लोभ नहीं कर सकते। यदि आपका यह विचार है कि आप अुसके पैदा किये हुअे असंख्य प्राणियोंमें से अेक हों तो आपको चाहिये कि सब कुछ त्यागकर अुसके चरणोंमें रख दें। जिसका अर्थ यह है कि सर्वस्व त्यागका कार्य निरा शारीरिक त्याग नहीं है परन्तु अेक दूसरे या नये जन्मका द्योतक है। यह सोच-समझकर किया हुआ कर्म है अज्ञानवश किया हुआ कर्म नहीं है। जिसलिअे वह पुनर्जन्म है। और चूंकि जिसके शरीर है अुसे अपने लिअे खाने पीने और पहननेको चाहिये जिसलिअे अुसे जो भी चाहिये वह स्वभावतः प्रभुसे मांगना चाहिये और अुसे वह अुस त्यागके स्वाभाविक पुरस्कारके रूपमें मिल जाता है। जितना ही नहीं यह मंत्र जिस विशाल विचारके साथ पूरा होता है किसीके धनका लोभ न करो। ज्यों ही आप जिन अुपदेशों पर चलने लगते हैं आप संसारके समाने नागरिक बन जाते हैं और सब प्राणियोंके साथ शान्तिपूर्वक रहने लगते हैं। जिससे जिस लोक और परलोककी हमारी सर्वोच्च आकांक्षायें पूरी हो जाती हैं।

[अिसी मंत्रको गांधीजीने दूसरी सभामें हमारे हृदयोंमें घुठनेवाली सारी समस्याओं और शंकाओंके हलकी सुनहरी कुंजी बताते हुओ कहा]

अीशावास्यमिदम् का यह अेक मंत्र याद रखिये और दूसरे सब शास्त्रोंको भूल जािअये। अवश्य ही आप धर्मग्रंथोंके महासागरमें डूबकर अपना दम घोट सकते हैं। अगर पंडित लोग मस्त और बुद्धिमान हों तो अुनके लिअे ये ग्रंथ अच्छे हैं परन्तु साधारण आदमीको भव-सागरके पार अुतारनेके लिअे अिस मंत्रके सिवा और किसी चीजकी जरूरत नहीं

अिस विश्वमें जो कुछ है अुस सबमें अीश्वर शासक बनकर विराजमान है। अिसलिअे सर्वस्वका त्याग करके अुसे समर्पण कर दो और फिर अुस भागका भाग या अुपभोग करो जो तुम्हारे हिस्सेमें आवे। किसीके धनका लोभ हरगिज न करो।"

हरिजन १०-१-'३७, पृ० ४०५

कल रात किवलनकी सभामें मैंने हिन्दू धर्मका मूलभूत सन्देश समझाया था आपके सामने अभी कुछ मिनट मैं अुसी विषय पर बोलूंगा।*

अिस मंत्रमें ऋषिने भगवानके लिअे अीश के सिवा और किसी विशेषणका अुपयोग नहीं किया है। और अुसने किसीको भी अुसके शासनके बाहर नहीं रखा है। वह कहता है कि हम जो कुछ भी देखते हैं, सब अीश्वरसे व्याप्त है। अिस वचनमेंसे ही अिस मंत्रके दूसरे हिस्से स्वाभाविक रूपमें फलित होते हैं। ऋषि कहता है कि सब कुछ त्याग दो अर्थात् अिस विश्वमें जो कुछ है वह सब त्याग दो हमारी अिस छोटीसी पृथ्वीका नहीं सम्पूर्ण विश्वका त्याग करो। अिसका त्याग करनेका वह हमें अिसलिअे कहता है कि हम अितने नगण्य परमाणु हैं कि हमें सम्पत्तिका कुछ भी खयाल हो तो वह हास्यास्पद दिखाअी देगा। और फिर वह ऋषि कहता है कि त्यागका पुरस्कार है — भुंजीथा अर्थात् त्यागके बाद तुम्हें जो कुछ चाहिये अुसका भोग तुम करो। परन्तु अनुवादके

* हरिपाद (त्रावणकोर) में दिये गये १७-१-३७ के गांधीजीके अेक भाषणसे।

भोग शब्दका अर्थ अुपयोग करना खाना आदि भी किया जा सकता है। अिसलिअे अिसका अभिप्राय यह है कि तुम अपने विकासके लिअे जितना जरूरी है अुससे अधिक नहीं ले सकते। अिस तरह अिस भाग अथवा अुपयोगके साथ दो शर्तें लगी हुअी हैं। अेक तो त्याग वृत्ति रखकर, अथवा भागवतकारकी भाषामें कृष्णार्पणमस्तु सर्वम् की भावनासे ही भोग करना चाहिये। भागवत धर्मके अनुयायीको रोज सुबह अपने मन वचन और कर्म कृष्णको अर्पण करना पड़ते हैं। यह त्याग अथवा समर्पणका कार्य पूरा किये बिना अुसे किसी वस्तुको छूने या अेक प्याला पानी भी पीनेका अधिकार नहीं होता। त्याग और समर्पणका कर्म करनेके बाद अुस कर्मके फलस्वरूप आवश्यकताके अनुसार नित्यके लिअे अन्न वस्त्र और आश्रय पानेका हक मिलता है। अिसलिअे चाहे अैसे समझिये भोग अथवा अुपयोग त्यागका पुरस्कार है अैसा समझिये या त्याग भोगकी अनिवार्य शर्त है अैसा समझिये — हमारे जीवनके लिअे, हमारी आत्माके लिअे त्याग अत्यावश्यक है। और मंत्रमें दो गअी शर्त मानो पूरी न हो अिसलिअे ॠषि शीघ्र ही यह कहकर अुसे पूरा करता है कि दूसरेकी सम्पत्तिका लोभ न करो। अस्तु मेरा आपसे यह कहना है कि संसारके किसी भी भागमें पाया जानेवाला सारा दर्शनशास्त्र या धर्म अिस मन्त्रमें समाया हुआ है।

अब मैं अिस मंत्रको वर्तमान परिस्थिति पर लागू करना चाहता हूं। यदि विश्वमें जो कुछ है वह सब अीश्वर द्वारा व्याप्त है अर्थात् ब्राह्मण और भंगी पंडित और चांडाल अिजावा और परिया — कोअी भी जाति हो — यदि सभीमें भगवान विराजमान है, तो अिस मंत्रके अनुसार न कोअी भूंचा है और न कोअी नीचा है। सभी बिलकुल बराबर हैं, क्योंकि सब अुसी अेक स्रष्टाकी सन्तान हैं।

मैं चाहूंगा कि जो मंत्र मैंने अभी कहा है वह हम सब स्त्री-पुरुष और बच्चोंके हृदयों पर अंकित हो जाय। और जैसा कि मैं मानता हूं यदि अिसमें हिन्दू धर्मका सार आ जाता है तो वह प्रत्येक मंदिरके द्वार पर लिख दिया जाना चाहिये।

हरिजन ३०–१–३७ पृ० ४०७–०८

मिल जाती है। चूंकि यह मेरी और आप सबकी रग रगमें समाया हुआ है जिसलिये मुझे अिससे पृथ्वीके तमाम प्राणियोंकी समानताका सिद्धान्त मिलता है। और अिससे सब सत्यान्वेषी साम्यवादियोंकी आकांक्षायें पूरी होनी चाहिये। यह मंत्र मुझे बताता है कि जो भी चीज ओीश्वरकी है अुसे मैं अपनी नहीं समझ सकता। और यदि मैं चाहता हूं कि मेरा जीवन और अुन सबका जीवन जो अिस मंत्रमें विश्वास रखते हैं, सम्पूर्ण समर्पणका जीवन हो तो यह परिणाम निकलता है कि वह जीवन हमारे भाअियोंकी सतत सेवाका जीवन होना चाहिये।

मैं कहता हूं मेरी यह श्रद्धा है और जो अपनेको हिन्दू कहते हैं अुन सबकी यही श्रद्धा होनी चाहिये। और मैं अपने ओीसाओी और मुसलमान भाअियोंसे यह कहनेका साहस करता हूं कि अगर वे अपने धर्मशास्त्रोंको ढूंढेंगे तो अुन्हें अुनमें अिससे अधिक कुछ नहीं मिलेगा।

मैं आपसे यह बात छिपाना नहीं चाहता कि हिन्दू धर्मके नाम पर जो अनेक अंधविश्वास प्रचलित हैं अुनसे मैं बेखबर नहीं हूं। मैं जानता हूं और मुझे अिस बातका बड़ा दुःख है कि हिन्दू धर्मकी ओटमें कितने ही अन्धविश्वास चल रहे हैं। मुझे यह कटु सत्य कहनेमें कोओी संकोच नहीं है। मुझे अछूतपनको अिन अंधविश्वासोंमें सबसे बड़ा बतानेमें आगा-पीछा नहीं हुआ है। परन्तु अिन सबके होते हुओे भी मैं हिन्दू बना हुआ हूं क्योंकि मैं नहीं मानता कि ये अंधविश्वास हिन्दू धर्मके अंग हैं। हिन्दू धर्ममें शास्त्रवचनोंके अर्थ लगानेके जो नियम बताये गये हैं वे ही मुझे सिखाते हैं कि जिस सत्यका मैंने आपके सामने प्रतिपादन किया है और जो अिस मंत्रमें निहित है अुससे जो भी वस्तु असंगत हो अुसे यह समझकर तुरन्त अस्वीकार कर देना चाहिये कि अिसका हिन्दू धर्मसे कोओी सम्बन्ध नहीं हो सकता।

हरिजन, ३०-१-३७ पृ० ४१०

गीताधर्मका अनुयायी अपनेको चीजोंके बिना भी अपना काम सुखसे चला लेनेकी तालीम देता है। गीताकी भाषामें अिसे समता कहा गया है। क्योंकि गीताका सुख दुःखका विरोधी नहीं है। वह अुस स्थितिसे कहीं ज्यादा अूंची स्थिति है। गीताके भक्तको न सुख होता है न दुःख। और

रूपमें प्रचलित मूर्तिपूजाके सूक्ष्म रूपको मैं तोलता हूं। मूर्तिपूजाका यह तरीका अधिक सूक्ष्म और पकड़में न आनेवाला होनेके कारण पूजाके अुस ठोस और स्थूल रूपकी अपेक्षा जिसमें किसी छोटेसे पत्थर या सोनेकी मूर्तिको देवता समझ लिया जाता है, ज्यादा घातक है।

यंग अिंडिया २८–८–२४ पृ० २८४

मंदिरोंमें मूर्तियां होना चाहिये या नहीं होना चाहिये यह स्वभाव और रुचिकी बात है। किसी हिन्दू या रोमन कैथलिक पूजास्थानमें मूर्तियां होनेके कारण ही मैं अुसे बुरा या अंधविश्वासपूर्ण नहीं मानता और न किसी मस्जिद या प्रोटेस्टेन्ट पूजास्थानको अुसमें मूर्तियां न होनेके कारण ही अच्छा या अंधविश्वास-रहित समझता हूं। क्रॉस या पुस्तक जैसा प्रतीक भी आसानीसे मूर्तिपूजाका साधन और अिसलिअे अंधविश्वासका कारण बन सकता है। और बालकृष्ण अथवा कुमारी मेरीकी मूर्तिकी पूजा अूंचा अुठानेवाली और अंधविश्वाससे सर्वथा मुक्त बन सकती है। यह पूजा करनेवालेके हृदयकी वृत्ति पर निर्भर करता है।

यंग अिंडिया ५–११–२५, पृ० ३७८

पादरीने कहा अगर हिन्दू धर्म अेकेश्वरवादी बन जाय तो औसाअी और हिन्दू धर्म मिलकर भारतकी सेवा कर सकते हैं।

गांधीजी बोले दोनोंमें अैसा सहयोग देखकर मुझे खुशी होगी। अुसके लिअे मेरे पास अपना हल है। परन्तु प्रथम तो मैं अिस कथनको नहीं मानता कि हिन्दू अनेक देवताओंको मानते हैं और मूर्तिपूजक हैं। मैं मानता हूं कि मैं पक्का हिन्दू हूं परन्तु मेरा अनेक देवताओंमें बिलकुल विश्वास नहीं। अपने बचपनमें भी मेरा कभी यह विश्वास नहीं रहा और किसीने मुझे अैसा विश्वास रखना कभी नहीं सिखाया।

रही बात मूर्तिपूजाकी सो किसी न किसी रूपमें अिसके बिना काम नहीं चल सकता। शेख मुसलमान अुस मस्जिदकी रक्षाके लिअे जिसे वह खुदाका घर कहता है, अपनी जान क्यों दे देता है? और औसाअी गिरजेमें क्यों जाता है और जब अुसे शपथ लेनेको कहा जाता है तो वह बाअिबलकी शपथ क्यों लेता है? मुझे अिसमें कोअी आपत्ति

अपने आदर्शको कोओी ठोस रूप देनेके अर्थमें मूर्तिपूजा मनुष्यके स्वभावमें जन्मजात वस्तु है। और भक्तिके सहायक साधनके तौर पर वह मूल्यवान भी है। जिस प्रकार जब हम किसी पुस्तकको पवित्र समझकर अुसका आदर करते हैं तब हम मूर्तिकी पूजा करते हैं। जब हम किसी मंदिर या मस्जिदमें पवित्रता या पूजाकी भावनासे जाते हैं तब हम मूर्तिपूजा ही करते हैं। मुझे अिन सब बातोंमें कोओी हानि भी दिखाओी नहीं देती। अिसके विपरीत चूंकि मनुष्यकी बुद्धि परिमित है अिसलिअे वह दूसरा कुछ कर ही क्या सकता है?

स्वार्थपूर्ण ध्येयोंके लिअे व्रत और अुपासना चाहे गिरजोंमें मस्जिदोंमें और मंदिरोंमें हो चाहे वृक्षों और देवालयोंके सामने हो प्रोत्साहन देनेकी चीज नहीं है। स्वार्थपूर्ण याचना करना या व्रत लेना मूर्तिपूजाके साथ वैसा ही सम्बन्ध नहीं रखता जैसा कार्य और कारणका होता है। निजी स्वार्थके लिअे की जानेवाली प्रार्थना बुरी ही है चाहे वह मूर्तिके सामने की जाय अथवा अदृश्य अीश्वरके सामने।

यंग अिंडिया २६-९-२९ पृ ३२०

मंदिर-पूजा

किसी हिन्दूके लिअे रामचन्द्रकी (मूर्तिकी) पूजाके लिअे मंदिर जाना जरूरी नहीं है। परन्तु जो अपने रामका ध्यान मंदिरमें अुसकी मूर्तिको देखे बिना नहीं कर सकता अुसके लिअे वह जरूरी है। यह दुर्भाग्यकी बात हो सकती है, परन्तु यह सही है कि अुसका राम जैसा अुस मंदिरमें निवास करता है वैसा और कहीं नहीं करता। मैं अिस भोली श्रद्धाको विचलित नहीं करना चाहता।

हिन्दू भक्तका कृष्ण सम्पूर्ण पुरुष है। भक्त आलोचकोंके कठोर निर्णयकी परवाह नहीं करता। अिन नामोंके द्वारा भगवानका ध्यान करके कृष्ण और रामके लाखों भक्तोंने अपने जीवनका परिवर्तन कर डाला है। मैं नहीं जानता यह कैसे होता है। यह अेक रहस्य है। मैंने अिसे साबित करनेकी कोशिश नहीं की। यद्यपि मेरी बुद्धि और मेरे हृदयने बहुत पहले अनुभव कर लिया था कि अीश्वरका परम लक्षण और नाम

सत्य है, तो भी मैं सत्यको रामके नामसे पहचानता हूं। मेरी भुरीस भुरी घड़ियोंमें थिस अेक नामने मुझे बचाया है और अब भी वह मुझे बचा रहा है। यह बचपनका संस्कार भी हो सकता है और तुलसीदासका जादू भी हो सकता है। परन्तु बात सही है। और जब म ये पंक्तियां लिख रहा हूं तब मुझे अपने बाल्यकालके वे दृश्य याद आ रहे हैं जब मैं अपने पैतृक घरसे लगे हुअे रामजीके मंदिरमें रोज जाया करता था। भुस समय मेरा राम वहां निवास करता था। भुसने मुझे अनेक भयों और पापोंसे बचाया। यह मेरे लिअे कोभी अंधविश्वास नहीं था। मूर्तिका रखवाला संभव है बुरा आदमी रहा हो। मैं भुसकी कोभी बुराभी नहीं जानता। मंदिरमें दुष्कर्म होते रहे होंगे लेकिन भिसका भी मुझे कोभी पता नहीं है। थिसलिअे भुनका कोभी असर मुझ पर नहीं हुआ। जो बात मेरे बारेमें सही थी और है वही लाखों हिन्दुओंके बारेमें भी सही है। मंदिर-पूजा मानव-जातिकी अनुभूत आध्यात्मिक अभिलाषाकी पूर्ति करती है। भुसमें सुधारकी गुंजाभिश है, परन्तु जब तक मनुष्य है तब तक वह भी रहेगी।

हरिजन १८-३-३३ पृ० ६

हिन्दुओंके लिअे मंदिर वैसे ही हैं जैसे ओसाभियोंके लिअे गिरजा-घर। जो हजारों हिन्दू सरल श्रद्धा रखकर मंदिरमें जाते हैं वे ठीक वही आध्यात्मिक लाभ प्राप्त करते हैं जो गिरजेमें जानेवाले सीधे-सादे श्रद्धालु ओसाभियोंको मिलता है। किसी हिन्दूका मंदिर छीन लें तो आप भुससे अैसी चीज छीन लेते हैं जिसे वह आम तौर पर जीवनकी सबसे मूल्यवान वस्तु समझता है। यह बात बिलकुल सही है कि अनेक हिन्दू मंदिरोंके चारों ओर अंधविश्वास और भुराभी पैदा हो गभी है। परन्तु यह तो मंदिरोंके सुधारकी दलील हुआी भुनका महत्त्व कम करनेकी नहीं।

हरिजन ११-२-३१ पृ० २

मुझे अैसा कोभी धर्म या सम्प्रदाय मालूम नहीं जिसका काम भुसके देवालयोंके बिना चला हो या चल रहा हो, भले ही भुसे मंदिर, मस्जिद गिरजा यहूदी मंदिर या अगियारी — कोभी भी नाम दिया जाय। यह भी निश्चित नहीं कि भीसा आदि महान सुधारकोंमें से किसीने

मंदिरोंको बिलकुल नष्ट या अस्वीकार किया हो। अुन सबने मन्दिरों और समाज दोनोंके भीतरसे भ्रष्टाचार मिटानेकी कोशिश की थी। अुन सबने नहीं तो कुछने मन्दिरोंमें ही अुपदेश दिया मालूम होता है। मैंने वर्षोंसे मन्दिरोंमें जाना बन्द कर दिया है। परन्तु अिस कारण मैं अपनेको पहलेसे बेहतर आदमी नहीं मानता। मेरी माँ जब मंदिर जाने लायक स्थितिमें होती तो कभी वहां जानेसे चूकती नहीं थी। यद्यपि मैं मन्दिर नहीं जाता फिर भी शायद मेरी अपेक्षा अुसकी श्रद्धा कहीं अधिक थी। अैसे लाखों लोग हैं जिनकी श्रद्धा अिन मन्दिरों गिरजों और मस्जिदोंके कारण बनी रहती है। वे सब अंधविश्वासके अंधानुयायी अथवा धर्मांध नहीं हैं। अंधविश्वास और धर्मान्धताका ठेका अुन्हींका नहीं है। अिन बुराअियोंकी जड़ हमारे हृदयों और मनोंमें है।

मन्दिरोंकी आवश्यकताको अस्वीकार करना अीश्वर, धर्म और पार्थिव अस्तित्वकी आवश्यकताको अस्वीकार करना है।

हरिजन ११-३-३३ पृ० ५

सुधारकको अधिक चिन्ता बाहरी स्वरूपकी अपेक्षा भीतरी वृत्तिमें मौलिक परिवर्तन करनेकी होनी चाहिये। दूसरा परिवर्तन यदि हो जाता है तो पहला अपने आप हो जायगा। यदि दूसरा परिवर्तन नहीं होता तो पहला कितना ही मौलिक क्यों न हो वह निरा आडंबर ही होगा। मकबरा कितना ही सुन्दर हो तो भी वह मजार ही है, मस्जिद नहीं है और पवित्र की हुअी भूमिका खाली टुकड़ा सचमुच अीश्वरका मन्दिर हो सकता है।

हरिजन २९-४-३३ पृ० ६

वह (कुमारी मेयो अपनी पुस्तक मदर अिंडिया में) कहती है कि मस्तक पर लगाये जानेवाले वैष्णव चिह्नका अश्लील अर्थ है। मैं जन्मसे वैष्णव हूं। वैष्णव मन्दिरोंमें जानेका मुझे पूरा स्मरण है। मेरे घरवाले सनातनी लोग थे। बचपनमें मैं स्वयं यह चिह्न लगाया करता था परन्तु मुझे या हमारे परिवारके किसी व्यक्तिको कभी यह मालूम नहीं हुआ कि अिस निर्दोष और सुन्दर चिह्नका कोअी अश्लील अर्थ है। मद्रासमें जहां यह लेख लिखा जा रहा है, मैंने वैष्णवोंके अेक दलसे यह बात

पूछी। मुन्हें कथित अश्लील अर्थका कुछ भी पता नहीं था। जिससे मेरा यह कहना नहीं है कि अैसा अर्थ कभी था ही नहीं। परन्तु म यह अवश्य कहता हूं कि लाखों लोगोंको मनुष्यसे रिवाजोंकी जिन्हें हम अब तक निर्दोष होकर चलाते रहे हैं अश्लीलताका भान नहीं है। मने पहले-पहल अेक पादरीकी किताब पढ़कर यह जाना कि शिवलिंगका कोअी अश्लील अर्थ है और अब भी जब मैं शिवलिंगको देखता हूं तो अुसे जिस रूप और सम्य-धर्ममें मैं देखता हूं अुससे कोअी अश्लीलता प्रगट नहीं होती। यह भी मुझे अेक पादरियोंकी पुस्तकसे ही मालूम हुआ कि अुड़ीसाके मन्दिरोंको अश्लील मूर्तियोंने कुरूप बना रखा है। जब म पुरी गया तो अुन मूर्तियोंको देख सकनेके लिअे प्रयत्न करना पड़ा। परन्तु म जानता हूं कि अुस मंदिरमें जमा होनेवाले हजारों लोगोंको अिन मूर्तियोंकी अश्लीलताका कुछ भी पता नहीं। लोगोंकी अैसी तैयारी नहीं होती और मूर्तियां जबरदस्ती अपने आपको अुनकी दृष्टि पर थोपती नहीं।

यंग अिंडिया १५-९-२७ पृ० ३११

३५

अवतार

मेरे कृष्णका किसी अैतिहासिक व्यक्तिसे कोअी सम्बन्ध नहीं। मैं अपना सिर अैसे कृष्णके आगे नहीं झुकाअूंगा जो अपने अहंकार पर चोट लगनेके कारण किसीका वध करे अथवा जिसे गैर-हिन्दू दुश्चरित्र युवकके रूपमें अर्पण करते हैं। मैं अपनी कल्पनाके कृष्णको सम्पूर्ण अवतार मानता हूं। वह प्रत्येक अर्थमें निष्कलंक है, गीताका प्रेरक है और लाखों मनुष्योंके जीवनमें स्फूर्ति भरनेवाला है। परन्तु यदि मुझे यह सिद्ध कर दिया जाय कि महाभारत अभी अर्थमें अितिहास है जिसमें आधुनिक अैतिहासिक पुस्तकें हैं महाभारतका प्रत्येक शब्द सही है और महाभारतके कृष्णने अुनके बताये जानेवाले कुछ कृत्य सचमुच किये थे तो मैं हिन्दू समाजसे निकाल दिये जानेका खतरा मोल लेकर भी अुस कृष्णको अीश्वरका अवतार माननेसे अिनकार कर दूंगा।

परन्तु मेरी दृष्टिमें महाभारत अेक गहरा धार्मिक ग्रंथ है जो अधिकांशमें रूपक है और किसी भी प्रकारसे अैतिहासिक माने जानेके लिअे नहीं है। वह हमारे भीतरी द्वंद्वका वर्णन है जो अितने सजीव ढंगसे किया गया है कि कुछ समयके लिअे हमें यह खयाल होने लगता है मानो जिन कार्योंका अुसमें वर्णन किया गया है वे सचमुच मानव प्राणियोंके किये हुअे हैं। महाभारतकी जो प्रति हमें आजकल अुपलब्ध है अुसे मैं मूलकी दोषरहित प्रतिलिपि भी नहीं मानता। अिसके विपरीत मैं समझता हूं कि अुसमें समय-समय पर बहुतसे परिवर्तन हुअे हैं।

यंग अिंडिया १–१०–२५, पृ० ३३६

हिन्दू धर्ममें अवतार अुसे माना गया है जिसने मानव-जातिकी कोअी असाधारण सेवा की हो। सब शरीरधारी जीव वास्तवमें अीश्वरके अवतार ही हैं परन्तु आम तौर पर सभी प्राणियोंको अवतार नहीं माना जाता। भावी पीढ़ियां अवतारका यह आदर अुस देती हैं, जो अपनी पीढ़ीमें अपने आचरणमें असाधारण रूपमें धार्मिक रहा हो। अिस पद्धतिमें मुझे कोअी बुराअी नहीं दीखती अिससे अीश्वरकी महानतामें कोअी कमी नहीं आती और सत्यको कोअी आघात नहीं पहुंचता। अुर्दूकी अेक कहावत है जिसका मतलब है कि आदम खुदा नहीं है, मगर खुदाका नूर है। और अिसलिअे जिसका आचरण सबसे ज्यादा धार्मिक होता है अुसमें खुदाका नूर सबसे अधिक होता है। अिस विचारसरणीके अनुसार ही हिन्दू धर्ममें कृष्णको सम्पूर्ण अवतारका पद प्राप्त हुआ है।

अवतारोंमें यह विश्वास मनुष्यकी आध्यात्मिक अुच्चाकांक्षाका प्रमाण है। मनुष्यको तब तक भीतरी शान्ति नहीं होती जब तक वह अीश्वरके सदृश नहीं बन जाता। अिस स्थितिको पहुंचनेका प्रयत्न सर्वोपरि और अेकमात्र रखने योग्य महत्त्वाकांक्षा है। और यही आत्म-साक्षात्कार है।

यंग अिंडिया ६–८–३१ पृ० २०५–०६

अीश्वर कोअी व्यक्ति नहीं है। यह कहना कि वह मनुष्यके रूपमें समय समय पर पृथ्वी पर अुतरता है आंशिक सत्य है और अुसका

अितना ही अर्थ है कि अिस प्रकारका मनुष्य अीश्वरके निकट रहता है। चूंकि अीश्वर सर्वव्यापी है, अिसलिअे वह प्रत्येक मानव प्राणीके भीतर निवास करता है और अिसलिअे सभीको अुसके अवतार कहा जा सकता है। परन्तु अिससे हम किसी नतीजे पर नहीं पहुंचते। राम, कृष्ण आदि अीश्वरके अवतार अिसलिअे कहे जाते हैं कि हम अुनमें दैवी गुणोंका आरोपण करते हैं। वास्तवमें वे मानव-कल्पनाकी सृष्टि हैं। वे सचमुच हुअे हैं या नहीं, अिससे मनुष्योंके दिमागमें जमे हुअे अुनके चित्र पर कोअी असर नहीं पड़ता। अैतिहासिक राम और कृष्ण अकसर अैसी कठिनाअियां अुपस्थित करते हैं, जिनका तरह तरहकी दलीलोंसे निवारण करना पड़ता है।

हरिजन, २२-६-'४७ पृ० २००

३६

वर्ण और जात-पांत

वर्णधर्म

वर्णका अर्थ है मनुष्यके धंधेका निश्चय पहलेसे ही हो जाना। वर्णधर्म यह है कि मनुष्य अपनी आजीविकाके लिअे अपने पूर्वजोंका पेशा अख्तियार करे। अिसलिअे वर्ण अेक प्रकारसे वंशानुक्रमका नियम है। वर्ण अैसी वस्तु नहीं है जो हिन्दुओं पर अूपरसे लाद दी गअी हो। परन्तु जो लोग अुनके कल्याणके संरक्षक थे अुन्होंने अुनके खातिर अिस धर्मको ढूंढ निकाला है। यह मनुष्यकी अीजाद की हुअी चीज नहीं परन्तु प्रकृतिका अटल नियम है — यह प्रकृतिकी अेक प्रवृत्तिका वर्णन है जो न्यूटनके गुरुत्वाकर्षणके नियमकी भांति हमेशा विद्यमान और सक्रिय है। जैसे गुरुत्वाकर्षणका नियम पता लगनेसे भी पहले मौजूद था अिसी प्रकार वर्णधर्म भी था। अिस धर्मको ढूंढ निकालना हिन्दुओंके भाग्यमें था। प्रकृतिके कुछ नियमोंकी खोज और अुनका प्रयोग करके पश्चिमके लोगोंने अपनी भौतिक सम्पत्ति आसानीसे बढ़ा ली है। अिसी प्रकार हिन्दुओंने

अिस अनिवार्य सामाजिक प्रवृत्तिका पता लगाकर आध्यात्मिक क्षेत्रमें वह सफलता प्राप्त की है जो संसारमें और किसी राष्ट्रने प्राप्त नहीं की।

वर्णका जातिप्रथासे कोअी सम्बन्ध नहीं। वर्णके नाम पर प्रचलित अिस जातिप्रथाके असुरका नाश कीजिये। वर्णके अिस विकृत स्वरूपने ही हिन्दू धर्म और भारतका पतन किया है। वर्णधर्मका पालन न करना ही हमारी आर्थिक और आध्यात्मिक बरबादीका मुख्य कारण है। बेकारी और गरीबीकी अेकमात्र जड़ यही है और अछूतपन तथा हमारे धर्मको छोड़कर परधर्म स्वीकार करनेके लिये भी यही जिम्मेदार है।

सतत प्रयोग और खोजके बाद ऋषियोंने ये चार विभाग किये — शिक्षा देना रक्षा करना धन पैदा करना और हाथ-पैरोंसे सेवा करना।

प्राचीन कालमें अपने-आप चलनेवाले व्यावसायिक संघ थे और यह अलिखित नियम था कि व्यवसायके सब सदस्योंका पालन किया जाय। १०० वर्ष पहले वकीलका लड़का कभी वकील नहीं बनना चाहता था। आज वह चाहता है क्योंकि वह अिस् धंधेको रुपये चुरानेका सबसे आसान तरीका मानता है।

पुराने जमानेमें दूसरेके धंधे पर आक्रमण करके दौलत जमा करनेकी महत्त्वाकांक्षा नहीं होती थी। अुदाहरणके लिये सिसरोके कालमें वकीलका धंधा निःशुल्क था। और किसी बुद्धिमान लड़कीका रुपयेके लिये नहीं परन्तु सेवाके लिये वकील बन जाना बिलकुल ठीक होगा। आगे चलकर ख्याति और धनकी आकांक्षाने प्रवेश किया। वैद्य लोग समाजकी सेवा करते थे और समाजसे जो कुछ मिल जाता था अुससे सन्तोष कर लेते थे। परन्तु अब वे व्यापारी और समाजके लिये खतरा रूप बन गये हैं। चिकित्सा और कानूनके धंधे 'लिबरल' — शिष्ट जनोचित कहे जाते थे और यह ठीक ही था। क्योंकि अुस समय हेतु शुद्ध परोपकारका था।

मैं अपने पिताका धंधा करूं तो मुझे अुसे सीखनेके लिये पाठशाला जानेकी जरूरत नहीं होती। और मेरी मानसिक शक्ति आध्यात्मिक प्रयत्नके लिये मुक्त हो जाती है क्योंकि मेरी आजीविका तो निश्चित ही है। अुसके लिये और सच्ची धर्म-साधनाके लिये वर्ण बीमेका अुत्तम

रूप है। जब मैं दूसरे धर्मों पर अपनी शक्ति केन्द्रित कर देता हूं तब मैं मानो अेक कानी कौड़ीके लिअे आत्म-साक्षात्कारकी अपनी शक्तियोंको या अपनी आत्माको बेच देता हूं।

हम धर्मकी विकृत कल्पनामें रखकर अुसकी बात कर रहे हैं। जब धर्मका सम्मुख पालन होता था तब हमें आध्यात्मिक साधनाके लिअे काफी फुरसत मिलती थी। अब भी आप दूरके गांवोंमें जाअिये और देखिये कि शहरियोंके मुकाबलेमें देहातियोंकी आध्यात्मिक संस्कृति कैसी है। शहरवाले संयम तो जानते ही नहीं।

हमें धनप्राप्तिके लिअे नये नये रास्ते ढूंढनेकी जरूरत नहीं और न ढूंढना चाहिये। जब तक हमारे पूर्वजोंसे प्राप्त अुपाय शुद्ध हैं तब तक हमें अुनसे ही संतोष करना चाहिये। अगर मेरा पिता व्यापारी है और मुझमें सैनिक गुण दिखाअी देते हों तो मैं सिपाही बनकर बिना किसी पुरस्कारके अपने देशकी सेवा कर सकता हूं। परन्तु मुझे अपनी रोजी तो व्यापारके द्वारा कमानेमें ही संतोष होना चाहिये।

यंग अिंडिया २४–११–२७ पृ० ३९० ३९१ ३९५

वर्णाश्रमका मतलब मैं जो मानता हूं अुससे समाजकी धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक जरूरतें पूरी हो जाती हैं। अुससे धार्मिक आवश्यकतायें अिसलिअे पूरी हो जाती हैं कि सारा समाज अिस धर्मको स्वीकार कर ले तो अुसे आध्यात्मिक पूर्णताकी प्राप्तिके लिअे काफी समय मिलता है। अिस धर्मके पालनसे सामाजिक बुराअियां टल जाती हैं और घातक आर्थिक स्पर्धा बिलकुल मिट जाती है। और यदि अिसे अैसा धर्म मान लिया जाय जो संबंधित समाजके अधिकार या विशेषाधिकार नहीं बल्कि अुसके कर्तव्य बतलाता है तो अुससे धनका योग्यतम बंटवारा निश्चित हो जाता है भले ही वह आदर्श अर्थात् बिलकुल समान वितरण न हो। अिसलिअे जब लोग अिस धर्मकी परवाह न करके अुसस कर्तव्यको विशेषाधिकार मान लेते हैं और अपनी अुन्नतिके लिअे मनचाहे धंधे चुन लेते हैं तब अिससे धर्ममें गड़बड़ पैदा होती है और अन्तमें समाजका विनाश होता है। अिस धर्ममें किसी व्यक्तिसे अुसकी रुचिके विरुद्ध जबरदस्ती पैतृक धंधेको मनवानेका प्रश्न नहीं है, अर्थात् बाहरसे अुस पर अिसके लिअे

कोअी दबाव नहीं डाला जाता। शायद कभी हजार वर्ष तक अैसा कोअी दबाव था भी नहीं। जितने अर्से तक वर्णाश्रम धर्म अबाधित रूपमें काम करता रहा था। लोगोंको तालीम ही अैसी मिली थी कि अुन्होंने अिस धर्मको अपना न्याय्य कर्तव्य मान लिया था। और वे स्वेच्छासे अिसके नियन्त्रणमें रहते थे। आज राष्ट्रोंको अिस धर्मका ज्ञान नहीं है वे अिस धर्मका भंग कर रहे हैं और अिसलिअे कष्ट पा रहे हैं। कथित सभ्य राष्ट्र हरगिज अुस स्थितिको नहीं पहुंचे हैं जिसे वे जरा भी शान्ति और सन्तोषकी स्थिति समझ सकें।

हरिजन, ४–३–३३, पृ० ५

वर्णधर्मका मैंने जो अर्थ किया है अुसके अनुसार अूंचेसे अूंचे मानसिक विकासमें किसी भी प्रकारकी रुकावट नहीं है। रुकावट जो बिलकुल स्वाभाविक है वह है कि कोअी अपनी आर्थिक स्थिति सुधारनेके लिअे अपना पैतृक धंधा न बदले और अिस प्रकार हानिकारक और विनाशकारी स्पर्धाकी कोअी अैसी प्रणाली स्थापित न करे, जो आज कल जीवनको अुसके सारे आनन्द और सौन्दर्यसे वंचित कर रही है।

हरिजन २९–७–३३ पृ० ८

वर्णका निर्णय जन्मसे होता है, परन्तु वह कायम तभी रह सकता है जब अुसके कर्तव्योंका पालन किया जाय। ब्राह्मण माता-पितासे जन्म लेनेवाला ब्राह्मण कहलायेगा परन्तु यदि वयस्क होने पर अुसके जीवनमें ब्राह्मणके गुण प्रगट न हों तो वह ब्राह्मण नहीं कहला सकता। अिसके विपरीत कोअी ब्राह्मणके घरमें पैदा न हुआ हो परन्तु अपने आचरणमें ब्राह्मणके गुण प्रदर्शित करे तो वह ब्राह्मण कहलायेगा यद्यपि वह स्वयं यह नाम धारण करना स्वीकार नहीं करेगा।

अिस कल्पनाके अनुसार वर्ण कोअी मनुष्य-कृत संस्था नहीं परन्तु जीवनका वह धर्म है जो मानव-परिवारका सर्वत्र नियंत्रण कर रहा है। अिस धर्मके पालनसे जीवन जीने योग्य बनेगा शान्ति और संतोषका प्रसार होगा, तमाम झगड़े और संघर्ष मिट जायंगे भुखमरी और

म्य है। जब मैं दूसरे धंधों पर अपनी शक्ति केन्द्रित कर देता हूं तब मैं मानो अेक कानी कौड़ीके लिअे आत्म-साक्षात्कारकी अपनी शक्तियोंका या अपनी आत्माको बेच देता हूं।

हम वर्णकी विकृत कल्पनायें रखकर अुसकी बात कर रहे हैं। जब वर्णका सचमुच पालन होता था तब हमें आध्यात्मिक साधनाके लिअे काफी फुरसत मिलती थी। अब भी आप दूरके गांवोंमें जाअिये और देखिये कि शहरियोंके मुकाबलेमें देहातियोंकी आध्यात्मिक संस्कृति कैसी है। शहरवाले संयम तो जानते ही नहीं।

हमें धनप्राप्तिके लिअे नये नये रास्ते ढूंढनेकी जरूरत नहीं और न ढूंढना चाहिये। जब तक हमारे पूर्वजोंसे प्राप्त अुपाय शुद्ध हैं तब तक हमें अुनसे ही संतोष करना चाहिये। अगर मेरा पिता व्यापारी है और मुझमें सैनिक गुण दिखाअी देते हों तो मैं सिपाही बनकर बिना किसी पुरस्कारके अपने देशकी सेवा कर सकता हूं। परन्तु मुझे अपनी रोजी तो व्यापारके द्वारा कमानेमें ही संतोष होना चाहिये।

यंग अिंडिया, २४–११–'२७, पृ० ३९० ३९१ ३९५

वर्णाश्रमका मतलब मैं जो मानता हूं अुससे समाजकी धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक जरूरतें पूरी हो जाती हैं। अुससे धार्मिक आवश्यकतायें अिसलिअे पूरी हो जाती हैं कि सारा समाज अिस धर्मको स्वीकार कर ले तो अुसे आध्यात्मिक पूर्णताकी प्राप्तिके लिअे काफी समय मिलता है। अिस धर्मके पालनसे सामाजिक बुराअियां टल जाती हैं और घातक आर्थिक स्पर्धा बिलकुल मिट जाती है। और यदि अिसे अैसा धर्म मान लिया जाय जो सर्वोपरि समाजके अधिकार या विशेषाधिकार नहीं बल्कि अुसके कर्तव्य बतलाता है तो अुससे धनका योग्यतम बंटवारा निश्चित हो जाता है भले ही यह आदर्श अर्थात् बिलकुल समान वितरण न हो। अिसलिअे जब लोग अिस धर्मकी परवाह न करके अुसके कर्तव्यको विशेषाधिकार मान बैठे हैं और अपनी अुन्नतिके लिअे मनचाहे धंधे चुन लेते हैं तब अिससे वर्णमें गड़बड़ पैदा होती है और अन्तमें समाजका विनाश होता है। अिस धर्ममें किसी व्यक्तिसे अुसकी रुचिके विरुद्ध जबरदस्ती पैतृक धंधेको मनवानेका प्रश्न नहीं है, अर्थात् बाहरसे अुस पर अिसके लिअे

"मगर अुसने अिसे अपना धंधा नहीं माना था।"

"वह मान लेता तो अिससे अुसका कुछ बिगड़ता नहीं। मेरा मतलब यह है कि भंगीके घर पैदा होनेवालेको भंगी रहकर ही अपनी रोजी कमानी चाहिये, अुसके बाद वह जो भी करना चाहे सो करे। कारण भंगीको मजदूरी पानेका अुतना ही अधिकार है जितना वकीलको या आपके राष्ट्रपतिको है। मेरे मतानुसार यही हिन्दू धर्म है। पृथ्वी पर अिससे अच्छा साम्यवाद नहीं है। वर्णधर्म गुरुत्वाकर्षणके नियमकी ही तरह अबाध रूपसे काम करता है। मैं प्रतिदिन अधिकाधिक अूंचा कूदनेकी कोशिश करूं और यह समझूं कि जिस तरह किसी दिन गुरुत्वाकर्षणका नियम अपना काम बन्द कर देगा तो मेरा यह प्रयत्न व्यर्थ सिद्ध होगा। गुरुत्वाकर्षणको जिस तरह रोका नहीं जा सकता। अेक-दूसरेके अूपर कूदकर आगे निकल जानेका प्रयत्न भी अैसा ही है। वर्णधर्म घातक स्पर्धाका विरोधी है।

हरिजन ६–३–३७ पृ० २७

जाति* बनाम वर्ग

मनुष्य सामाजिक प्राणी है जिसलिअे अुसे सामाजिक संगठनका कोअी न कोअी तरीका निकालना ही पड़ता है। हम भारतवासियोंने जिसके लिअे जातिकी संस्थाका विकास किया है यूरोपवालोंने वर्गका संगठन किया है। दोनोंमें ही परिवारकी-सी अेकता और स्वाभाविकता नहीं है परिवार तो शायद अीश्वर-निर्मित संस्था है। यदि जातिने कुछ बुराअियां पैदा की हैं, तो वर्गने अुससे कम बुराअियां नहीं पैदा की हैं।

यदि वर्ग कुछ सामाजिक गुणोंकी रक्षा करनेमें मदद देता है तो जाति भी अधिक नहीं तो समान मात्रामें यही काम करती है। जाति

* यहां गांधीजीने जाति शब्दका अुपयोग वर्णके ही अर्थमें किया है। जब वे जातिकी निन्दा करते हैं तब वे अूंच-नीचके अुस विचारकी ही निन्दा करते हैं जो बादमें पैदा हो गया है, न कि पैतृक धंधा करनेके सिद्धान्तकी जिसे वे वर्ण कहते हैं और जिसका वे पूरी तरह समर्थन करते हैं। —सम्पादक

दरिद्रताका अंत हो जायगा, आबादीका मसला हल हो जायगा, और रोग तथा कष्ट तक खतम हो जायंगे।

वर्ण हमारे जीवनका धर्म प्रगट करता है और जिस प्रकार हमारे कर्तव्यका सूचन करता है। लेकिन अुससे कोअी अधिकार नहीं मिल जाता और अूच-नीचका विचार तो अुसके सर्वथा विपरीत है। सब वर्ण समान हैं क्योंकि समाजका आधार सब वर्णों पर बराबर है। आजकल वर्णका अर्थ अूच-नीचकी सीढ़ियां हो गया है। यह मूल व्यवस्थाका घृणित विपर्यास है। हमारे पूर्वजोंने कठोर तपस्या करके वर्णधर्मकी खोज की थी। वे यथाशक्ति अिस धर्मका पालन करनेकी कोशिश करते थे। हमने आजकल अिसे तोड़-मरोड़ दिया है और अपनेको संसारकी हंसीका पात्र बना लिया है।

यद्यपि वर्णधर्म किसी हिन्दू ऋषिकी विशेष खोज है फिर भी वह सार्वभौम है। प्रत्येक धर्मका कोअी विशेष लक्षण होता है परन्तु यदि वह किसी सिद्धान्त या नियमको प्रगट करता है तो वह सर्वत्र लागू हो सकना चाहिये। संसार आज जिसकी अुपेक्षा कर सकता है, परन्तु अुसे भविष्यमें यथासमय अिसे स्वीकार करना पड़ेगा। अिसका आदेश है कि सबको अपने अपने जन्मसे प्राप्त कर्तव्यका सेवाकी भावनाके अनुसार आचरण करके जीवन-धर्मका पालन करना चाहिये।

हरिजन २८-९-'३४ पृ० २६१-६२

अमरीकी पादरीसे बातचीत

गांधीजी "मैं भंगी होअूं तो मेरा लड़का भंगी ही क्यों न हो?"

"अच्छा? आप अिस हद तक जाते हैं?"

जरूर, क्योंकि मैं भंगीके पेशेको पादरीके पेशेसे किसी भी तरह घटिया नहीं मानता।"

"म यह मान लेता हूं। परन्तु क्या लिंकनको अमरीकाका राष्ट्रपति न बनकर लकड़ी काटनेवाला होना चाहिये था?"

"परन्तु अेक लकड़ी काटनेवाला अमरीकाका राष्ट्रपति क्यों न हो? ग्लैडस्टन लकड़ियां फाड़ा करता था।"

अनुकूल नये नये समूह बनने दिये हैं। परन्तु ये सब परिवर्तन अुतने ही शान्तिपूर्ण और आसान तरीकेसे हुअे हैं जितने बादलोंके रंगरूपमें होते हैं। मानव-समाजमें होनेवाले परिवर्तनोंकी अिससे अधिक शान्तिपूर्ण व्यवस्थाकी कल्पना नहीं की जा सकती।

जातिसे अूंच-नीचका भाव प्रगट नहीं होता। वह केवल भिन्न भिन्न दृष्टिकोणों और मूल्योंके अनुकूल जीवनके तरीकोंको मान्यता देती है। परन्तु अिस बातसे अिनकार करना व्यर्थ है कि जाति-व्यवस्थामें अेक तरहका बड़ा-छोटापन पैदा हो गया है।

यंग अिंडिया २९-१२-२० पृ० ३

मैंने बहुत बार कहा है कि मैं जातिके आधुनिक अर्थमें जातिको नहीं मानता। वह अेक विकृति है और व्यक्तिकी प्रगतिमें बाधक है। किसी व्यक्तिका अपनेको दूसरे किसी भी व्यक्तिसे श्रेष्ठ मान लेना अीश्वर और मनुष्य दोनोंके विरुद्ध पाप है। अिस प्रकार जहां तक जातिसे छोटा-बड़ा दरजा प्रगट होता है वहां तक वह अेक बुराअी है।

यंग अिंडिया २५-१-१३, पृ० ३

धर्मकी दृष्टिसे सब मनुष्य बराबर हैं। विद्या बुद्धि अथवा धनसे किसीको यह हक नहीं मिल जाता कि जिनके पास ये चीजें नहीं हैं अुनसे वह श्रेष्ठ होनेका दावा करे।

दि हिन्दू, १९-९-'४५

व्यवस्थाकी खूबी यह है कि वह धन-सम्पत्तिके भेदभाव पर अपना आधार नहीं रखती। जैसा अितिहासने सिद्ध कर दिया है रुपया संसारमें सबसे बड़ा विग्रहकारी बल है। शंकराचार्य कहते हैं कि पारिवारिक सम्बन्धोंकी पवित्रता भी धनके दुष्प्रभावसे सुरक्षित नहीं है। जाति पारिवारिक सिद्धान्तका विस्तार-मात्र है। यौनोंका नियंत्रण रक्त और वंश-परम्परासे होता है। पाश्चात्य वैज्ञानिक यह साबित करनेकी कोशिशमें लगे हुअे हैं कि वंश-परम्पराकी बात अेक भ्रम है और सामाजिक वातावरण ही सब-कुछ है। अनेक देशोंका ठोस अनुभव अिन वैज्ञानिकोंके निश्चयके खिलाफ पड़ता है परन्तु सामाजिक वातावरणके अुनके सिद्धान्तको मान लिया जाय तो भी यह आसानीसे साबित किया जा सकता है कि सामाजिक वातावरणकी रक्षा और अुसका विकास धर्मकी अपेक्षा जातिके द्वारा अधिक सम्भव है।

जातिके पीछे अहंकारपूर्ण श्रेष्ठताकी भावना नहीं है यह आत्मो-न्नतिकी अलग अलग प्रणालियोंका वर्गीकरण है। अुसमें सामाजिक स्थिरता और प्रगतिका बड़िमासे बढ़िया मेल बिठाया गया है। जैसे पारि-वारिक भावनामें वे लोग शरीक होते हैं, जो अेक-दूसरेसे प्रेम करते हैं और जिनके बीचमें खून और रिश्तेदारीके बन्धन होते हैं ठीक अुसी तरह जाति अेक खास तरहके शुद्ध जीवनवाले (यहां जीवनके स्तरकी मतलब जीवनके आर्थिक स्तरकी समानताका मतलब नहीं है) परिवारोंको अेक ही संघमें शामिल करनेकी कोशिश करती है। अलबत्ता कोअी परिवार अुस विशेष प्रकारका है या नहीं अिसका निर्णय चन्द आदमियोंकी सनक या स्वार्थसे दूषित बनी हुअी राय पर नहीं छोड़ा जाता। अिसमें जाति वंश-परम्पराके सिद्धान्तका भरोसा करती है। और चूंकि वह सांस्कृतिक विकासकी प्रणाली है अिसलिअे यह अैसा नहीं मानती कि अगर कोअी व्यक्ति या परिवार अपने जीवनकी पद्धतिमें सुधार करनेके लिअे अुसे बदलनेका निश्चय करता है और फिर भी अुसे अेक विशेष समूहमें रहना पड़ता है तो अिससे अुसके प्रति कोअी अन्याय होता है। जैसा हम सबको मालूम है सामाजिक जीवनमें परिवर्तन बहुत धीरे धीरे होता है और अिस प्रकार वास्तवमें जातिने जीवनमें हुअे परिवर्तनोंके

अनुकूल नये नये समूह बनने दिये हैं। परन्तु ये सब परिवर्तन अुतने ही शान्तिपूर्ण और आसान तरीकेसे हुअे हैं जितने बादलोंके रंगरूपमें होते हैं। मानव-समाजमें होनेवाले परिवर्तनोंकी असिसे अधिक शान्तिपूर्ण व्यवस्थाकी कल्पना नहीं की जा सकती।

जातिसे अूंच-नीचका भाव प्रगट नहीं होता। यह केवल भिन्न भिन्न दृष्टिकोणों और अुन्हींके अनुकूल जीवनके तरीकाको मान्यता देती है। परंतु अिस बातसे अिनकार करना व्यर्थ है कि जाति-व्यवस्थामें अेक तरहका बड़ा-छोटापन पैदा हो गया है।

यंग अिंडिया २९–१२–२० पृ० ३

मैंने बहुत बार कहा है कि मैं जातिके आधुनिक अर्थमें जातिको नहीं मानता। वह अेक विकृति है और व्यक्तिकी प्रगतिमें बाधक है। किसी व्यक्तिका अपनेको दूसरे किसी भी व्यक्तिसे श्रेष्ठ मान लेना अीश्वर और मनुष्य दोनोंके विरुद्ध पाप है। अिस प्रकार जहां तक जातिसे छोटा-बड़ा दरजा प्रगट होता है वहां तक वह अेक बुराअी है।

यंग अिंडिया २५–१–३३ पृ० ३

धर्मकी दृष्टिसे सब मनुष्य बराबर हैं। विद्या बुद्धि अथवा धनसे किसीको यह हक नहीं मिल जाता कि जिनके पास ये चीजें नहीं हैं अुनसे वह श्रेष्ठ होनेका दावा करे।

दि हिन्दू, १९–९–'४५

५७

अस्पृश्यता

लोगोंके प्रति अपने स्वाभाविक प्रेमके कारण अस्पृश्यताकी समस्या मेरे जीवनमें जल्दी ही आ गअी। मेरी माँने कहा 'अिस लड़केको तुम्हें नहीं छूना चाहिये, यह अछूत है।' मैंने अुलटकर पूछा, 'क्यों न छूअूं?' और अुसी दिनसे मेरा विद्रोह शुरू हो गया।

हरिजन २४-१२-३८ पृ० ३९१

अछूतपन धर्मका आदेश नहीं है। यह शैतानकी निकाली हुअी युक्ति है। शैतानने हमेशा धर्मशास्त्रोंका हवाला दिया है। परन्तु धर्म शास्त्र बुद्धि और सत्यसे अूपर नहीं हो सकते।

वेदोंमें शुद्धता, सत्य निर्दोषता शरीर और मनकी पवित्रता नम्रता सादगी क्षमा अीश्वर-परायणता और अुन्हीं सब गुणोंकी शिक्षा दी गअी है जिन गुणोंके द्वारा स्त्री या पुरुष अुदात्त और बहादुर बनते हैं। कोअी शिकायत किये बिना चुपचाप सफाअीका काम करनेवाले अपने महान महत्तर-बन्धुओंको छुनेसे भी बुरा समझने अुनका तिरस्कार करने और अुन पर थूकनेमें न कोअी अुदात्तता है और न बहादुरी।

यंग अिंडिया १९-१-'२१, पृ० २२

मैं कभी अस्पृश्यताको माननेके लिअे अपने मनको तैयार नहीं कर सका। मैंने हमेशा अुसे हिन्दू धर्मका अेक कलंक माना है। यह सच है कि यह बुराअी हमारे यहां परम्परासे चली आयी है। परन्तु अिस तरह अन्य अनेक बुरे रिवाज आज तक चले आ रहे हैं। मुझे अिस कल्पनासे ही शर्म आती है कि लड़कियोंका लगभग वेश्यावृत्तिके लिअे ही अर्पण कर देना हिन्दू धर्मका अेक अंग था। फिर भी हिन्दुस्तानके बहुतसे हिस्सोंके हिन्दुओंमें यह रिवाज है। कालीको बकरोंकी बलि चढ़ाना मेरे खयालसे निश्चित अधर्म है और मैं अुसे हिन्दू धर्मका अंग

नहीं समझता। हिन्दू धर्म तो अनेक युगोंके विकासका फल है। भारतके लोगोंके धर्मको हिन्दू नाम ही विदेशियोंका दिया हुआ है। अिसमें संदेह नहीं कि किसी समय धर्मके नाम पर पशुबलि दी जाती थी। परन्तु वह धर्म नहीं है हिन्दू धर्म तो है ही नहीं। और किसी तरह मुझे लगता है कि जब गोरक्षा हमारे पूर्वजोंका धर्म बन गयी तब गोमांस खाने वालोंका समाजसे बहिष्कार किया गया। अिसके लिये कठिन सामाजिक संघर्ष हुआ होगा। यह सामाजिक बहिष्कार सिर्फ धर्मके विरोधियों पर ही लागू नहीं किया गया परन्तु अनके पापोंका फल अनकी सन्तानोंको भी दिया गया। यह रिवाज शायद शुरूमें तो अच्छे हेतुसे ही जारी हुआ होगा, परन्तु बादमें कठोर परिपाटीमें बदल गया और हमारे धर्म ग्रन्थोंमें भी कुछ अैसे श्लोक जोड़ दिये गये जिनसे अुस रिवाजको बिलकुल अनुचित और अन्यायपूर्ण स्थायित्व मिल गया। मेरा यह अनुमान सही हो या न हो, अस्पृश्यता बुद्धिके और दया तथा प्रेमकी भावनाओंके विरुद्ध है। जिस धर्मने गायकी पूजाका प्रवर्तन और स्थापना की है वह मानव-प्राणियोंके निर्दय और अमानुषिक बहिष्कारका न तो कभी समर्थन कर सकता है न अुसे किसी दशामें अुचित मान सकता है। और मुझे तो खिन रहे और कुचले हुअे लोगोंका त्याग करनेकी अपेक्षा अपने शरीरके टुकड़े टुकड़े करा लेनेमें अधिक सन्तोष होगा। चूंकि मुझे हिन्दू धर्म प्राणोंसे भी प्यारा है अिसलिअे यह कलंक मेरे लिअे अेक असह्य भार बन गया है।

यंग अिंडिया ६–१०–२१ पृ० ३१८–१९

मेरा निश्चित विश्वास है कि हिन्दुओंका हृदय अस्पृश्यताके कलंकसे बिलकुल मुक्त हो जाय तो अिस घटनाका अनिवार्य असर भारतकी तमाम जातियों पर ही नहीं होगा बल्कि सारी दुनिया पर होगा। मेरा यह विश्वास दिन-दिन दृढ़ होता जा रहा है। मैं करोड़ों लाख मानव प्राणियोंके प्रति अपने हृदयसे अस्पृश्यताको मिटा दूं और दूसरे कुछ लाखके प्रति अुसे कायम रखूं यह संभव नहीं है। हिन्दू हृदयसे अूंच-नीचका भेद भाव मिट जानेसे दूसरी जातियोंके प्रति हमारे और अुन जातियोंके आपसी अीर्षा और अविश्वासके भाव अपने आप मिट जायंगे। अिसी कारण

मैंने 'बिस सवाल पर अपने प्राणोंकी बाजी लगाअी है। अस्पृश्यताके विरुद्ध यह लड़ाअी लड़नेमें मैं केवल हिन्दू 'स्पृश्यों' और अस्पृश्यों' की अकताके लिअे ही नहीं लड़ रहा हूं परंतु हिन्दू मुसलमान, अीसाअी और सभी भिन्न भिन्न धार्मिक जातियोंकी अकताके लिअे लड़ रहा हूं।

हरिजन १७-११-३३, पृ० ४

अस्पृश्यता हिन्दुओं और हिन्दुओंके बीचसे ही नहीं बल्कि हिन्दू, अीसाअी, मुसलमान, पारसी और बाकीके लोगोंके बीचसे भी बिलकुल मिट जानी चाहिये। मेरा विश्वास है कि अगर यह बड़ा हृदय-परिवर्तन सम्पन्न हो जाय तो भारतमें हम सब अेक होकर रहेंगे, अेक-दूसरे पर भरोसा करेंगे और आपसमें कोअी अविश्वास या संदेह नहीं रहेगा। अपने विविध सूक्ष्म रूपोंके द्वारा यह अस्पृश्यताकी भावना ही हमें अेक-दूसरेसे अलग करती है और जीवनको कुरूप और कठिन बनाती है।

हरिजन २६-१-'३४ पृ० ४

अस्पृश्यता दूर करनेका अर्थ है सारी दुनियाके प्रति मैत्रीका भाव रखना अुसका सेवक बनना। बिस तरह देखें तो अस्पृश्यता-निवारण अहिंसाका पर्याय बन जाता है और वस्तुतः है भी। अहिंसा अर्थात् जीवमात्रके प्रति पूर्ण प्रेम। अस्पृश्यता-निवारणका भी यही अर्थ है। जीवमात्रके साथ भेद न करना — यह है अस्पृश्यता-निवारण। अस्पृश्यताको बिस दृष्टिसे देखें तो यह दोष कम-ज्यादा मात्रामें सारी दुनियामें फैला हुआ दीखता है।

मंगल-प्रभात (गु) पृ० २५-२६ १९५४

३८

गोरक्षा

गोरक्षा हिन्दू हृदयकी प्रियतम सम्पत्ति है। जिसका गोरक्षामें विश्वास नहीं वह शायद हिन्दू नहीं हो सकता। यह उदात्त निष्ठा है। मेरी दृष्टिमें गायकी पूजाका अर्थ है निर्दोषताकी पूजा। मेरे लिये गाय निर्दोषताकी मूर्ति है। गोरक्षाका अर्थ है कमजोरों और असहायोंकी रक्षा। अध्यापक वासवानीने ठीक ही कहा है कि गोरक्षाका अर्थ है मनुष्य और पशुके बीच भाईचारा। यह अेक उदात्त भावना है जिसका विकास धैर्ययुक्त परिश्रम और तपस्यासे होना चाहिये।

यंग अिंडिया ८-६-२१ पृ० १८२

गोरक्षाका विचार मेरे खयालसे मनुष्यके विकास क्रममें अेक अत्यंत अद्भुत घटना है। वह मनुष्यको मनुष्य-जातिकी परिधिसे आगे ले जाती है। मेरे लिये गायका अर्थ है मनुष्यसे नीचेका सारा जगत। गायके द्वारा मनुष्यको समस्त चेतन-सृष्टिके साथ आत्मीयता अनुभव करनेके लिये कहा गया है। गायको ही क्यों यह देवभाव प्रदान किया गया होगा, यह मेरे सामने स्पष्ट है। भारतमें गाय ही मनुष्यका सबसे अच्छा साथी सबसे बड़ा आधार थी। वह कामधेनु थी। वह दूध ही नहीं देती थी बल्कि सारी खेतीका आधार-स्तम्भ थी। गाय दया-धर्मकी मूर्तिमत कविता है। अिस शान्त और सुकुमार पशुमें हम दया झुमड़ती देख सकते हैं। वह लाखों-करोड़ों भारतीयोंको पालनेवाली माता है। गायकी रक्षा अीश्वरकी तमाम मूक सृष्टिकी रक्षा है। अिस प्राचीन ऋषिको अिस सत्यका दर्शन हुआ अुसने आरम्भ गायसे किया। पशु-सृष्टिकी पुकार अिसलिये जोरदार है कि वह गूंगी है। गोरक्षा संसारको हिन्दू धर्मकी अनोखी देन है। और हिन्दू धर्म तब तक जीवित रहेगा जब तक गोरक्षा करनेवाले हिन्दू रहेंगे।

यंग अिंडिया ६-१०-२१ पृ० ३१८

हमारे ऋषियोंने यह अद्भुत खोज की (और जिसकी सचाओी पर मेरा विश्वास दिन-दिन अधिक जमता जा रहा है) कि धर्मशास्त्र और श्रीश्वर-प्रेरित रचनायें अपना सत्य अुसी मात्रामें प्रगट करती हैं जितनी हम अहिंसा और सत्यके पालनमें प्रगति करते हैं। सत्य और अहिंसाकी जितनी अधिक सिद्धि होगी हमारी बुद्धि अुतनी ही अधिक दीप्तिमती बनेगी। जिन्हीं ऋषियोंने कह दिया है कि गोरक्षा हिन्दुओंका परम धर्म है और अुसके पालनसे मोक्ष मिलता है। मगर मैं यह माननेको तैयार नहीं कि केवल गाय नामक पशुको बचानेसे ही किसीको मोक्ष मिल सकता है। मोक्षके लिये तो हमें अपने मोह द्वेष, क्रोध ओीर्ष्या आदि विकारोंसे पूरी तरह मुक्त होना पड़ता है। जिसलिये यह निष्कर्ष निकलता है कि मोक्षकी दृष्टिसे गोरक्षाका अर्थ जैसा आम तौर पर मान लिया गया है अुससे कहीं ज्यादा व्यापक होगा। जिस गोरक्षासे हमें मोक्ष मिल सकता है वह अैसी ही होनी चाहिये जिसमें सभी प्राणियोंकी रक्षा शामिल हो। जिसलिये मेरी रायमें अहिंसाके सिद्धान्तका छोटासा भंग भी अुदाहरणके लिये, किसी भी स्त्री पुरुष या बालकका कठोर वचनसे आघात पहुंचाना और संसारके दुर्बलसे दुर्बल तथा अत्यंत नगण्य जीवको भी पीड़ा पहुचाना आदि गोरक्षाके सिद्धान्तका भंग होगा गो-मांस भक्षणके पापके समान होगा। अुससे मात्रामें वह भिन्न हो सकता है मगर अुसका प्रकार नहीं होगा।

यंग जिंडिया, २९-१-'२५, पृ० ३९

जो हिन्दू गायकी रक्षा करता है अुसे प्रत्येक प्राणीकी रक्षा करनी चाहिये। परन्तु सब बातोंका खयाल करते हुओ हमें अुसके गायकी रक्षा करने पर किसीसिओ शिकायत नहीं हो सकती कि वह और प्राणियोंकी रक्षा नहीं करता। जिसलिओ विचारणीय प्रश्न अतः ही है कि अुसका गायकी रक्षा करना अुचित है या नहीं। और अुसका अैसा करना अनु-चित नहीं हो सकता अगर प्राणियोंकी हत्या न करना अहिंसामें विश्वास रखनेवालेका सामान्य कर्तव्य मान लिया जाय। और प्रत्येक हिन्दू और हिन्दू ही क्या प्रत्येक धर्म-परायण मनुष्य अैसा ही करता है। पशुओंको आम तौर पर न मारनेका कर्तव्य और जिसलिओ अुनकी रक्षा करनेका

धर्म निर्विवाद रूपमें मान लेना पड़ता है। तो हिन्दू धर्मके लिअे यह बड़े श्रेयकी बात है कि अुसने गोरक्षाको कर्तव्यके रूपमें स्वीकार किया। और वह हिन्दू हिन्दू धर्मका घटिया नमूना है जो केवल गोरक्षा पर रुक जाता है, जब कि यह रक्षाकी भुजायें दूसरे पशुओंके लिअे भी फैला सकता है। गाय तो केवल प्रतीक है और गायकी रक्षा कमसे कम बात है, जिसकी अेक हिन्दूसे आशा रखी जाती है।

गोरक्षाको प्रेरित करनेवाला हेतु निरा स्वार्थपूर्ण नहीं है यद्यपि स्वार्थका विचार बेशक बीचमें आता है। यदि निरे स्वार्थका ही खयाल होता तो गायका पूरा अुपयोग बन्द हो जाने पर दूसरे देशोंकी तरह यहां भी वह मार दी जाती। गायके भारी बोझ बन जाने पर भी हिन्दू अुसे मारेंगे नहीं। अपंग और बेकार गायोंके पालनके लिअे दान शील लोगोंने जो असंख्य गोशालायें कायम कर रखी हैं वे अेक प्रकारसे अिस दिशामें किये जानेवाले प्रयत्नका ज्वलंत प्रमाण है। यद्यपि वांछित ध्येयकी पूर्तिकी दृष्टिसे ये संस्थायें अिस समय बहुत अपूर्ण हैं फिर भी अिस कार्यके पीछे जो हेतु है अुसका महत्त्व अिससे कम नहीं हो जाता।

अिसलिअे मेरी रायमें गोरक्षाका तत्त्वज्ञान अूंचे दरजेका है। वहां तक जीनेके हकका सम्बन्ध है गोरक्षा पशु जगतको मनुष्यके बराबरकी सतह पर ला देती है।

यंग अिंडिया ११–११–२९, पृ० ३९१–९२

३९

हिन्दू धर्मकी महत्त्वपूर्ण विशेषतायें

जैसे पश्चिमके लोगोंने भौतिक क्षेत्रमें अद्भुत आविष्कार किये हैं ठीक अुसी तरह हिन्दू धर्मने धर्म और आत्मा-सम्बन्धी बातोंमें अुससे भी अधिक विलक्षण आविष्कार किये हैं। परंतु अिन महान और सुन्दर खोजोंकी तरफ हमारी नजर नहीं जाती। हम तो पाश्चात्य विज्ञानने जो भौतिक प्रगति की है अुसकी चकाचौंधमें आ जाते हैं। मुझे अुस प्रगतिका मोह नहीं है। सच पूछा जाय तो अैसा लगता है मानो अीश्वरने सोच-समझकर बुद्धिपूर्वक भारतको अुस ढंगकी प्रगति करनेसे रोका हो ताकि वह भौतिकवादकी बाढ़को रोकनेका अपना खास मिशन पूरा कर सके। आखिर हिन्दू धर्ममें कोअी अैसी विशेषता जरूर है जिसने अब तक अुसको जीवित रखा है। अुसने बेबिलोनिया सीरिया, अीरान और मिस्रकी सभ्यताओंका पतन देखा है। अपने चारों ओर नजर डालिये। रोम और ग्रीस कहां हैं? क्या आपको आज कहीं भी गिबनकी अिटली या यूं कहिये कि प्राचीन रोम — क्योंकि तब रोम ही तो अिटली था — का नामनिशान मिलता है? यूनान चले जाअिये। कहां है वह विश्वविख्यात अैटिक सभ्यता? फिर भारतमें आअिये अत्यन्त प्राचीन लेखोंको देख जाअिये और फिर अपने चारों तरफ नजर डालिये आपको कहना पड़ेगा हां मुझे प्राचीन भारत अब भी जीवित दिखाअी दे रहा है।' बराबर अिधर अुधर घूरे भी दिखाअी पड़ेंगे परंतु अुनके नीचे रत्नराशियां गड़ी हुअी हैं। और हिन्दू धर्म अब तक बचा हुआ है, अिसका कारण यह है कि अुसने अपने सामने भौतिक विकासका लक्ष्य न रखकर आध्यात्मिक विकासका लक्ष्य रखा है।

अुसकी अनेक देनोंमें मनुष्यकी मूक सृष्टिके साथ अेकताकी कल्पना अद्वितीय है। मेरे खयालसे गोपूजा अेक महान विचार है जिसका विस्तार किया जा सकता है। आजकलके धर्म-परिवर्तनके रिवाजसे हिन्दू धर्मका अछूता रहना भी मेरी दृष्टिमें अेक कीमती बात है। यह अपना

प्रचार नहीं करता। वह कहता है जीवन जियो यही सच्चा अुपदेश है। अुत्तम जीवन बिताना मेरा काम है आपका काम है और तब हम अनेक युगों पर अुसका प्रभाव छोड़ सकते हैं। और फिर देखिये अुसने कैसे कैसे महापुरुष दिये हैं रामानुज चैतन्य रामकृष्ण आदिने —अधिक आधुनिक कालके नामोंको मैं छोड़ देता हूं—हिन्दू धर्म पर अपनी गहरी छाप छोड़ी है। प्रगट है कि हिन्दू धर्मकी न तो शक्ति समाप्त हुअी है और न वह निष्प्राण हो गया है।

और फिर अुसकी आश्रम-व्यवस्थाकी देनको देखिये वह भी अेक विलक्षण देन है। सारी दुनियामें अुसके जैसी कोअी चीज नहीं है। कैथलिक अीसाअियोंमें ब्रह्मचारियोंका संघ है सही परन्तु वह कोअी सामान्य सामाजिक संस्था नहीं है जब कि भारतमें प्रत्येक बालकको ब्रह्मचर्य-आश्रममें से गुजरना पड़ता था। कितनी महान कल्पना थी वह! आज हमारी आंखें मलिन हैं विचार और भी अधिक मलिन हैं और शरीर तो अत्यन्त मलिन है क्योंकि-हम हिन्दू धर्मसे विमुख हो गये हैं।

अेक और भी बात है जिसका मैंने जिक्र नहीं किया है। मैक्स मूलरने ४० साल पहले कहा था कि यूरोपवालोंको अब पता चल रहा है कि पुनर्जन्म कोअी अनुमान नहीं परन्तु सत्य वस्तु है। यह शोध सचमा हिन्दू धर्मकी ही देन है।

-- आजकल वर्णाश्रम धर्म और-हिन्दू धर्मका अुसके अनुयायी सही प्रतिनिधित्व नहीं करते बल्कि अुससे अुलटा आचरण भी करते हैं। लेकिन अिसका अिलाज विनाश नहीं सुधार है। हम अपने आपमें सच्ची हिन्दू वृत्ति प्रगट करें और फिर पूछें कि अुससे आत्माको सन्तोष होता है या नहीं।

यंग अिंडिया २४-११-२७ पृ० ३९६

तुलनात्मक धर्म-विज्ञानकी अेक अमरीकी अध्यापिकाने जो भारतीय धर्मोंका अध्ययन करनेके लिअे भारतमें आअी है, गांधीजीसे पूछा कि हिन्दू धर्मका मुख्य महत्त्व संक्षेपमें क्या है?

अुन्हें जवाब देते हुअे गांधीजीने कहा "हिन्दू धर्मका मुख्य महत्त्व वास्तविक रूपमें यह विश्वास रखना है कि सब प्राणी (केवल

मनुष्य ही नहीं, परंतु तमाम सजीव प्राणी) अेक हैं अर्थात् सब जीवोंका अेक ही अुद्गम-स्थान है।

"सब प्राणियोंकी यह अेकता हिन्दू धर्मकी ही विशेषता है। तद नुसार हिन्दू धर्म मोक्षको केवल मानव-प्राणियों तक ही सीमित नहीं रखता, वह अैसा मानता है कि मोक्ष अीश्वरके सब जीवोंके लिअे है। सम्भव है कि मानव-शरीरके बिना मुक्ति प्राप्त न हो सके परंतु अिससे मनुष्य सृष्टिका मालिक नहीं बन जाता। अिससे वह अीश्वरकी सृष्टिका सेवक बनता है। जब हम मनुष्योंके भाअी भाअी होनेकी बात करते हैं तब हम वहीं रुक जाते हैं और मान लेते हैं कि अन्य सारे प्राणी मनुष्यके अपने ही मतलबके लिअे शोषणकी सामग्री हैं। परंतु हिन्दू धर्ममें सब प्रकारके शोषणका निषेध है। मनुष्य प्राणीमात्रके साथ भिस प्रकारकी अेकता साधनेके लिअे बड़ेसे बड़ा त्याग कर सकता है, अुसकी कोअी मर्यादा नहीं है। परंतु अवश्य ही अिस आदर्शकी महानता मनुष्यकी जरूरतोंका सीमित करती है। आप देखेंगे कि यह आधुनिक सभ्यताकी स्थितिसे अुलटी स्थिति है क्योंकि आधुनिक सभ्यता तो यह कहती है कि अपनी जरूरतें बढ़ाओ। जिन लोगोंकी यह मान्यता है अुनके खयालसे जरूरतोंकी वृद्धि ज्ञानकी वृद्धि है और ज्ञानकी वृद्धिसे अनन्त अीश्वरको ज्यादा अच्छी तरह समझा जा सकता है। अिसके विपरीत हिन्दू धर्म भोग और आवश्यकताओंकी वृद्धिका निषेध करता है, क्योंकि अुनसे परमात्माके साथ हमारा तादात्म्य साधनेमें बाधा पड़ती है।

हरिजन २६-१२-'३६ पृ० ३६५

हिन्दू धर्मके सुक्ष्मतम स्वरूपमें ब्राह्मण, चींटी हाथी और श्वपच — सबका अेक ही दरजा है। और चूंकि हमारा तत्त्वज्ञान अितना अूंचा है और हम अुस पर अमल नहीं कर सके हैं अिसीलिअे अुस तत्त्वज्ञानसे आज हमें विरक्ति हो गअी है। हिन्दू धर्म समस्त मानव-जातिके ही नहीं परन्तु प्राणीमात्रके भ्रातृत्वका आग्रह रखता है। यह अैसी कल्पना है जो हमें चकरा देती है परन्तु हमें अुस पर अमल करना है। ज्यों ही हम मनुष्य मनुष्यके बीच सच्ची और सजीव समानता स्थापित कर लेंगे

त्यों ही हम मनुष्य और सारी सृष्टिके बीच समानता स्थापित कर सकेंगे। जब वह दिन आयेगा तब पृथ्वी पर शान्ति और मनुष्योंमें सद्‌भाव फैल जायगा।

हरिजन, २८-३-३६, पृ ५१

सनातन हिन्दू धर्म

मैं अपने आपको सनातनी हिन्दू कहता हूं क्योंकि

(१) मेरा वेदों अुपनिषदों पुराणों और हिन्दू धर्मशास्त्रोंके नामसे प्रचलित सभी ग्रंथोंमें और अिसलिअे अवतारों और पुनर्जन्ममें विश्वास है।

(२) मेरा वर्णाश्रम धर्ममें अुसके—मेरे मतानुसार—वैदिक अर्थमें न कि मौजूदा प्रचलित और स्थूल अर्थमें विश्वास है।

(३) मेरा गोरक्षामें विश्वास है परन्तु प्रचलित अर्थसे कहीं व्यापक अर्थमें।

(४) मेरा मूर्तिपूजामें अविश्वास नहीं है।

पाठक देखेंगे कि मैंने वेदों या अन्य धर्मग्रन्थोंके लिअे अीश्वर-प्रेरित होनेका जिक्र जान-बूझकर नहीं किया है क्योंकि मैं यह नहीं मानता कि केवल वेद ही अीश्वर-प्रेरित हैं। मैं बाअिबल कुरान और जिन्दावस्ताको भी वेदोंके बराबर ही अीश्वर प्रेरित मानता हूं। हिन्दू धर्मग्रन्थोंमें मेरा विश्वास यह नहीं कहता कि मैं अुनके अेक अेक शब्द और अेक अेक श्लोकको अीश्वर प्रेरित मानूं। मेरा यह दावा भी नहीं कि मैंने अुन अद्‌भुत ग्रंथोंका अध्ययन किया है और अुनका प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त किया है। परन्तु मेरा यह दावा जरूर है कि मैं धर्मग्रंथोंकी असली शिक्षाकी सच्चाअीको जानता और अनुभव करता हूं। अुनका कोअी भी अर्थ कितना ही पांडित्यपूर्ण क्यों न हो यदि वह बुद्धि अथवा नीतिके विरुद्ध है तो मैं अुसे माननेसे अिनकार करता हूं।

मुझे अिस हिन्दू सूत्र पर अटूट विश्वास है कि जिसने अहिंसा, सत्य और ब्रह्मचर्यमें पूर्णता प्राप्त नहीं कर ली है और समस्त धन तथा सम्पत्तिका त्याग नहीं कर दिया है अुसे शास्त्रोंका सच्चा ज्ञान नहीं होता।

मूल पुरुषकी संस्थामें विश्वास है। परन्तु अिस युगमें लाखोंको गुरुके बिना काम चलाना होगा क्योंकि पूर्ण पुरुता और पूर्ण विद्वत्ताका सामंजस्य विरलोंमें ही पाया जाता है। परन्तु अपने धर्मकी सचाओ कभी न कभी जान सकनेके बारेमें निराश होनेकी जरूरत नहीं क्योंकि प्रत्येक महान धर्मकी भांति हिन्दू धर्मकी बुनियादी बातें भी कभी बदलती नहीं और आसानीसे समझमें आ जाती है। प्रत्येक हिन्दू अीश्वरमें और अुसकी अद्वितीयतामें तथा पुनर्जन्म और मोक्षमें विश्वास करता है।

हिन्दू धर्मके प्रति अपनी भावनाका वर्णन करना मेरे लिअे वैसा ही अशक्य है, जैसा अपनी पत्नीके प्रति अपनी भावनाका वर्णन करना। अुसका मुझ पर जो असर होता है वह संसारकी और किसी स्त्रीका नहीं हो सकता। अुसमें दोष नहीं हों सो बात नहीं। मैं कह सकता हूं जितने दोष अुसमें मुझे दिखाअी देते हैं अुनसे कहीं अधिक है। परन्तु मैं अनुभव करता हूं कि मेरे और अुसके बीच अेक अकाट्य बंधन है। हिन्दू धर्मके प्रति भी मेरी यही भावना है भले ही अुसमें कितने ही दोष और मर्यादायें हों। गीता या तुलसीकृत रामायणके संगीतसे मुझे जो अुल्लास होता है वह और किसी चीजसे नहीं होता। हिन्दू धर्मकी यही दो पुस्तकें हैं जिन्हें जाननेका मैं दावा कर सकता हूं। अेक बार जब मुझे अैसा लग रहा था कि मेरा अन्तकाल आ गया है तब गीताने ही मुझे सान्त्वना दी थी। आजकल हिन्दुओंके बड़े बड़े मन्दिरोंमें जो बुराअी चल रही है अुसे मैं जानता हूं। परन्तु अुनके अक्षम्य दोषोंके बावजूद मुझे अुनसे प्रेम है। अुनमें मैं जिस आकर्षणका अनुभव करता हूं, वैसा किसी और वस्तुमें अनुभव नहीं करता। मैं तुरन्त आखिर तक सुधारक हूं। परन्तु मेरा अुत्साह मुझे कभी अिस हद तक नहीं ले जाता कि मैं हिन्दू धर्मकी कोअी भी असली चीजका छोड़ दूं।

हिन्दू धर्म धर्मान्तरीय धर्म नहीं है। अुसमें संसारके सभी पैगम्बरोंकी पूजाके लिअे स्थान है। मामूली अर्थमें वह कोअी मिशनरी धर्म — प्रचारका ध्येय रखनेवाला धर्म — नहीं है। बेशक अुसके अंचलमें कभी जातियां समा गयी हैं परन्तु यह प्रक्रिया विकासकी स्वाभाविक प्रक्रियाकी तरह और अनुभव ढंगसे हुअी है। हिन्दू धर्म सब मनुष्योंसे अपने ही धर्म

या मताके अनुसार अीश्वरकी अुपासना करनेको कहता है और अिसलिये यह सब धर्मोंके साथ मिलकर शान्तिसे रहता है।

यंग अिंडिया, ६–१०–२१, पृ० ३१७–१८

हिन्दू धर्म विकासशील है

हिन्दू धर्म गंगाकी तरह है, जो मूलमें शुद्ध और स्वच्छ है, मगर रास्तेमें गंदगी अपने साथ ले लेती है। गंगाकी ही भांति अुसका समग्र परिणाम अुपकारक ही है। प्रत्येक प्रान्तमें वह प्रान्तीय स्वरूप ग्रहण करता है परन्तु अुसका भीतरी सार हर जगह कायम रहता है। रूढ़ि धर्म नहीं है। रूढ़ि बदल सकती है परन्तु धर्म अपरिवर्तित रहता है।

हिन्दू धर्मकी शुद्धता अुसके अनुयायियोंके आत्म-संयम पर निर्भर करती है। जब कभी अुनके धर्मके लिये संकट अुपस्थित हुआ है तभी हिन्दुओंने कठोर प्रायश्चित्त किया है, संकटके कारणोंका पता लगाया है और अुनका मुकाबला करनेके अुपाय खोजे हैं। शास्त्रोंका सतत विकास हो रहा है। वेद अुपनिषद् स्मृतियां पुराण और अितिहास सब अेक ही साथ पैदा नहीं हो गये। प्रत्येक समय-विशेषकी आवश्यकताओंसे व अुत्पन्न हुअे और अिसलिये अुनमें पारस्परिक विरोध पाया जाता है। ये ग्रंथ सनातन सत्यका नये ढंगसे निरूपण नहीं करते बल्कि यह बताते हैं कि जिस समयसे अिन ग्रन्थोंका सम्बन्ध है अुस समय अुस सत्यका पालन किस तरह किया जाता था। कोअी रिवाज जो किसी खास समयके लिये अच्छा था अगर दूसरे समयमें बिना सोचे-समझे जारी रखा जाय तो वह हमें निराशाके गर्तमें ही गिरायेगा। चूंकि किसी समय पशुबलिका रिवाज था अिसलिये क्या हम अुसे आज फिर जारी कर दें? चूंकि किसी कालमें हम गोमांस खाते थे अिसलिये क्या अब भी अैसा ही करें? चूंकि किसी समय चोरोंके हाथ-पैर काट दिये जाते थे, अिसलिये क्या अब भी अिस बर्बर प्रथाका पुनरुद्धार किया जाय? क्या अनेक पत्नियोंकी प्रथा फिरसे जारी की जाय? क्या बाल-विवाहको हम फिर चालू करेंगे? चूंकि किसी दिन हमने मनुष्य

जातिके अेक हिस्सेका बहिष्कार किया था, अिसीलिअे क्या आज भी अुसकी सन्तानोंको हम अछूत समझेंगे ?

हिन्दू धर्म जैसे मैं करता हूं वैसे मैं अपने जीवनके द्वारा ही उसे प्रगट करता हूं। ज्ञान असीम है और यही बात सत्यके प्रयोगकी है। हम प्रतिदिन आत्मशक्तिके ज्ञानमें वृद्धि करते हैं और करते रहेंगे। नया अनुभव हमें नये कर्तव्य सिखायेगा, परन्तु सत्य हमेशा वही रहेगा। सत्यको पूरी तरह कौन जान पाया है ?

यंग अिडिया, ८-४-'२६ पृ० १३१-३२

संसारके अन्य धर्मोंके प्रार्थनापूर्ण अध्ययनके प्रकाशमें और अिससे भी अधिक गीतामें बताये हुअे हिन्दू धर्मकी शिक्षाके अनुसार जीवन बितानेकी कोशिशके फलस्वरूप प्राप्त हुअे अनुभवोंके आधार पर मैंने हिन्दू धर्मको विस्तृत अर्थ देनेका प्रयत्न किया है। परन्तु यह अर्थ खींचतानकर हरगिज नहीं किया गया है। और हिन्दू धर्म भी वह नहीं जो अपने विपुल धर्मग्रंथोंमें पड़ा पड़ा है, मेरा मतलब अुस सजीव धर्मसे है जो माताकी तरह अपने पीड़ित बालकसे बात करता हो। मैंने जो कुछ किया है वह पूरी तरह अितिहास-सम्मत है। म हमारे पूर्वजोंके पदचिह्नों पर चला हूं। अेक समय था जब वे क्रुद्ध देवताओंको खुश करनेके लिअे पशुओंका बलिदान करते थे। वे अुसे यज्ञ कहते थे। अुनकी सन्तानोंने यानी हमारे अुन पूर्वजोंने जो बादमें आये 'यज्ञ' शब्दका भिन्न अर्थ किया और सिखाया कि बलिदान हमारी अपनी नीच वृत्तियोंका होना चाहिये और वह क्रुद्ध देवताओंको प्रसन्न करनेके लिअे नहीं परन्तु अेकमात्र जीव-मात्रके अन्तर्यामीके संतोषके लिअे होना चाहिये।

हरिजन, १-१०-'३६ पृ० २६६

मुझे साधु-संन्यासी कहना गलत है। मेरे जीवनका नियमन करनेवाले आदर्श समस्त मानव-जातिके अपनानेके लिअे प्रस्तुत हैं। मैंने अुन्हें क्रमिक विकास द्वारा प्राप्त किया है। प्रत्येक कदम योजनापूर्वक अच्छी तरह विचार करके और खूब मननके साथ अुठाया गया था। मेरा ब्रह्मचर्य और मेरी अहिंसा दोनोंका आधार निजी अनुभव था और वे सार्वजनिक कर्तव्यकी पुकारके जवाबमें आवश्यक हो गये थे। दक्षिण

अफ्रीकामें गृहस्थ वकील समाज-सुधारक या राजनीतिज्ञ किसी भी रूपमें मुझे जो दूसरोंसे अलग प्रकारका अेकाकी जीवन व्यतीत करना पड़ा अुसका तकाजा था कि अिन कर्तव्योंका समुचित पालन करनेके लिये यौन-जीवनका कठोर नियमन और देशवासियोंके साथ या यूरोपियनोंके साथ अपने व्यवहारमें अहिंसा और सत्यका कठोर पालन किया जाय। किसी मामूली आदमीसे जरा भी बड़ा होनेका मेरा दावा नहीं है। मेरी योग्यता तो अुससे भी कम है। परिश्रमपूर्ण खोजके बाद मैं अहिंसा या ब्रह्मचर्यकी जो थोड़ी साधना कर सका हूं अुसके लिये किसी विशेष योग्यताका भी मैं दावा नहीं कर सकता। मुझे लेशमात्र सन्देह नहीं कि जो कुछ मैंने प्राप्त किया है अुसे कोअी भी स्त्री या पुरुष प्राप्त कर सकता है यदि वह अुतना ही प्रयत्न करे और अुतनी ही आशा और श्रद्धा रखे।

हरिजन १-१०-३६ पृ० २६८

सत्यसे भिन्न कोअी परमेश्वर है, अैसा मैंने कभी अनुभव नहीं किया। यदि अिन प्रकरणोंके पन्ने-पन्नेसे यह प्रतीति न हुअी हो कि सत्यमय बननेका अेकमात्र मार्ग अहिंसा ही है तो मैं अिस प्रयत्नको व्यर्थ समझता हूं। प्रयत्न चाहे व्यर्थ हो किन्तु वचन व्यर्थ नहीं है। मेरी अहिंसा सच्ची होने पर भी कच्ची है, अपूर्ण है। अतअेव हजारों सूर्योंको अिकट्ठा करनेसे भी जिस सत्यरूपी सूर्यके तेजका पूरा माप नहीं निकल सकता सत्यकी मेरी झांकी अैसे सूर्यकी केवल अेक किरणके दर्शनके समान ही है। आज तकके अपने प्रयोगोंके अंतमें मैं अितना तो अवश्य कह सकता हूं कि सत्यका सपूर्ण दर्शन संपूर्ण अहिंसाके बिना असंभव है।

अैसे व्यापक सत्यनारायणके प्रत्यक्ष दर्शनके लिये जीवमात्रके प्रति आत्मवत् प्रेमकी परम आवश्यकता है। और, जो मनुष्य अैसा करना चाहता है वह जीवनके किसी भी क्षेत्रसे बाहर नहीं रह सकता। यही कारण है कि सत्यकी मेरी पूजा मुझे राजनीतिमें खींच लायी है। जो मनुष्य यह कहता है कि धर्मका राजनीतिसे कोअी संबंध नहीं है वह धर्मको नहीं जानता अैसा कहनेमें मुझे संकोच नहीं होता और न अैसा कहनेमें मैं अविनय करता हूं।

बिना आत्मशुद्धिके जीवमात्रके साथ अैक्य सध ही नहीं सकता। आत्मशुद्धिके बिना अहिंसा-धर्मका पालन सर्वथा असंभव है। अशुद्ध आत्मा परमात्माके दर्शन करनेमें असमर्थ है। अतअेव जीवन-मार्गके सभी क्षेत्रोंमें शुद्धिकी आवश्यकता है। यह शुद्धि साध्य है, क्योंकि व्यष्टि और समष्टिके बीच अैसा निकटका संबंध है कि अेककी शुद्धि अनेकोंकी शुद्धिके बराबर हो जाती है। और व्यक्तिगत प्रयत्न करनेकी शक्ति तो सत्यनारायणने सबको जन्मसे ही दी है।

लेकिन मैं प्रतिक्षण यह अनुभव करता हूं कि शुद्धिका यह मार्ग विकट है। शुद्ध बननेका अर्थ है मनसे, वचनसे और कायासे निर्विकार बनना, राग-द्वेषादिसे रहित होना। अिस निर्विकारता तक पहुंचनेका प्रतिक्षण प्रयत्न करते हुअे भी मैं पहुंच नहीं पाया हूं, अिसलिअे लोगोंकी स्तुति मुझे भुलावेमें नहीं डाल सकती। अुलटे, यह स्तुति प्रायः तीव्र वेदना पहुंचाती है। मनके विकारोंको जीतना संसारको शस्त्रयुद्धसे जीतनेकी अपेक्षा मुझे कठिन मालूम होता है। हिन्दुस्तान आनेके बाद भी मैं अपने भीतर छिपे हुअे विकारोंको देख सका हूं, शरमिन्दा हुआ हूं किन्तु हारा नहीं हूं। सत्यके प्रयोग करते हुअे मैंने आनन्द लूटा है और आज भी लूट रहा हूं। लेकिन मैं जानता हूं कि अभी मुझे विकट मार्ग तय करना है। अिसके लिअे मुझे शून्यवत् बनना है। मनुष्य जब तक स्वेच्छासे अपनेको सबसे नीचे नहीं रखता तब तक अुसे मुक्ति नहीं मिलती। अहिंसा नम्रताकी पराकाष्ठा है।

आत्मकथा पृ० ४१२–१३ १९५७

४०

अुपसंहार

मैंने जो मत बनाये हैं और जिन परिणामों पर मैं पहुंचा हूं वे अन्तिम नहीं हैं। मैं अुन्हें कल बदल सकता हूं मेरे पास दुनियाको सिखानेके लिये कोअी नअी चीज नहीं है। सत्य और अहिंसा सृष्टिके आरम्भसे चले आ रहे हैं। मैंने केवल अुनका अधिकसे अधिक विशाल पैमाने पर प्रयोग करनेकी कोशिश की है। अैसा करते हुअे मने कभी कभी भूलें की हैं और अपनी भूलोंसे सीखा है। अिस प्रकार जीवन और अुसकी समस्यायें मेरे लिये सत्य और अहिंसाके पालनके प्रयोग बन गअी हैं।

हरिजन २८–३–३६ पृ० ४९

सत्य और अहिंसामें मेरा विश्वास दिन दिन बढ़ रहा है और ज्यों ज्यों मैं अपने जीवनमें अुनका पालन करनेका सतत प्रयत्न कर रहा हूं त्यों त्यों हर क्षण मेरा भी विकास हो रहा है। मुझे अुनके नये मुआर्थ दिखाअी दे रहे हैं। मैं अुन्हें रोज नये प्रकाशमें देखता हूं और अुनमें नये-नये अर्थ पढ़ता हूं।

हरिजन १–५–३७ पृ० ९४

लिखते समय मैं यह कभी नहीं सोचता कि मैं पहले क्या कह चुका हूं। मेरा लक्ष्य यह नहीं है कि किसी प्रश्न पर मैं जो विचार प्रगट करूं वे अुस प्रश्न पर म पहले जो कुछ कहा चुका हूं अुसके साथ सुसंगत हों। मेरा लक्ष्य जिस समय सत्य मुझे जिस रूपमें दिखाअी दे रहा हो अुसके अनुसार ही अपने विचार प्रगट करनेका होता है। परिणाम यह हुआ है कि मैं सत्यकी दिशामें लगातार बढ़ता गया हूं अपनी स्मरण-शक्तिको अनुचित परिश्रमसे बचा सका हूं और अिससे भी बड़ी बात यह है कि जब कभी मुझे अपनी ५० वर्ष पहले लिखी गयी

बिना आत्मशुद्धिके जीवमात्रके साथ अैक्य सध ही नहीं सकता। आत्मशुद्धिके बिना अहिंसा-धर्मका पालन सर्वथा असंभव है। अशुद्ध आत्मा परमात्माके दर्शन करनेमें असमर्थ है। अतअेव जीवन-मार्गके सभी क्षेत्रोंमें शुद्धिकी आवश्यकता है। यह शुद्धि साध्य है क्योंकि व्यष्टि और समष्टिके बीच अैसा निकटका संबंध है कि अेककी शुद्धि अनेकोंकी शुद्धिके बराबर हो जाती है। और व्यक्तिगत प्रयत्न करनेकी शक्ति तो सत्यनारायणने सबको जन्मसे ही दी है।

लेकिन मैं प्रतिक्षण यह अनुभव करता हूं कि शुद्धिका यह मार्ग विकट है। शुद्ध बननेका अर्थ है मनसे वचनसे और कायासे निर्विकार बनना राग-द्वेषादिसे रहित होना। अिस निर्विकारता तक पहुंचनेका प्रतिक्षण प्रयत्न करते हुअे भी मैं पहुंच नहीं पाया हूं अिसलिअे लोगोंकी स्तुति मुझे भुलावेमें नहीं डाल सकती। उल्टे, यह स्तुति प्राय तीव्र वेदना पहुंचाती है। मनके विकारोंको जीतना संसारको शस्त्रयुद्धमें जीतनेकी अपेक्षा मुझे कठिन मालूम होता है। हिन्दुस्तान आनेके बाद भी मैं अपने भीतर छिपे हुअे विकारोंको देख सका हूं, शरमिन्दा हुआ हूं किन्तु हारा नहीं हूं। सत्यके प्रयोग करते हुअे मैंने आनन्द लूटा है और आज भी लूट रहा हूं। लेकिन मैं जानता हूं कि अभी मुझे विकट मार्ग तय करना है। अिसके लिअे मुझे शून्यवत् बनना है। मनुष्य जब तक स्वेच्छासे अपनेको सबसे नीचे नहीं रखता, तब तक मुझे मुक्ति नहीं मिलती। अहिंसा नम्रताकी पराकाष्ठा है।

आत्मकथा, पृ० ४३२–३३, १९४७

अुपसंहार

मैंने जो मत बनाये हैं और जिन परिणामों पर मैं पहुंचा हूं वे अन्तिम नहीं हैं। मैं अुन्हें कल बदल सकता हूं मेरे पास दुनियाको सिखानेके लिअे कोअी नअी चीज नहीं है। सत्य और अहिंसा सृष्टिके आरम्भसे चले आ रहे हैं। मने केवल अुनका अधिकसे अधिक विशाल पैमाने पर प्रयोग करनेकी कोशिश की है। अैसा करते हुअे मैंने कभी कभी भूलें की है और अपनी भूलोंसे सीखा है। अिस प्रकार जीवन और अुसकी समस्यायें मेरे लिअे सत्य और अहिंसाके पालनके प्रयोग बन गयी हैं।

हरिजन २८–३–३६ पृ० ४९

सत्य और अहिंसामें मेरा विश्वास दिन-दिन बढ़ रहा है और ज्यों ज्यों मैं अपने जीवनमें अुनका पालन करनेका सतत प्रयत्न कर रहा हूं त्यों त्यों हर क्षण मेरा भी विकास हो रहा है। मुझे अुनके नये गूढ़ार्थ दिखाअी दे रहे हैं। मैं अुन्हें रोज नये प्रकाशमें देखता हूं और अुनमें नये-नये अर्थ पढ़ता हूं।

हरिजन १–५–३७, पृ० ९४

लिखते समय मैं यह कभी नहीं सोचता कि मैं पहले क्या कह चुका हूं। मेरा लक्ष्य यह नहीं है कि किसी प्रश्न पर मैं जो विचार प्रगट करूं वे अुस प्रश्न पर मैं पहले जो कुछ कहा चुका हू अुसके साथ सुसंगत हों। मेरा लक्ष्य जिस समय सत्य मुझे जिस रूपमें दिखाअी दे रहा हो अुसके अनुसार ही अपने विचार प्रगट करनेका होता है। परिणाम यह हुआ है कि मैं सत्यकी दिशामें लगातार बढ़ता गया हूं, अपनी स्मरण-शक्तिको अनुचित परिश्रमसे बचा सका हूं और अिससे भी बड़ी बात यह है कि जब कभी मुझे अपनी ५० वर्ष पहले लिखी गयी

चीजकी तावी किसी गयी चीजसे तुलना करनी पड़ी है तो मुझे दोनामें कोआी असंगतता मालूम नहीं हुआी है। परन्तु जिन भाअियोंको असंग तता दिखाओी दे अुनके लिअे अच्छा यही है कि वे मेरी तावी रचनास निकलनेवाले अर्थको ही ग्रहण करें। अुन्हें पुराना अर्थ भी पसन्द हो तो दूसरी बात है। परन्तु चुनाव करनेसे पहले अुन्हें यह देखनकी कोशिश करनी चाहिये कि अुस दिखाओी देनवाली असंगततामें कहीं कोओी बुनि यादी और स्थायी संगतता तो नहीं है।

हरिजन ३०–९–३९, पृ० २८८

अगर अिस बातको समुचित नम्रताके साथ और किसी भी प्रकारके अभिमानके बिना कहा जा सकता हो तो मैं कह सकता हूं कि मेरा सन्देश और मेरी कार्य-पद्धति वास्तवमें सारे संसारके लिअे है।

मुझे लिखित या कथित शब्दकी अपेक्षा विचारकी शक्तिमें अधिक विश्वास है। और जिस आन्दोलनका प्रतिनिधित्व मैं करना चाहता हूं अुसमें यदि जीवन-शक्ति है और अुस भगवानका आशीर्वाद प्राप्त है तो वह संसारके भिन्न भिन्न भागोंमें मेरी शारीरिक अुपस्थितिके बिना ही सारी दुनियामें फैल जायगा।

यंग अिंडिया, १७–९–२५, पृ० ३२०

मैं अैसा दावा नहीं करता कि मुझमें कोओी विशेष दैवी शक्ति है। पैगम्बर होनेका दावा भी मैं नहीं करता। मैं तो सत्यका अेक नम्र शोधक-मात्र हूं और असे प्राप्त करने पर तुला हुआ हूं। ओीश्वरके प्रत्यक्ष दर्शनके खातिर मैं किसी भी कुरबानीको बहुत बड़ी नहीं समझता।

हरिजन, ६–५–३३, पृ० ४

अब भाओी मित्रोंने बार बार मुझे पूछते हैं कि क्या मेरा किसी नअी सम्प्रदाय स्थापित करने या विशेष दिव्यताका दावा करनेका है। मैंने अुन्हें खानगी पत्र लिखकर जवाब दे दिया है, मगर वे चाहते हैं कि आनेवाली पीढ़ीके लिअे मैं अिस बातको प्रकट घोषणा करूं। मैंने सोचा था कि मैं जोरदार भाषामें निश्चयात्मक किसी भी दावेसे

अिनकार कर चुका हूं। मेरा दावा तो अितना ही है कि मैं भारत और मानव-जातिका अेक नम्र सेवक हूं और यही सेवा करते मुझे मरनेकी अिच्छा रखता हूं। कोअी सम्प्रदाय स्थापित करनेकी मुझे अिच्छा नहीं है। वास्तवमें मैं अितना महत्त्वाकांक्षी हूं कि किसी सम्प्रदायके अनुयायियोंसे मुझे सन्तोष नहीं हो सकता क्योंकि मैं किसी नये सत्यका प्रतिनिधि नहीं हूं। मैं सत्यको जिस रूपमें जानता हूं अुस पर चलने और अुसे प्रगट करनेकी कोशिश करता हूं। बेशक मैं अनेक पुराने सत्यों पर नया प्रकाश डालनेका दावा जरूर करता हूं। आशा है अिस वक्तव्यसे प्रश्नकर्ताको और अुनके जैसे दूसरे लोगोंको सन्तोष हो जायगा।

यंग अिंडिया, २५–८–२१ पृ० २६७

सूची